फलित ज्योतिष में डिप्लोमा

प्रश्न पत्र कोड - DPJ-103

विवाह मेलापक एवं गोचर विचार

तृतीय प्रश्न पत्र

प्रथम खण्ड

विवाह एवं अष्टकूट विचार

इकाई –1 विवाह परिचय, प्रकार एवं महत्व

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 मुख्य भाग खण्ड एक
1.3.1 उपखण्ड एक – विवाह किसे कहते है। उसकी क्या आवश्यकता हैं। समाजशास्त्रियों के विभिन्न मत
1.3.2 उपखण्ड दो – विवाह कितने हैं। और मनु जी ने कितने प्रकार के विवाहों को मान्यता प्रदान की है।
1.3.3 उपखण्ड तीन – भारतीय विवाह का स्वरूप क्या है। विस्तृत जानकारी
1.4 सारांश
1.5 पारिभाषिक शब्दावली
1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.7 सन्दर्भ ग्रंथों की सूची
1.8 सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री
1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना–

विवाह का शाब्दिक–अर्थ विशेष रूप से निर्वहन करना है। अर्थात् वर एवं वधु अपने जीवन में आने वाले उतार–चढ़ाव, कठिनाईयों एवं सुख–दुख का सामना किस प्रकार से करें ये सभी कार्य व्यक्ति विवाह के उपरान्त मेल–जोल की भावना से ओत–प्रोत होकर करता है।

विवाह एक सामाजिक व्यवस्था है, जिसे आप सामाजिक संविधान भी कह सकते हैं। (अगर विवाह नहीं होता तो आज मानव जंगली मानव की तरह भटकता, वह परिवार समाज से अनभिज्ञ होता। वह अपना–पराया, भाई–बहन, माता–पिता आदि सम्बन्धों से भी भिज्ञ नहीं होता। एक प्रकार से मानव और पशु में कोई अन्तर नहीं होता।

इस ईकाई के माध्यम से आप विवाह के विषय में जान सकेंगे एवं उसकी क्या जीवन में उपयोगिता है। समाज को, देश को, संसार में उसका क्या महत्व है इस सभी का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

1.2 उद्देश्य–

इस ईकाई के माध्यम से आप विवाह के विषय में जान सकेंगे कि –

- विवाह क्यों आवश्यक है?
- विवाह कितने प्रकार के होते हैं?
- आठ प्रकार के विवाहों के विषय में जो आप पढ़ेंगे उनका वैज्ञानिक महत्व क्या है?
- विवाह का समाज में क्या योगदान है।
- विवाह व्यवस्था न होने पर समाज पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा।

1.3 विवाह परिचय, प्रकार एवं महत्व

1.3.1 विवाह किसे कहते हैं ?

विवाह एक संस्कार है, जिसमें वर–कन्या को शास्त्रोक्त विधि द्वारा उनके परिवार एवं समाज के बीच एक पवित्र व मर्यादित सम्बन्ध से जोड़ा जाता है। आचार्यों के अनुसार विवाह का अर्थ है – विशेषेण प्रकारेण वाहयति इति विवाहः। वाहयति नाम निर्वाहयति। विवाह बन्धनोपरान्त पति–पत्नी परस्पर जीवन का निर्वाह करते है।

मानव का जीवन विद्याध्ययन के पश्चात् विवाहादि संस्कार से आरम्भ होता है। प्राचीन समय में भारतवर्ष के लोग विद्याध्ययन के बाद ही विवाह करते थे, परन्तु आज कल तो प्रायः संस्कार एवं मर्यादाओं की गति विपरीत ही प्रतिभाषित होती है। हिन्दूशास्त्रानुसार विवाह एक धार्मिक–सम्बन्ध है। अन्य वर्गों के लोग इसे मात्र साधारण सम्बन्ध के रूप में जानते है, जो अपूर्ण है। विवाह दो अपरिचितों का मिलन होता है। एक दूसरे घर की कन्या एक अपरिचित पुरूष (वर) के साथ सम्बन्धित होकर आजन्म सुःख–दुःख की संगिनी बनती

है। यह कदापि सामान्य विषय नहीं हो सकता।

आजकल के नवयुवकों की जो यह धारणा है कि जो कन्या पसन्द हो जाय वही ठीक है, इसमें कदाचित विपरीत भी होने का सम्भावना हो सकता है। जब तक वर–वधू का मानसिक तत्व, शारीरिकतत्व, बुद्धि, धार्मिक तत्व, इत्यादि का परस्पर मेल न हो तब तक विवाह अपूर्ण होता है। केवल मन–बन्ध का सम्बन्ध अति दुःखदायी और उपद्रवी हो जा सकता है। जहां तक सम्भव हो सके प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि विवाह के पूर्व ऋषि–प्रणीत ज्योतिषशास्त्र के अनुकूल पूर्ण विचारोपरान्त पुत्र और कन्या का विवाह करें। भिन्न–भिन्न राशियों के भिन्न–भिन्न तत्व होते हैं। अतः यदि अग्नितत्व वाले का विवाह जलतत्व वाले से कर दिया जाय तो परिणाम यह होगा कि एक दूसरे का आजन्म शत्रु बना रहेगा। पाराशर, वशिष्ठ, जैमिनि, अत्रि आदि भारतवर्ष के प्राचीन ऋषियों ने अपनी दिव्यदृष्टि से, अनुभव से तथा अनेक प्रकार से जाँच विचार कर निस्वार्थ हो, मनुष्यों के हितार्थ बहुत सी रीतियाँ बना कर रख छोड़ी हैं। जान बूझ कर उन सब शिलाओं और रीतियों का उल्लंघन करना मानो अपनी पुत्र–पुत्री को कांटे की शय्या पर शयन कराने जैसा है। बहुत लोग ऐसा विवाद करते हैं कि कुंडली मिलान करने से विवाह में बहुत कुछ असुविधायें उपस्थित हो जाती हैं। परन्तु दुःख की बात है कि जब किसी को एक कोट तैयार करना होता है तो एक दुकान से दूसरी दुकान, यहां तक कि कभी–कभी एक शहर से दूसरे शहर की भी खाक छान डालते हैं और इसी तरह की असुविधाओं को मनुष्य सानन्द सहन कर लेता है। परन्तु जब उसी मनुष्य को किसी के विवाह के लिये वर खोज–ढूंढ करना पड़ता है, उसके लिए कुंडली मिलाना होता है तो चित्त कातर और अधीर हो उठता है। यह स्मरण नहीं रहता कि किसी के जीवन भर के साथी की खोज हो रही है। आमजनमानस से अनुरोध है कि ऐसे कष्टों की परवाह न कर विवाह के पूर्व ही निम्नलिखित नियमों पर या किसी अन्य पुस्तक में लिखे हुए इस प्रकार के नियमों का अवलोकन और स्वयं देख–भाल, कर विवाह निश्चय करें।

विवाह शब्द का शाब्दिक अर्थ है, ''वि'' उपसर्ग पूर्वक वह धातु अर्थात् ''वह'' धातु वाहन के अर्थ में प्रयुक्त होती है। एक ऐसा संस्कार जिसको भारतीय षोडश संस्कारों में अहम् स्थान प्राप्त है। क्योंकि जब शिष्य अपने गुरू के पास से प्राचीर काल में शिक्षा ग्रहण करने के उपरान्त अपने घर लौटता था तो उसके उपरान्त विवाह संस्कार उसका किया जाता था। भारतीय संस्कृति की रूप रेखा को हमारे ऋषियों ने बार–बार शोध करके उसको वर्णाश्रम व्यवस्था का नाम दिया है। जिसमें ब्रह्मचार्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास है। मनुस्मृति आदि ग्रंथों में बालक को .... वर्षों तक ब्रह्मचार्य आश्रम की श्रेणी में रखा गया था। ..... वर्षों तक गृहस्थाश्रम और उसके उपरान्त ..... तक वनिप्रस्थ एवं ..... के उपरान्त मृत्युपर्यन्त संन्यास आश्रम में रखा गया था। परन्तु समय और स्थिति के अनुसार जिस प्रकार से संसार शब्द का वास्तविक अर्थ है ''संसरिति प्रति क्षणे संसारः''अर्थात् प्रतिक्षण परिवर्तित होने वाला। उसी क्रम में आज शिक्षा का स्वरूप भी बदल चुका है। प्राचीन काल

में बालक गुरू के समीप आश्रमों में रहकर शिक्षा–दीक्षा ग्रहण किया करते थे। परन्तु आज स्थिति भिन्न है। आज विज्ञान ने इतना विकास कर लिया है कि आज का छात्र आश्रमों में व गुरूकुलों में रहना पसन्त नहीं करता। आज विद्यार्थी आधुनिकता के रंगरूप में परिणत हो चुका है। लेकिन आज का विज्ञान इस बात को भूल चुका है कि जिसका आधार लेकर हम शोध कार्य कर रहे हैं उस संस्कृति का निर्माण उन्हीं आश्रमों में हुआ था। ठीक उसी के विपरीत हमारे ऋषियों मुनियों ने जिस संस्कृति और संस्कारों को शोध करके बार–बार शोधित एवं परिष्कृत किया था। जिन षोडश संस्कारों का वर्णन किया था आज का मानव समाज उनकी अनदेखी कर रहा है। इसलिए आज का मानव समाज सब कुछ होते हुए भी दुःखी परेशान दिखाई देता हैं। विवाह संस्कार षोडश संस्कारों में अहम स्थान रखता है। विवाह संस्कार में दो पवित्र आत्माओं का मिलन होता है जिससे एक नये समाज का निर्माण होता है। परन्तु आज के मानव समाज ने इस पवित्र बन्धन को आनन्त–मस्ती मान रखा है। जो कि इस संस्कार के साथ खिलवाड़ करना है। मंगलमय भगवान ने मानव जीवन की सार्थकता धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष इन पुरूषार्थ चतुष्टय में मानी है। समस्त आर्य वाड्मय एकमात्र इसी सूत्र में उपनिबद्ध है। सभी साक्षर जानते हैं कि धर्म और मोक्ष इन दो पदार्थों को जानने के लिए अनेक प्रबन्ध ग्रंथ, अनेक धार्मिक ग्रंथ जैसे गीता, महाभारत, जैमिनी दर्शन, उपनिषदादि ढेरों पुस्तकें विद्यमान हैं। अथ च धर्मविषयक मनु, बृहस्पति, कण्व, कामन्दक, विदुर, चाणक्य आदि महात्माओं द्वारा रचित कुछ ग्रंथ उपलब्ध हैं परन्तु कामविषयक एक मात्र ग्रंथ वात्स्यायन का उपलब्ध है। उसकी दीन–हीन एवं उपेक्षित दशा है। क्योंकि भगवान श्रीकृष्ण जी ने श्रीमद्भगवद्गीता में कहा है–

''धर्मा विरूद्धो भूतेषु कामा स्मि भारतर्षभ''। अर्थात् भगवा श्रीकृष्ण जी गीता में अर्जुन को उपदेश देते हुए कहते हैं कि धर्म के अविरूद्ध काम मैं हूँ। ऐसा कहकर उन्होंने पुरूषार्थ चतुष्टय में काम रूपी पदार्थ को अपनी विभूति प्रकट किया है। क्योंकि यह काम समस्त सृष्टि रचना का एकमात्र आधार है। यही काम दाम्पत्य जीवन को सुखमय बनाकर आज के रौख प्रायः घरों को स्वर्गमय बनाने में क्षमता रखता है। इसी के विधिवत सेवन से अन्त में मानव गृहस्थाश्रम के नानाविध अनुभवों को स्थापित करके स्वाभाविक वैराग्य के बल पर मोक्ष मार्ग को भी निष्कण्टक बना सकता है।

इस काम रूपी तृतीय पदार्थ का आधारभूत गृहस्थाश्रम का प्रवेश द्वार विवाह है। विवाह क्या है? किसलिए होता है? और कैसे होता है? तथा जिन जो आत्माओं का मेल होने जा रहा है उनका एक दूसरे के प्रति क्या कर्तव्य है। इत्यादि प्रश्नों का समाधार किये बिना दो अनजान प्राणियों को गृहस्थाश्रम के दायित्वपूर्ण किन्तु अथाह सागर में ढकेल दिया जाता है। बाजें के तुमुल कोलाहल में, रंग–बिरंगे वस्त्र आभूषणों की चकाचौंध में स्वादिष्ट मोदकों की मधुरिमा में अथ च राग रंग के कुतूहलपूर्ण वातावरण में दो अबोध प्राणियों को एक ऐसी भूल–भूलैया में डाल दिया जाता है। ताकि विवाह से पूर्व जान लेने योग्य बातों से सर्वथा अपरिचित ही रहते है।

1.3.2 विवाह कितने है?

विवाह के ऊपर विचार करते हुए ब्रह्म जी के मानस पुत्र भगवान मनु जी ने अलग–अलग जातियों एवं अलग–अलग देशों में होने वाले विवाहों को आठ प्रकार का कहा है–

ब्राह्मे दैवस्तथैवार्षः प्राजापत्यस्तथासुरः। गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोधमः।।

अर्थात् ब्रह्म, दैव, आर्य, प्रजापत्य, आसुर, गांधर्व, राक्षस और पैशाच ये आठ प्रकार के विवाह कहे गये हैं। उपर्युक्त आठों विवाहों में ब्रह्मदि पहले चार विवाह जिनमें सदाचार युक्त, धर्मपरायण, सर्वगुणसम्पन्न, वर को आदर–पूर्वक बुलाकर गृहस्थधर्म के पालन के लिए कन्या प्रदान की जाती है। अर्थात् श्रेष्ठ माने गये हैं। इसके अतिरिक्त असुरादि अन्तिम चार विवाह सर्वथा लोक निन्दित और निकृष्ट माने गये हैं। भारतदेश जिसकी संस्कृति सुसभ्य एवं अतिप्राचीन मानी जाति है आज उसको घुण लग चुका है क्योंकि प्रथम चार विवाह ही भारत में मान्य परन्तु समय की विपरीत स्थिति को देखें तो आज अन्तिम चार विवाह जिनकों समाज ने निन्दित वर्ग में रखा है। आज भारत में उन्हीं को प्रमुखता से अपनाया जा रहा है।

महाराज मनु जी ने कहा है– ज्ञातिभ्यो द्रविणं दत्वा कन्यायै चैव शक्तितः। कन्याप्रदानं स्वाच्छन्द्यादासुरो धर्म उच्चयते।।

मनु जी के अनुसार पंजाब आदि कुछ प्रान्तों में जहाँ पर वर पक्ष से हजारों लाखों रूपये लड़की वाले ऐंठकर ''विकन्या विक्रय'' द्वारा इस आसुर विवाह को पर्याप्त प्रोत्साहन मिल रहा है, वहीं पर दूसरी तरफ इसके विपरीत बंगाल, बिहार, उत्तरप्रदेश, प्रान्तों में टीके और दहेज के रूप में लाखों रूपये ऐंठ कर वर, विक्रय की एक सामाजिक कुरीति को पनपने दिया जा रहा है। यह बुराई धीरे–धीरे पूरे देश में फैल रही हैं। जिससे अन्य स्थानों पर भी लोग देखा–देखी में इस प्रकार का व्यवहार करने लग पड़े हैं। इसका परिणाम यह है कि एक ओर योग्य वर गुणसम्पन्न गरीब होने के कारण ..... हजार न दे पाने पर सुशिक्षित पत्नी नहीं प्राप्त कर सकता तथा दूसरी ओर जहाँ सर्वगुण सम्पन्न कुलीन सुशिक्षित कन्या जहाँ वर पक्ष के लिए ..... हजार की व्यवस्था न कर पाने पर अयोग्य अशिक्षित पात्रों को सौंप दी जाती है। और वहाँ पर जीवित और मृत दशा में चार–चार आंसु रोकर इस आसुरी सामाजिक कुप्रथा के कारण हिन्दू समाज को कोसती हुई जीवन पूरा करती है। आज के समाज की पुकार है कि भारत ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व में ब्राह्म विवाह को लागू कर दिया जाये।

अभ्यास प्रश्न – 1

लघु–उत्तरीय प्रश्न

(1) विवाह कितने प्रकार के हैं?

(2) मनु ने कितने विवाहों को मान्यता दी है।

(3) मनु किसके पुत्र थे?

(4) मनु स्मृति के रचयिता कौन है?

(5) लोकनिन्दित विवाह कितने प्रकार के हैं?

अभ्यास प्रश्न – 2

निम्न प्रश्नों का उत्तर सत्य/असत्य में दर्शायें।

(1) ब्राह्म विवाह समाज में मान्य है। (सत्य/असत्य)
(2) मनु महाराज ने दस प्रकार के विवाहों का वर्णन किया है। (सत्य/असत्य)
(3) विवाह समाज में कुरीति का कारक है। (सत्य/असत्य)
(4) दहेज प्रथा समाज में कुरीति की कारक है। (सत्य/असत्य)
(5) विवाह को सोलहवां संस्कार माना गया है। (सत्य/असत्य)

1.3.3 भारतीय विवाह का स्वरूपः–

मनु जी के अनुसार भारतीय विवाह में किसी आडम्बर की आवश्यकता नहीं है। न रूपये पैसे की आवश्यकता है। विशेष रूप से चाहिए केवल एक खद्दर का वस्त्र एवं वन से अनायास प्राप्त हो सकने वाली पुष्प जल–गन्ध आदि पूजन सामग्री। वर को मांगलिक वस्त्र पहिनाकर उसका आदर सत्कार हो और उसका देशाचार कुलाचार के अनुसार विधवत पूजन एवं सम्मान करें। उसे कन्या दान दे दिया जाना चाहिए। यथा–आच्छाद्य चार्चयित्वा च श्रुतिशीलवते स्वयम्। आहूय दानं कन्याया ब्राह्मे धर्मः प्रकीर्तितः।। यही है भारतीय विवाह का आदर्श और एक ऐसी प्रणाली जिसे अमीर–गरीब सब अच्छी प्रकार से निभा सकते हैं।

विवाह क्यों आवश्यक है?

मानव जन्म से पशु की तरह इस धरती पर अवतरित होता है। वास्तव में मानव के भीतर पाशविक वृत्तीयाँ हुआ करती है। विवाह एक पुनीत एवं महत्वपूर्ण संस्कार है। जिसने मानव पशु को सच्चे अर्थों में ''मानव'' बनाने का योगदान दिया है। विवाह का प्रचलन आधुनिक युग में नहीं अपितु जब इस धरती पर वंशधरों ने सामाजिक जीवन का सूत्रपात किया तभी से विवाह प्रणाली का प्रारम्भ हुआ होगा। यह प्रणाली जिस राष्ट्र में जितनी ही विकसित और उत्कृष्ट रूप में अपनाई गई वह राष्ट्र उतना ही विकसित सुसभ्य सुसंस्कृत एवं उन्नत बनता गया। यदि विवाह प्रणाली विकसित न होती तो मनुष्य पशु से भी बदत्तर होता, क्योंकि न तो उसकी माता होती, न कोई बहित होती, न बेटी होती। अपनी भोगलिप्सा को मिटाने के लिए कुत्तों की तरह स्त्री मात्र की तलाश में भटकता फिरता, छीना झपटी करता, लड़ता–झगड़ता, गुर्राता और खूंखार जानवर से कहीं अधिक अपनी सारी बुद्धि का उपयोग विनाश के उपाय में लगाता। उसके इस प्रकार के व्यभिचार से उत्पन्न मानव पिल्ले गली–गली, शहर–शहर, गाँव–गाँव, चौराहे पर भटकते फिरते नजर आते। उनका न कोई घर होता न स्कूल न कॉलेज, शिक्षा और सभ्यता संस्कृति विज्ञान सेसर्वथा वह कोरे कागज की तरह होता और हमारे सामने एक पशु राष्ट्र के सिवाय कुछ नजर नहीं आता। यह विवाह संस्कार ही तो है जिसने हमें परिवार दिया, घर बनाने की प्रेरणा दी, परिवार के

मरण पोषण एवं विविध कार्यों एवं पेशों को जन्म दिया और इस प्रकार से आज यह भरा पूरा संसार नजर आ रहा है। विवाह एक सुव्यवस्थित या सामाजिक व्यवस्था ही नहीं अपितु इससे भी कहीं आगे के विषय में उसके उद्देश्य समाहित हैं। पाश्चात्य जगत भले ही विवाह को भोग–विलास का साधन मानता हो, परन्तु भारतीय महर्षियों ने इसके विषय में विशेष रूप से चिन्तन करके लोकोत्तर समाज के सामने जो उद्देश्य रखे हैं उनकी प्रतिष्ठा सर्वथा लोकोत्तर आदर्शों पर रखी है।

विवाह के प्रमुख उद्देश्य–

1. विवाह संस्कार का प्रथम उद्देश्य स्त्री और पुरूष का सम्मेलन है, जिसका सर्वप्रथम उद्देश्य है, सृष्टि विस्तार करना क्योंकि प्रकृति के प्रत्येक अणु में दोनों शक्तियाँ विद्यमान रहती है। और सृष्टि विस्तार के लिए इन दोनों का सम्मेलन प्रकृति की प्रेरणा से होता है। यह सम्मेलन ही सृष्टि का कारण है। और संसार को जीवित रखने के लिए प्रवाह रूप से आज तक एवं भविष्य में भी रहेगा।
2. यह मानव देह भारतीय धर्मशास्त्र के अनुसार चौरासी लाख योनियों को भोगने के उपरान्त मिलता है। परन्तु यह मानव भले ही सद्–असद् का विचार रखने की, अच्छे और बुरे कार्य को करने की अथवा अपने–पराये, धर्म–अधर्म का विवेक रखता होगा परन्तु भिन्न–भिन्न योनियों में जन्म लेने के कारण उसका पूर्वजन्मों का वह संस्कार उसके साथ चला रहता है। जिसके फलस्वरूप मानव की यह स्मृति आहार–विहार के प्रति स्वछन्द प्रवाह रूप में झूकी रहती है। प्रत्येक पुरूष के हृदय में संसार भी की स्त्रियों के प्रति एवं प्रत्येक स्त्री में संसार भर के पुरूषों के प्रति भोग भावना बनी रहती है। वह एक अलग विषय है कि सामाजिक बन्धन के कारण वह चोरी छुपे इस प्रकार के कार्यों को अन्जाम देते है, परन्तु पूर्वजन्म में योनियों के वशीभूत वह इस पशु वृत्ति को चरितार्थ करने के मौकें को खोना नहीं चाहता। इतिहास साक्षी है कि यवन राजाओं ने इस पशु वृत्ति को चरितार्थ करने के लिए सैकड़ों स्त्रियों का अपहरण करके भोग विलास का शिकार बनाकर अपने महलों को भर लिया था। यह विवाह संस्कार ही तो है, एक मात्र जो व्यक्ति को सामाजिक बन्धनों के भय से नियमावली में बाँधे रखता है अथवा अनुशासित रखता है।
3. विवाह का तृतीय उपदेश्य है कि सन्तानोत्पत्ति करना केवल मात्र विवाह भोग विलास का साधन नहीं बल्कि किस प्रकार से पितृऋण से मुक्त हों। और पुत्र धर्म का पालन करें जिससे पुंनामक नरक में जाने के वास्ते अपने पिता की रक्षा करे। विवाह के उपरान्त सन्तानोत्पत्ति के साथ ही मानव पितृऋण से मुक्त हो जाता है। शास्त्र के अनुसार मानव के ऊपर तीन प्रमुख ऋण होते हैं।

(1) देवऋण (2) ऋषिऋण (3) पितृऋण

(1) देवऋण–यज्ञ–दान–जप–तपादि के द्वारा व्यक्ति देवऋण से मुक्त हो जाता है।

(2) ऋषिऋण–ऋषिऋण से व्यक्ति वेदों एवं धर्मशास्त्रों के स्वध्याय से ऋषिऋण से व्यक्ति मुक्त हो जाता है।

(3) पितृऋण–पितृऋण से मुक्त होने के लिए व्यक्ति को विवाह संस्कार करके पुत्र संतति के होने पर ही मुक्ति मिल सकती है।

4. इसके अतिरिक्त चूंकि आत्मा सच्चिदानन्द प्रभु का ही अंश रूप है। इसलिए सत् चित् आनन्द रूप तीनों गुणों की ओर उसकी प्रवृति स्वभावतः ही रहती है। इस सत् का ही प्रकृत विषय से सम्बन्ध है जिसका अर्थ है सत्ता सदा रहने वाली और मानव यहीं तो चाहता है कि उसकी सत्ता सदा विद्यमान रहे और वह अपी संतान को ही अपने अंश के रूप में देखता है। यही उसकी सत्भावना को सफल करती है। जिसके लिए व्यक्ति अनेकों प्रकार के यज्ञ–अनुष्ठान–जप–तपादि का आश्रय लेकर मनुष्य सतत् प्रयत्नशील रहता है।

मानव एक स्वार्थी प्राणी है। अपने शरीर में उसकी जितनी मोह ममता रहती है उतनी अन्य किसी में नहीं। विवाह के चौथे उद्देश्य में यही तो है कि विवाह करने के उपरान्त उसकी ममता का विस्तार होता है। विवाह से पूर्व जो उसका प्रेम मात्र अपनी काया तक सीमित था, परन्तु अ बवह इस ममता को अपनी पत्नी, कन्या, पुत्र में भी देखने लगा जिसके कारण उसकी ममता का विस्तार होने लगा। इस प्रकार से यह स्वार्थपरक प्रेम पहले अपने स्वयं के शरीर के उपरान्त परिवार तक उसके बाद घर की चारदीवारी को लाँघ कर गली मुहल्ला, शहर में होता हुआ जिला–प्रान्त–देश–विदेश तक फैल गया अर्थात् समस्त विश्व में व्याप्त हो कर ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' की पुनीत भावना से ओत–प्रोत हो गया। विश्व प्रेम ममत्व की अन्तिम श्रेणी है। इस पर पहुँच कर मानव ''यो'' ''मामं प्श्यति सर्वच पश्यति'' इसलिए स्वार्थपरम प्रेम को विस्तृत कर उसका मुक्ति में ही पर्यवसान विवाह का चतुर्थ उद्देश्य है।

5. त्याग–क्षमा–धैर्य–सन्तोषादि गुणों का संग्रह तथा अभ्यास विवाह का पाँचवा उद्देश्य है। गृहस्थ में रहते हुए दम्पति वर्ग को स्वार्थ, त्याग, एक–दूसरे के प्रति व्यवहार में क्षमा, अत्यंत कष्ट में भी धैर्य आदि गुणों का प्रयोग करना अनिवार्य हो जाता है। यही गुण विकसित होकर मनुष्य को सामाजिक क्षेत्र में विशिष्ट व्यक्तित्व प्रदान करता हैं। गृहस्थ में रहते हुए त्याग, प्रेम आदि का पूर्ण अभ्यास करके जब दम्पती इनका प्रयोग ईश्वर प्राप्ति के लिए अध्यात्म मार्ग में करते हैं तो वे भगवत प्राप्ति के अत्यन्त सन्निकट पहुँच जाते हैं और यही उनका प्रमुख उद्देश्य है।

अभ्यास प्रश्न – 3

प्रश्न– बहुविकल्पी प्रश्नों के उत्तर दीजिए–

(1) विवाह कितने प्रकार के होते हैं।

(अ) आठ (ब) पाँच

(स) दस (द) चार

(2) श्रेष्ठ विवाहों की संख्या होती है।

(अ) आठ (ब) चार

(स) छः (द) दस

(3) ब्रह्म के पुत्र थे।

(अ) वैवस्वत (ब) मनु

(स) शंकराचार्य (द) इनमें से कोई नहीं।

(4) श्रेष्ठ विवाह कितने प्रकार के हैं।

(अ) चार (ब) दस

(स) तीन (द) पाँच

(5) विवाह के कारक ग्रहों की संख्या है।

(अ) एक (ब) दो

(स) तीन (द) पाँच

(6) विवाह का कारक ग्रह है।

(अ) शुक्र (ब) शनि

(स) राहु (द) बृहस्पति

(7) कानूनन लड़की के विवाह की आयु निश्चित है।

(अ) 18 वर्ष (ब) 15 वर्ष

(स) 13 वर्ष (द) 11 वर्ष

विवाह की विभिन्न रीतिया

विवाह संस्कार के विषय में हम आठ प्रकार के विवाहों का वर्णन पीछे कर चूके हैं, उनमें प्रथम चार प्रकार के विवाह भारत में किये जाते रहे हैं और मनु महाराज जी ने उन्हीं को मान्यता प्रदान कर रखी है, अन्य चार विवाह प्रायः भरतेतर देशों में अतीत काल से होते आ रहे हैं। प्रथम चार विवाहों का वर्णन को छोड़ कर अन्य चार जो विवाह है उनके नियम और कानून है। वह भिन्न–भिन्न देशों में भिन्न–भिन्न रीतियों में दिखाई पड़ते हैं। यहाँ पर विभिन्न देशों में भिन्न–भिन्न जातियों और मतों में होने वाली एतत्कालीन रीतियों का संक्षिप्त वर्णन कर रहें हैं।

1. इंगलैण्ड–विलायत (इंग्लैण्ड) में वर–वधु ईसाई घर में इकट्ठे होते हैं और पादरी के समक्ष पेश होने पर अंगुठी व रूमाल बदले जाते हैं और उसके उपरान्त पादरी से बाइबल सुनते हैं। जीवन पर्यन्त दोनों वर एवं वधु पादरी के समक्ष एक दूसरे के सुख–दुख, अमीरी–गरीबी, अच्छाई–बुराई, लाभ–हानि, एक दूसरे की खबर आदि रखने के लिए सौगन्ध खाते हैं। वर स्त्री के बायें हाथ की अनामिका अंगुली में छल्ला पहनाता हैं और वर कहता है स्त्री से कि मैं तुम्हें इस छल्ले से व्याहता हूँ। और अपना दूनियाबी माल तुम्हें देता हूँ। ''बाप बेटे रूह उलकुदस के नाम से'' और इस प्रकार से विलासति वर व वधु की विवाह

की रस्म सम्पन्न हो जाती है।

1. आस्ट्रेलिया–आस्ट्रेलिया में विवाह की रस्म वाले दिन वधु का भाई जलती हुई मशाल लेकर वर के घर जाता है और वर का भाई वधु के घर पर, इसके उपरान्त दोनों की वैवाहित रस्म सम्पन्न हो जाती है।

2. बापर द्वीप–बापर द्वीप में इस संस्कार की रीति कुछ इस प्रकार से है वर को यदि घने अन्धकार युक्त कमरे में एक तय समय सीमा के अन्दर ढूंढ निकाले तो विवाह हो जाता है अन्यथा नहीं।

3. बलगेरिया–बलगेरिया देश में वर एवं वधु को विवाह से पूर्व एक सप्ताह के लिए एक अंधेरे कमरे में बंद कर दिया जाता है। उसके उपरान्त दोनों की सर्वसम्मति होने पर यह संस्कार सम्पन्न हो जाता है।

4. जेरूसलम्–यहाँ इस अवसर पर वधु की आंखों पर पट्टी बाँध दी जाती है और जब तक विवाह की सभी रस्मों–रिवाज सम्पन्न नहीं हो जाते तब तक नहीं खोली जाती।

5. जापान–जापान में स्त्रियों के लिए सफेद वस्त्र पहनना अच्छा नहीं माना जाता इसका मतलब यह है कि यदि इसे कोई लड़की पहनती है तो वह परकीया हो जाती है। अर्थात् विवाह सम्पन्न हो चूकी है।

6. कोर्यक और शबर–कोर्यक और शबर जातियों में यह प्रक्रिया बड़ी जटिल है। इसमें वधु द्वारा वर को बेंत की छड़ी के द्वारा खूब पीट–पीटकर यह रस्म पूर्ण की जाती है। इस मार को वर बड़ी खुशी से सहते है ताकि विवाह के उपरान्त सुख की प्राप्ति हो।

7. मिस्र–मिस्र में विवाह की रस्म प्रक्रिया सम्पन्न होने तक वर–वधु एक–दूसरे को बिल्कुल नहीं देख सकते, इसके लिए वहाँ पर विशेष रूप से कठोरता बरती जाती है।

8. तिब्बत–तिब्बत में धर्मगुरू की आज्ञा अनुसार नियमों का पालन करते हुए यह संस्कार सम्पन्न होता है और इस अवसर पर वधु को वर का जूठा दूध पिलाया जाता है।

अभ्यास प्रश्न – 4

प्रश्न– निम्नलिखित में सही विकल्प चुनकर रिक्त स्थानों की पूर्ति करें–

(1) संस्कारों की संख्या .....
(सोलह, अठारह, तेरह, बारह)

(2) शारीरिक विज्ञान के आचार्य ..... हैं।
(पाणिनि, सुश्रुत, राहमिहिर)

(3) विवाहों की संख्या ..... है।
(चार, छः, आठ, दस)

(4) विवाहों में सर्वोत्तम विवाह ..... है।

(प्रथम दो, प्रथम चार, प्रथम छः, आठ)

(5) विवाह संस्कार से पूर्व ..... आश्रम आता है।

(गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थ, ब्रह्मचर्य, सन्यास)

1.4 सारांश

इस ईकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जान लिया है कि विवाह एक सामाजिक व्यवस्था है। विवाह के बिना मानव असभ्य, पशुवत् एवं असामाजिक कहलाता है। विवाह एक ऐसा संस्कार है जिसके द्वारा परिवार का, परिवार से समाज का निर्माण होता है। वास्तविक रूप से देखा जाये तो विवाह संस्कार एक अनुशासनत्मक प्रक्रिया हैं। क्योंकि यदि यह व्यवस्था नहीं होती तो आज समाज में मानव, मानव न होकर पशु होता वह बेलगाम होता हुआ पशुओं की तरह यत्र–तत्र भटकता, व्यभिचारी बनता, छीना झपटी, इत्यादि करता। विवाह सोलह संस्कारों में पद्रहवां संस्कार माना गया है। अतः इस संस्कार को मानव के भीतर परिपक्वता आने पर ही करना चाहिए।

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

विवाह– एक ऐसा संस्कार है जिसका व्यक्ति पर्याप्त विशेष रूप से

संविधान– एक ऐसी व्यवस्था जिसमें नीति–नियमों का उल्लेख किया गया हो

अनभिज्ञ– जो किसी भी विषय को नहीं जानता हो।

आजन्म– जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त

निस्वार्थ– अपने हित को छोड़ते हुए

सानन्द– आनन्द के साथ (मौज मस्ती)

ब्रह्मचार्य– ब्रह्म रूप होते हुए जीवन की प्रथम अवस्था को ब्रह्म करना।

गृहस्थ– जीवन के प्रवाह की प्रथम सीढ़ी अध्ययन के बाद।

वानप्रस्थ– जीवन का तृतीय भाग सन्तति के उपरान्त।

सन्यास– जीवन का अन्तिम पड़ाव जिसमें व्यक्ति अपने सम्पूर्ण जीवन को ईश्वर के लिए समर्पित।

संसरति– प्रत्येक क्षण जो अपना रूप को बदले या चलता रहे।

पुरूषार्थ चतुष्टय– धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष

उपनिबद्ध– बन्धा हुआ।

दाम्पत्य– पत्नी एवं पति के साथ।

वैराग्य– भौतिक संसाधनों को छोड़कर ईश्वर को समर्पित हो जाना

निष्कण्टक– बिना किसी बाधा के या कष्टों से रहित

सुसंस्कृतिक– संस्कारित होना

व्यभिचार– बुराई का भाग

सुव्यवस्थित– अच्छी तरह से स्थित होना

सद्–असद्– अच्छे और बुरे
स्वध्याय– अपने आप पढ़ना
कुटुम्बकम्–परिवार
त्याग– छोड़ देना

1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न – 1 का उत्तर –

लघु उत्तरीय प्रश्नोत्तर माला

(1) आठ (2) पहले चार (3) ब्रह्मा के मानस पुत्र (4) महाराज मनु (5) चार प्रकार।

अभ्यास प्रश्न – 2 का उत्तर –

सत्य और असत्य प्रश्नों के उत्तर

(1) सत्य (2) असत्य (3) असत्य (4) सत्य (5) असत्य

अभ्यास प्रश्न – 3 का उत्तर –

बहुविकल्पी प्रश्नों के उत्तर

(1) आठ (2) चार (3) मनु (4) चार

(5) दो (6) शुक्र (7) ..... वर्ष

अभ्यास प्रश्न – 4 का उत्तर

रिक्त स्थानों के प्रश्नोत्तर –

(1) सोलह (2) सुश्रुत (3) आठ (4) ब्रह्मचर्य

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

1. फलदीपिका, व्याख्याकार– गोपेश कुमारओझा, ... मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
2. कर्मठगुरूः, मुकुन्दबल्लभ रचित, ... मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
3. क्यों (धर्म दिग्दर्शन पूर्वार्थ), स्वामी करपात्री जी महाराज रचित, ... माधव विद्या भवन श्रीधाम .... पुरानी गुप्ता, कालोनी दिल्ली–...
4. क्यों (धर्म दिग्दर्शन उत्तरार्ध)।
5. तजिक–नीलकण्ठी, पं. सीताराम शर्माकृत, ... चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी।
6. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द शास्त्री रचित, ... भारतीय ज्ञानपीठ ... इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड नई दिल्ली, ...

7. संस्कार प्रकाश, डॉ. भवानी शंकर त्रिवेदी कृत, ... श्री लालबहादुरशास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ शहीद जीतसिंह मार्ग नई दिल्ली .....
8. ज्योतिष–रत्नाकर, देवकीनन्दन सिंह, ... मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
9. भारतीय ज्योतिष विज्ञान, डा. सुरकान्त झा कृत, ... चौखम्बा कृष्णदास अकादमी के0 ..... गोपाल मन्दिर लेन वाराणसी।
10. सन्तान सुख सर्वांग चिन्तन, मृदुलात्रिवेदी कृत, ... महानगर विस्तार ई0– कारपोरेशन क्वार्टर के सामने पीली कालोनी लखनऊ .....
11. मुहूर्त चिन्तामणि– गोविन्द दैवज्ञ विरचित ..... चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान .... यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।
12. वृहद्पाराशर, होराशास्त्र पं. पद्मनाभ शर्मा ..... चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान ... यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।
13. वृहद्जातकम।

14. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1–विवाह कितने प्रकार के है? विस्तार पूर्वक उल्लेख करें।

प्रश्न 2–भारत एवं भारत्तेतर देशों में विवाह की प्रथा का विस्तारपूर्वक उल्लेख करें।

प्रश्न 3–विवाह क्यों आवश्यक है विस्तारपूर्वक बतायें?

प्रश्न 4–क्या आधुनिक प्रेम विवाह को विवाह की श्रेणी में रखा जा सकता है?

प्रश्न 5–आसुर, गान्धर्व, राक्षस एवं पैशाच विवाहों का आधुनिक समाज पर पढ़ने वाले प्रभाव का वर्णन करें।

इकाई – 2 विवाह में वर–कन्या का चुनाव एवं शुभ ग्रह योग

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 मुख्य भाग
    2.3.1 उपखण्ड एक – विवाह योग
    2.3.2 उपखण्ड दो – विवाह प्रसंग के प्रश्न
    2.3.3 उपखण्ड तीन – विवाह समय
2.4 सारांश
2.5 पारिभाषिक शब्दावली
2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 सन्दर्भ ग्रंथों की सूची
2.8 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम अध्ययन करेंगे विवाह के लिए वर कन्या चुनाव कब किया जाए? किस प्रकार की कन्या एवं वर हो। प्रायः वर एवं कन्या के विवाह योग्य हो जाने पर अर्थात् लड़की के 18 वर्ष के होने पर अथवा लड़के लड़की पढ़ लिखकर योग्य होने पर अथवा ब्रह्मचर्याश्रम की समाप्ति पर अथवा ... वर्ष की नहीं तो कम से कम 20–22 वर्ष की आयु हो जाने पर लड़के और लड़की का विवाह सम्पन्न किया जाता है। सर्वप्रथम लड़के और लड़की कू कुलाचार एवं शील आदि की समानता देखी जाती है। इसी सम्बन्धित प्रश्नों क विषय में हम इस ईकाई में अध्ययन करेंगे।

2.2 उद्देश्य

भारतीय परम्परा में विवाह संस्कार सब संस्कारों में प्रमुख और महत्वपूर्ण माना जाता है। यह गृहस्थाश्रम प्रवेश का संस्कार है और गृहस्थाश्रम चारों आश्रमों का आधार है। साथ ही मानव के ऊपर तीन बड़े–बड़े ऋण (देव–पितृ–ऋषि) समाज राष्ट्र ज्ञान विज्ञान और परिवार की सेवा के रूप में बताये गये हैं। उनमें से पितृ ऋण सन्तानोत्पति के द्वारा वंश–परम्परा को बनाये रखने से उसका उद्धार होता है।

आवासथ्य या गृहस्थ (स्यार्त) अग्नि का आधार विवाह के समय या उसके पश्चात ही होता है। और उसी के द्वारा पंच महायज्ञ सम्पन्न होते है। विवाह के उपरान्त ही सन्तति परम्परा चलती है। और उन्हीं सन्तानों की उन्नति एवं कल्याण के लिए संस्कार किये जाते हैं। श्रोत–स्मार्त आदि कर्म, यज्ञ, दान, पूजा आदि सभी धार्मिक कर्म पत्नी के साथ किये जाते हैं। इन्हीं सभी बातों को ध्यान में रखकर आचार्य पारस्कर ने अपने गृहय सूत्र में सर्वप्रथम विवाह संस्कार का विधान बतलाया है। विवाह संस्कार की प्रकिया बहुत लम्बी है। विवाह के द्वारा दो व्यक्तियों और दो परिवारों का ही क्यों, दो आत्माओं का न केवल इस जन्म के लिए ही अपितु जन्म जन्मान्तरों के लिए मिलन होता है। माता पिता अपने पुत्र या पुत्री का विवाह करके ही पितृऋण से मुक्त होते है। परन्तु भारतीय में यहाँ माता पिता मुक्त नहीं हो पाते अपितु पीढ़ी दर पीढ़ी चलने वाला या स्थायी सम्बन्ध है। यहीं कारण है कि वर वधु के चुनाव में माता की सात पीढ़ियों तक के सुदूरवर्ती कुल की लड़की से विवाह सम्बन्ध स्थापित करना निषिद्ध माना गया है।

2.3 विवाह योग

आधुनिक युग में दृष्टिपात करें अथवा दशकों पहले की बात करें आज भारत के लोग सुशिक्षित एवं सर्वगुण सम्पन्न होते जा रहें हैं, परन्तु फिर आप देखते होंगे कि कुछ लोग विवाह जैसे संस्कार से वंचित रह जाते है। अन्त में लोगों का कहना होता है कि अमुख व्यक्ति का योग ही नहीं था, इसलिए सर्वगुण सम्पन्न होने पर भी विवाह नहीं हो पाया। परन्तु ऐसा नहीं हैं प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में प्रायः विवाह का अवसर आता है। यदि उस समय वह चूक गया तो पुनः उसका योग बनेगा या नहीं यह निश्चित नहीं हैं।

ज्योतिष शास्त्र सूचक शास्त्र है और कर्म करने पर विश्वास रखता हैं भाग्य पर नहीं क्योंकि भाग्य का निर्माण कर्म के द्वारा होता है। अतः यह शास्त्र भी कर्म के लिए आदेश करता है। हम यहाँ पर विवाह योग की बात कर रहे द्वादश भावों में सप्तमभाव, सप्तमेंश, ये विवाह होने के प्रमुख विचारणीय बिन्दु हैं। देशकाल परिस्थिति के अनुसार शास्त्र के अपने सुझाव हैं, लेकिन आधुनिक दैवज्ञों को चाहिए कि वह अपनी बुद्धि का प्रयोग करते हुए उस विषय पर विचार करें।

1. पाराशर मतानुसार सप्तमेश शुभ स्थान पर हो विवाह कारक ग्रह शक्र उच्च राशि में हो तो शीघ्र विवाह होता है।
2. शुक्र द्वितीय भाव में और सप्तमेश एकादश भाव में हो तो शीघ्र विवाह योग होता है अर्थात् 20 वर्ष से पूर्व।
3. द्वितीय भाव का स्वामी एकादश भाव में और ग्याहरवें भाव का स्वामी द्वितीय भाव में हो तो शीघ्र विवाह होता ळें
4. ..... भावों में शुक्र हो तो शीघ्र विवाह योग होता है।
5. प्रथम भाव में शुक्र एवं लग्नेश दशम–एकादश भाव में हो तो शीघ्र विवाह योग होता है।
6. सप्तम भाव में चन्द्रमा हो और शुक्र से सप्तम स्थान में शनि हो तो ... वर्ष की आयु में विवाह होता है।
7. शुक्र द्वितीय स्थान में हो और द्वितीयेश तथा मंगल इन दोनों का योग हो तो ...वें वर्ष में विवाह होता है। मतान्तर से इस योग के रहने पर 22 या 23 वर्ष की आयु में विवाह होता है।
8. पंचम भाव में शुक्र और चतुर्थ में राहु हो तो ... या ... वर्ष की आयु में विवाह होता है।
9. तृतीय भाव में शुक्र और 1वें भाव में सप्तमेश गया हो तो 30वें या 26वें वर्ष में विवाह होता है।
10. लग्नेश से शुक्र जितना नजदीक हो उतनी जल्दी विवाह होता है। शुक्र की स्थिति जिस राशि में हो उस राशि की दशा में विवाह होता है।
11. सप्तमस्थ राशि की जो संख्या हो उसमें आठ और जोड़ देने पर विवाह की वर्ष संख्या आ जाती है। शुक्र, लग्न और चन्द्रमा से सप्तमाधिपति की संख्या में विवाह का योग आता है।
12. लग्न, द्वितीय और सप्तम में शुभग्रह हो या इन स्थानों पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो छोटी अवस्था में विवाह होता है।
13. लग्नेश और सप्तमेश को जोड़कर जो राशि हो उस राशि में जब गोचर का गुरू पहुँचता है तब विवाह का योग होता है। अपनी जन्म–राशि के स्वामी और अष्टमेश

को जोड़ने से जो राशि आये, उस राशि में जब गोचर का गुरू पहुँचता है तब विवाह होता है।

14. शुक्र और चन्द्रमा इन दोनों में से जो ग्रह बली हो तो उसकी महादशा में विवाह होता है।
15. यदि सप्तमेश शुक्र के साथ हो तो सप्तमेश की अन्तर्दशा में विवाह होता है। नवमंश, दशमेश, और सप्तम भावस्थ ग्रह की अन्तर्दशा में विवाह होता है।
16. चन्द्राधिष्ठित नक्षत्र और सप्तमेश के योग्य तुला अंश में गुरू के होने पर विवाह होता है।
17. शुक्र युक्त सप्तमेश की दशा भुक्ति में विवाह का योग आता है।
18. सप्तमेश जिस राशि और नवांश में स्थित हो उसके स्वामियों में अथवा शुक्र और चन्द्रमा में जो अधिक बली हो उसकी दशा में सप्तमेश युक्त राश्यंश से त्रिकोण में गुरू के होने पर विवाह होता है।
19. गोचर से गुरू ..... स्थान में होने पर विवाह का योग आता है।
20. सप्तमेश, पंचमेश व एकादशेश की दशा–अन्तर्दशा में विवाह योग आता है।
21. सप्तमस्थ बलिष्ठ ग्रह की दशा अन्तर्दशा में विवाह होता है।
22. विवाह किस दिशा में होगा इसका विचार शुक्र से सप्तम स्थान का स्वामी जिस दिशा में अधिपति होता है, उसी दिशा में विवाह कहना चाहिए।
23. यदि पापग्रह सप्तम और द्वितीय स्थान में हो तो विवाह विलम्ब से होता है अथवा विवाह हो जाने पर भी पत्नी–वियोग होता है।

प्रथम दैवज्ञ पूजन

भारतीय परम्परा के अनुसार सर्वप्रथम सब शुभ एवं अशुभ सभी संस्कारों को करने का अधिकार दैपज्ञ को होता है, अतः सर्वप्रथम हमें श्रेष्ठ दैवज्ञ का चुनाव करने के उपरान्त ज्योतिषी या दैवज्ञ का यथाशक्ति फल, ताम्बुल पूर्वक पूजा करके कन्या का पिता, कन्या के विवाह सम्बन्धि प्रश्न द्वारा शुभाशुभ का ज्ञान करें।

2.3.2 विवाह प्रसंग के प्रश्न

यदि प्रश्नकालिक कुण्डली में शुक्र व चन्द्र विषम राशि के नवमांश में हो, दोनों बल युक्त होकर लग्न को देखते हों, तो कन्या को शीघ्र पति प्राप्ति होगी, ऐसा जानना चाहिए। उसी प्रकार वर के विवाह सम्बन्धि प्रश्न में यदि शुक्र व चन्द्र समराशि या समराशि के नवमांश में हो, बलवान् होकर लग्न को देखता हो, तो वर को पत्नी की प्राप्ति होगी, जानना चाहिए।

विवाह योग्य कन्या–सुन्दर स्वभाव वाली स्त्री धर्म, अर्थ, एवं काम, इन तीनों वर्गों को देती है और पति को सहयोग देकर तीन ऋणों से मुक्त कराती है। स्त्री की सुशीलता विवाहकालिक लग्न के अधीन हैं, अर्थात् शास्त्र विहित शुभ मुहूर्त में विवाह होने से स्त्री का

स्वभाव और आचरण पवित्र होता है। इसलिए विवाह का विचार किया जाता है, क्योंकि पुत्र, शील और धर्म विवाहकालिक लग्न के अधीन होते है।

यथा– मुहूर्त चिन्तामणि के अनुसार –

भार्या त्रिवर्गकरण शुभशीलयुक्ता शील शुभ भवति लग्नवशेन तस्याः।
तस्माद्विवाहसमयः परिचिन्त्यते हि तर्घिनतामुपगताः सुतशीलंधर्मोः।।

वर एवं कन्या का चुनाव

वर और वधु का मिलान करना बहुत ही टेढ़ी खीर है क्योंकि भारतीय ज्योतिष का प्रमुख उद्देश्य है कि जन्म जन्मान्तरों तक का मिलन हो न कि आधुनिक विवाह प्रणाली के अनुसार आधुनिक काल में लड़की और लड़के की पसन्द सर्वोपरी रखी जाती है यही कारण है कि आधुनिक काल में विवाह के उपरान्त आये दिन कोर्ट–कचहरी के चक्कर काटते वर एवं वधु दोनों पक्षों के लोग दृग्गोचर होते हैं। चाहे वह दहेज सम्बन्धित विषय हो अथवा परस्पर विचारों का आदान–प्रदान हो, सभी विषय विसंगति का कारण बनते हैं। इसी बात को ध्यान में रखते हुए भारतीय ज्योतिष सर्वप्रथम देश काल परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए कुण्डली मिलान की आज्ञा देता है। इससे पहले वर एवं वधु कुलचार एवं शील आदि की समानता को देखकर विवाह सम्बन्ध बनाना चाहिए। इसके विषय में कहा गया हैं–

ययोरेव समं वितं ययोरेव समं कुलम्।
त्योमैत्री विवाहश्च न तु पुष्टविपुष्टयोः।।

(1) वर के सप्तम स्थान का स्वामी जिस राशि में हो यदि वह राशि कन्या की भी हो तो विवाह उत्तम होता है।

(2) यदि कन्या की राशि, वर के सप्तमेश का उच्च स्थान हो तो विवाह अच्छा होता है।

(3) वर के सप्तमेश का नीच स्थान यदि कन्या की राशि हो तो विवाह अच्छा होता है।

(4) वर का शुक्र जिस राशि में हो वही राशि यदि कन्या की हो तो वह विवाह अच्छा होता है।

(5) वर की सप्तमस्थ राशि यदि कन्या की राशि हो तो वह विवाह अच्छा है।

(6) वर का लग्नेश जिस राशि में हो वही राशि यदि कन्या की भी हो तो विवाह सुखदायी होता है।

(7) वर के चन्द्र–लग्न से सप्तमस्थान में जो राशि पड़े वही राशि यदि कन्या का जन्म–लग्न की हो तो विवाह बहुत शुभ है।

(8) वर की चन्द्रराशि से सप्तम स्थान पर जिन 2 ग्रहों की दृष्टि हो, वे ग्रह जिन 2 राशियों में बैठे हों उन राशियों में से किसी राशि में यदि कन्या का जन्म हो तो वह विवाह भी उत्तम होता है। उपर्युक्त दो नियमों का विचार कन्या की कुंडली से भी होता है।

(9) नवांश के सप्तम की राशि अगर वर या कन्या के लग्न की राशि हो तो मिलान सुखदायी होता है।

(10) लग्न अगर नवम–पंचम हो तो आकर्षण होगा। लग्न में गाहय होगा। ऐसी उभति में

संगत भाव से संबंधित विचार भली– भांति कर लेना चाहिए।

प्रथम नियमानुसार, इस कुंडली का सप्तमेश बुध तुला में बैठा है। इसलिये यदि कन्या तुला राशि की हो तो विवाह अच्छा होगा। द्वितीय नियमानुसार, सप्तमेश बुध का उच्च स्थान कन्या राशि है। अर्थात् यदि कन्या का चन्द्रमा कन्याराशि का हो तो विवाह उत्तम होगा। तृतीय नियमानुसार, सप्तमेश बुध, मीन में नीच होता है। इस कारण यदि कन्या मीन राशि की हो तो विवाह–योग बढ़िया होगा। (इस जातक की स्त्री मीन राशि की है)। चतुर्थ नियमानुसार, इस उदाहरण–कुंडली में शुक्र तुला का है। इस कारण यदि कन्या की तुला राशि हो तो उस कन्या के साथ विवाह उत्तम होगा। पंचम नियमानुसार, उक्त कुंडली में सप्तम स्थान मिथुन का है। यदि कन्या की मिथुन राशि हो तो भी विवाह उत्तम होगा। षष्ठ नियमानुसार, लग्नेश बृहस्पति मिथुन में बैठा है। अन्तः यदि कन्या भी मिथुनराशि की हो तो विवाह शुभ होगा। सप्तम नियमानुसार, इस कुंडली में चन्द्रमा मीनराशि में है, उस के सप्तम कन्या राशि हुई। अतएव यदि कन्या का जन्मलग्न कन्या राशि हो तो विवाह सुखदायी होगा। अन्त में अष्टम नियमानुसार, चन्द्रमा से सप्तम, कन्याराशि पर केवल शनि की दृष्टि है और शनि धन राशि में हैं। इस कारण यदि धन लग्न में कन्या का जन्म हो तो भी विवाह शुभदायक होगा।

लिखने का अभिप्राय यह है कि यदि वर कन्या की कुंडली में उपर्युक्त आठ नियमों में से एक भी लागू हो तो विवाह शुभ होगा और यदि एक से अधिक हो तो सोना में सुगंध होगा। उत्तम रीति यह होगी कि पिता अपने पुत्र की कुंडली को इस रीति से विचार कर देख ले कि इस वर के लिये किस किस राशि वा लग्न की कन्या शुभ होगी। जैसे उदाहरण वाले जातक के लिए–

1.	नियमानुसार	तुलाराशि	शुभदायक
2.	नियमानुसार	कन्याराशि	शुभदायक
3.	नियमानुसार	मीनराशि	शुभदायक
4.	नियमानुसार	तुलाराशि	शुभदायक
5.	नियमानुसार	मिथुनराशि	शुभदायक
6.	नियमानुसार	मिथुनराशि	शुभदायक
7.	नियमानुसार	कन्याराशि	शुभदायक
8.	नियमानुसार	धनलग्न	शुभदायक

उपर्युक्त से स्पष्ट होता है कि इस जातक का विवाहतुला, और मिथुनराशि वाली कन्या से दो–दो प्रकार से शुभ होता है। यदि तुलाराशि या मिथुनराशि वाली कन्या से विवाह होता तो अत्युत्तम; नही ंतो मीन और कन्या राशि एवं कन्या और धन लग्न वाली कन्या से विवाह होना भी शुभ ही होगा।

(1) 'कलत्र–राशि' तीन होती हैं। पुरूष कुंडली का सप्तमेश जिस नवाँश में हो उस के स्वामी की राशि वा राशियों को कलत्रराशि कहते हैं। सप्तमाधिपति जिस राशि में उच्च

होता है, वह भी कलत्र राशि होती है। तथा सप्तमभाव का नवाँश भी कलत्रराशि होती है। ज्योतिषशास्त्र का मत है कि स्त्री की जन्म राशि पुरूष के उपर्युक्त कई कलत्रराशियों में से किसी राशि में होना चाहिए अथवा उनकी त्रिकोणस्थ जो राशि हों उन में से किसी में स्त्री की जन्मराशि होना अच्छा है। यदि स्त्री की जन्मराशि उपर्युक्तराशियों में से किसी राशि में न पड़ती हो तो उस स्त्री से सन्तान नहीं होती है। 'जातक पारिजात' में उपर्युक्त कत्र–राशि के सिवा सप्तमेश जिस राशि में हो वा उसके त्रिकोण–राशियों में से किसी में से किसी में स्त्री का जन्मराशि होना शुभ बतलाया ह।

(10) जिस कन्या की जन्म राशि वृष, सिंह, कन्या अथवा वृश्चिक की होती है, उस को सन्तान कम होते हैं। परन्तु यदि उसमें शुभग्रह हो तो वह कन्या बहुगुणवान–सन्तानों की माता होती है।

(11) वर के सप्तमेश और लग्नेश स्फुटों को जोड़ देने से उस योगफल से किसी राशि और नवाँश का बोध होगा। यदि कन्या की जन्मराशि उसी राशि की हो तो वैसा विवाह भी शुभ होगा क्योंकि ऐसे स्थान में स्त्री और पुरूष में परस्पर पचिष्ठ प्रेम रहता है।

(12) वर की चन्द्र राशि से सप्तम स्थान पर जो ग्रह हो या जिस ग्रह की उस उत्तम स्थान पर पूर्ण दृष्टि हो तो जिस–जिस राशि में वे ग्रह स्थित हों, उन में से किसी राशि में यदि कन्या का जन्म–लग्न हो तो ऐसा विवाह भी शुभदायी होता है। कन्या के लिये ऐसा विवाह भाग्यादयकारी होता है। तथा वर–वधु में पारस्परिक प्रेम रहता है। इसी प्रकार यदि कन्या की जन्मराशि के सप्तम स्थान में स्थित ग्रह अथवा देखने वाले ग्रह की राशि में यदि पुरूष का जन्मलग्न हो तो वैसा ही शभदायक होता है।

(13) विवाह के समय लोग प्रायः कुजदोष पर विचार किया करते हैं, पर शनि दोष को नहीं देखते। वर अथवा कन्या की कुंडली में यदि मंगल ..... स्थानामें में हो तो कुजदोाष होता है अर्थात् कन्या की कुंडली में रहने से वैधव्य–योग और वर की कुंडली में स्त्री–हन्ता योग होता है। इस प्रकार यदि कन्या की कुंडली में लग्न से अष्टम भाव में शनि या अन्य कोई पापग्रह बैठा हो और विशेष कर नीच हो अथवा शत्रुगृही हो अथवा नीचवर्ग का हो तो भी भर्त्ता के लिये अनिष्टकारी होता है। यदि वर की कुंडली में द्वितीय और सप्तम स्थानों में पापग्रह हो तो भी स्त्री–हन्ता योग होता है। अभिप्राय यह है कि यदि कन्या की कुंडली में कुजदोष अथवा शनिदोष हो तो उस का विवाह कुजदोष या शनिदोष वाले वर के साथ (यदि और सब वर्ग इत्यादि ठीक हों) किया जा सकता है। डॉक्टर हेनीमन क्तण् भैदमउंद का कथन ;सपाम बनतेमे सपामद्ध विषस्य विषमौषधम्, ऐसे स्थान पर लागू होता है। यथा–'जातक पारिजात' के अनुसार लिखा हैः–फ्तादृशयोगजदारयुतश्चेज्जीवति पुत्रधनादियुतश्च।

(14) यदि कन्या की जन्मराशि वर के सप्तमस्थितराशि की न हो, अथवा सप्तमेश जिस राशि में हो उसके त्रिकोण वाली राशि की भी न हो तो ऐसे वर कन्या के विवाह से पुत्रभाव क्लेशित होता है।

(15) यदि पुरूष की कुण्डली की षष्ठ अथवा अष्टमगत–राशि में कन्या का जन्म हो तो भी परस्पर मैत्री नहीं होती पर द्वादशगतराशि होने से विशेष अनिष्ट नहीं होता है।

स्त्री–संख्या विचार

(1) सप्तम में बृहस्पति और बुध के रहने से एक स्त्री होती है।

(2) सप्तम स्थान में मंगल तथा रवि रहे तो प्रायः एक स्त्री होती है।

(3) लग्नाधिपति तथा सप्तमाधिपति इन दोनों ही के लग्न में अथवा सप्तम में रहने से दो स्त्रिया होती हैं। यदि द्वितीयेश और सप्तमेश दोनों स्वगृही हों तो जातक का एक विवाह होता है।

(4) यदि सप्तमेश और द्वितीयेश शुक्र के साथ अथवा पापग्रह के साथ होकर ..... स्थान में हो तो एक स्त्री की मृत्यु के बाद दूसरी स्त्री होती जायेगी और संख्या का विचार उतना ही होगा जितना ग्रह सप्तमेश और द्वितीयेश के साथ होंगे। परन्तु यदि द्वितीयेश और सप्तमेश उच्च हों अथवा अच्छे वर्ग के हों तो केवल एक ही विवाह होगा। यदि द्वितीयेश और सप्तमेश स्वगृही हों तो एक विवाह होगा।

(5) यदि सप्तम अथवा अष्टम स्थान में पापग्रह और मंगल द्वादश भाव में हो तथा द्वादशेश अदृश्य–चक्रद्धि में हो तो जातक का द्वितीय विवाह अवश्य होगा।

(6) यदि लग्न, सप्तम स्थान और चन्द्रलग्न, ये तीनों द्विस्वभाव राशि हों तो जातक को दो स्त्रियाँ होंगी। इसी प्रकार लग्नेश, सप्तमेश, चन्द्रलग्नेश तथा शुक्र द्विस्वभाव राशि में हों तो भी जातक की दो स्त्रियाँ होगी।

(7) यदि लग्नेश द्वादशगत और द्वितीयेश पापग्रह के साथ तथा सप्तम स्थान में पापग्रह बैठा हो तो जातक की दो स्त्रियाँ होंगी।

(8) यदि सप्तमेश शुभग्रहों के साथ होकर ..... स्थान में बैठा हो और सप्तम में पापग्रह हो तो जातक के दो विवाह हेंगे।

(9) लग्नाधिपति उच्च, वक्री मूलत्रिकोणस्थ अथवा अच्छे वर्ग का हो और यदि लग्न में बैठा हो तो उस जातक की बहुत स्त्रियाँ होंगी। परन्तु यदि लग्नेश अष्टम वा द्वादश गत हो तो उसके दो विवाह होंगे।

(10) यदि सप्तम स्थान क्रूर राशि हो और सप्तमेश नीच राशिगत हो तथा सप्तम स्थान में पापग्रह हो तो जातक के दो विवाह होंगे।

(11) यदि शुक्र पापग्रह के साथ हो अथवा नीच हो अथवा नीच नवाँश का हो और पापग्रह की दृष्टि हो तो जातक के दो विवाह होंगे।

(12) यदि सप्तम स्थान अथवा द्वितीय स्थान में पापग्रह हो या पापग्रह की दृष्टि हो और सप्तमेश निर्बल हो अथवा द्वितीयेश निर्बल हो तो भी दूसरा विवाह होता है।

(13) यदि मंगल सप्तमस्थानगत हो अथवा अष्टमस्थ हो अथवा द्वादशस्थ हो और सप्तमेश की दृष्टि न हो तो जातक का दूसरा विवाह होता है।

(14) यदि बहुत से पापग्रह द्वितीय अथवा सप्तम स्थान में हों अथवा द्वितीयेश और सप्तमेश

पर पापग्रह की दृष्टि हो तो जातक के तीन विवाह होंगे।

(15) यदि लग्न में अथाव द्वितीय में अथवा सप्तम में कोई एक पापग्रह बैठा हो और सप्तमेश नीच हो अथवा अस्त हो तो जातक की तीन स्त्रियाँ होंगी।

(16) यदि सप्तमेश और एकादशेश एक साथ हों अथवा उन दोनों में अन्योन्य दृष्टि हो और त्रिशांश में हो तो जातक की एक से अधिक स्त्रियाँ होंगी।

(17) यदि नवमेश सप्तमगत हो और सप्तमेश चतुर्थगत हो अथवा सप्तमेश और एकादशेश केन्द्रगत हो तो इन दोनों योगों में भी बहुजाया योग होता है।

(18) चन्द्रमा और शुक्र के सप्तम में रहने से बहुपत्नी वा बहुवल्लभायोग होता है।

(19) यदि बृहस्पति अपने मित्र नवाँश का हो तो एक ही विवाह होता है। यदि बृहस्पति अपने नवाँश अर्थात् धन या मीन नवाँश का हो तो दो अथवा तीन स्त्री का योग होता है। इसी प्रकार यदि बृहस्पति अपने उच्च नवाँश का हो तो जातक को बहुस्त्रीयोग होता है।

(20) दशम स्थान का स्वामी और दशम स्थान के स्वामी का नवाँशेश, ये दोनों यदि शनि के साथ हों और उसके साथ यदि षष्ठेश भी हो अथवा उन सब पर षष्ठेश की दृष्टि हो तो इसको बहुदारायोग होता है।

(21) यदि लग्नेश, सप्तमेश, चन्द्रलग्नेश अथवा शुक्र उच्च के हों तो जातक को बहुस्त्रीयोग होता है। गौण रीति से सप्तम स्थान में अथवा शुक्र के साथ अथवा सप्तमेश के साथ अथवा द्वितीयेश के साथ जिसने ग्रह हों उतनी ही संख्या कही जाती है। परन्तु यदि सप्तम स्थान में अथवा शुक्र के साथ कोई स्वगृही अथवा उच्च ग्रह हो तो स्त्री–संख्या में उस ग्रह की संख्या नहीं लेनी होती है। यदि मेष लग्न का जन्म हो और शुक्र द्वितीयस्थ हो तो वैसे स्थान में शुक्र के साथ जितने ग्रह होंगे उतनी स्त्रियाँ होंगी और यह भी सम्भव है कि उसकी स्त्री की संख्या उतनी ही होगी जितने ग्रह शुक्र के साथ हों और सप्तमस्थ हों।

(22) यदि सप्तमेश बलवान अथवा उच्च अथवा वक्री होकर लग्नगत हो तो भी जातक को बहुस्त्रीयोग होता है।

(23) यदि बली बुध लग्नेश से दशमस्थ हो और चन्द्रमा लग्न से तृतीय अथवा सप्तमस्थ हो तो जातक स्त्री–समूह से घिरा रहेगा।

(24)यदि द्वितीयेश एवं द्वादशेश तृतीयस्थ हों और पापदृष्ट हों अथवा नवमेश से दृष्ट हों तो बाहुजायायोग का अनुमार करना होगा।

(25) यदि सप्तमेश केन्द्र वा त्रिकोण में हो और उच्चवर्ग का हो अथवा स्वगृही अथवा मित्रगृही अथवा दशमेश के साथ हो तो भी बहुस्त्रीयोग जानना चाहिए। यदि नवमेश सप्तमगत हो, सप्तमेश चतुर्थगत हो और लग्नेश अथवा एकादशेश केन्द्रगत हो तो जातक का कई विवाह होना सम्भव है।

(26) लग्न से द्वादश स्थान के पदलग्न को उपपद कहते हैं। यदि उपपद से द्वितीय स्थान में उच्चग्रह स्थित हो, अथवा वह स्थान उच्च नवाँश का हो तो उस मनुष्य की बहुत स्त्रियाँ होती हैं। इसी प्रकार उपपद से द्वितीय स्थान में मिथुन राशि रहने से भी एक से अधिक

स्त्रियाँ होती हैं।

(27) यदि सप्तमेश दशमगत हो और दशमेश सप्तमगत हो तथा द्वितीयेश सप्तमस्थ अथवा दशमस्थ हो तो ऐसे जातक की स्त्री–संख्या का प्रमाण कठिन होगा।

(28) यदि लग्नेश दशमस्थ हो और उसके साथ बली बुध बैठा हो तथा सप्तमेश चन्द्रमा के साथ तृतीय भावगत हो तो ऐसा मनुष्य स्त्रियों का शिकार बन कर ही जीवन व्यतीत करता है।

(29) साधारण, परन्तु लागू रहस्य यह है कि शुक्र यदि द्विस्वभाव राशिगत हो तो प्रायः एक से अधिक विवाह होता है। यदि सप्तमस्थान वा शुक्र अन्य किसी प्रकार से पीड़ित भी हो तो अवश्य ही एक से अधिक विवाह होता है।

(30) यदि सप्तमस्थान में कोई क्लीब ग्रह हो और एकादश स्थान में दो ग्रह बैठे हो तो ऐसे जातक की एक स्त्री के जीवनकाल ही में दूसरी स्त्री भी होती है।

(31) यदि सप्तमेश और शुक्र द्विस्वभाव राशिगत हो अथवा द्विस्वभाव अंश में हो तो ऐसे जातक की भी दो स्त्रियाँ होती हैं। 'फलदीपिका' में 'जाया द्वयम् स्यात्' लिखा है।

2.3.3 विवाह–समय

(1) लग्नेश और सप्तमेश के स्फुट को जोड़ देने से कोई राश्यादि आवेगी। उस राश्यादि में जब गोचर का बृहस्पति आ जायेगा तो उसी समय जातक का विवाह सम्भव होगा। परन्तु स्मरण रहे कि ऐसा योग अनेक बार आयेगा। अतः देश, काल और समाज की बातों पर ध्यान देकर विचार करना होगा।

(2) जन्म समय का चन्द्रमा जिस राशि में हो उसके स्वामी के स्फुट को अष्टमेश के स्फुट में जोड़ दिया जाय और उस योगफल वाली राश्यादि में जब गोचर का बृहस्पति आता है तो उस समय विवाह होना सम्भव है।

(3) सप्तमेश जिस राशि और नवांश में हो, उन दोनों के स्वामी में से जो बली हो उसके दशा–काल में जब गोचर का बृहस्पति, सप्तमेश–स्थित–राशि के त्रिकोण में जाता है तो विवाह सम्भव होता है। तात्पर्य यह है कि पहले सप्तमेश जानना होगा। तब यह देखना होगा कि सप्तमेश किस राशि में बैठा है और उसका स्वामी कौन है। दूसरी बात यह देखनी होगी कि सप्तमेश ग्रह किस नवांश में है और उसका स्वामी कौन है। जब ये दो ग्रह मिल जाए तो देखना होगा कि उनमें से कौन बली है। उसी बलीग्रह की दशा में विवाह होना सम्भव होता है। यदि उपर्युक्त नियम में दोनों ग्रह एक ही हो जाय तो बलाबल झंझट मिट जायेगा। गोचर के बृहस्पति को यों देखना होगा की सप्तमेश जिस राशि का हो उस राशि से त्रिकोण में (अथवा सप्तमेश जिस नवांश का हो उस नवांश से त्रिकोण में) जब बृहस्पति जाता है और वह समय यदि ऊपर लिखी हुई दशा के अन्तर में पड़ता हो तो विवाह सम्भव होता है।

(4) एक विधि यह भी है कि शुक्र और चन्द्रमा में जो बली हो उस बली ग्रह की महादशा में जब बृहस्पति का उपर्युक्त गोचर होता है तो वह समय भी विवाह का होता है।

(5) (फलदीपिका) के अनुसार, (1) जब लग्नेश गोचरानुसार सप्तमस्थराशि में जाता है। (2) जब गोचर का शुक्र वा सप्तमेश लग्नेश की राशि वा लग्नेश के नवांश से त्रिकोण में जाता हो (3) अथवा सप्तमस्थ ग्रह वा सप्तमस्थ ग्रह वा सप्तम पर दृष्टि डालने वाले ग्रह की दशा में विवाह सम्भव होता है।

(6) यदि सप्तमेश शुक्र के साथ बैठा हो तो सप्तमेश की दशा वा अन्तरदशा में विवाह सम्भव होता है। यदि वह किसी कारण से असम्भव पड़ता हो तो द्वितीयेश जिस राशि में बैठा हो उस राशि के स्वामी की दशा वा अन्तरदशा में विवाह सम्भव कहना चाहिए। यदि यह भी किसी कारण से असम्भव पड़ता हो तो दशमेश और नवमेश की दशा वा अन्तरदशा में भी विवाह होना सम्भव कहना चाहिए। यदि यह भी किसी कारण से असम्भव हो तो सप्तमेश के साथ जो ग्रह बैठा हो या सप्मत स्थान में जो ग्रह बैठा हो उन ग्रहों की दशाअन्तरदशा में भी विवाह होना चाहिए।

(7) शुक्र, चन्द्रमा और लग्न से सप्तमाधिपति की दशा में भी विवाह होना सम्भव होता है।

(8) विवाह का समय निश्चित करने में बड़ी सावधानी की आवश्यकता है। उपर्युक्त कई नियमों से यदि मान लिया जाय कि किसी नियम के अनुसार विवाह उस समय पड़ता हो जब जाति, कुल और देश के नियम से विवाह करना मूर्खता का परिचय दे तो वैसे स्थान में दूसरी रीति का अनुसरण करना होगा।

(9) उस स्थान में विचारना है कि उपर्युक्त दशा इत्याति में विवाह का होना दशा के आदि, अन्त वा मध्य में सम्भव होगा। इसका नियम यह है कि यदि दशेश (अर्थात् उस ग्रह की दशा जिसमें विवाह होना सम्भव है) शुभग्रह हो, शुभ राशिगत हो तो दशा के आरम्भ ही में विवाह होना कहना चाहिए। यदि दशेश शुभग्रह हो परन्तु पाप–राशि–गत हो तो विवाह दशा के मध्य में कहना चाहिए और यदि दशेश पापग्रह हो और पाप–राशि–गत हो तो विवाह दशा के अन्त में कहना चाहिए। यदि दशेश पापग्रह हो परन्तु शुभराशि युक्त हो और उसके साथ शुभग्रह भी बैठा हो तो ऐसे स्थान में उस दशेश के किसी समय में विवाह होना कहना चाहिए।

(10) किसी आचार्य का यह भी मत है कि लग्नेश जिस नवांश में हो उसका अधिपति जिस राशि में हो उस राशि से द्वितीय स्थान में जब गोचर का चन्द्रमा और बृहस्पति आता है तो विवाह होना सम्भव होता है।

(11) मेष से गिनने के उपरान्त सप्तमस्थ राशि की संख्या जो हो (जैसे, कर्क, मीन, मेष इत्यादि) उस संख्या में यदि ... जोड़ दिया जाये, दो तत्संख्यक वर्ष में विवाह होना सम्भव है। जैसे कुण्डली में सप्तमस्थ मिथुन है जिसकी संख्या 3 हुई। ऐसे स्थान में कहा जायेगा कि उस जातक का ग्याहरवा वर्ष में विवाह सम्भव है। यथार्थ में इस जातक का प्रथम विवाह 11 वर्ष की अवस्था में हुआ था।

(12) यदि सप्तमेश और लग्नेश समीपवर्ती हो तो विवाह प्रायः कम अवस्था में ही हो जाता है। इसी प्रकार यदि लग्न के समीप अथवा सप्तमभाव के समीप कोई शुभग्रह हो तो भी

विवाह कम अवस्था ही में होता है।

(13) यदि लग्न में, द्वितीय अथवा सप्तम स्थान में कोई शुभग्रह हो और वह शुभवर्ग का हो तथा यदि लग्नेश, द्वितीयेश, सप्तमेश, शुभग्रह के साथ हो तो विवाह कम उम्र में ही होगा।

(14) यदि लग्न, द्वितीय और सप्तम में शुभग्रह बैठा हो अथवा शुभग्रह की दृष्टि हो तो कम उम्र में विवाह होता है।

(15) यदि सप्तमाधिपति बलवान होकर केन्द्र या त्रिकोणगत हो तो बाल्य–काल में ही विवाह होता है।

(16) यदि सप्तमेश पापग्रह के साथ होकर त्रिकोणगत हो और शुक्र भी पापग्रह के साथ हो तथा द्वितीयेश दशमगत हो तो विवाह अधिक उम्र में होता है। सारांश यह है कि लग्न, द्वितीय, सप्तम और शुक्र के पीड़ित होने से विवाह विलम्ब से होता है और शुभयुक्त वा दृष्ट होने से कम उम्र में होता है।

(17) इस विषय को निश्चित रीति एवं भली–भाँति जानने के लिये लेख कमत है कि सर्वप्रथम यह देखना होगा कि जातक विवाह योग है या नहीं। यदि विवाह योग है तो देखना होगा कि कतने विवाह सम्भव है। तत्पश्चात् यह देखना होगा कि विवाह कम उम्र में या अधिक उम्र में होने वाला है। अन्त में देखना होगा कि विवाह का समय कौन–सा होगा।

अभ्यास प्रश्न –

एक पंक्ति अथवा एक शब्द में उत्तर दें।

1. विवाह शब्द का क्या अर्थ हैं?
2. विवाह योग कब बनता हैं?
3. विवाह कितने प्रकार के होते हैं?
4. सप्तम भाव का कारक ग्रह कौन हैं?
5. शुक्र ग्रह विवाह का कारक हैं अथवा नहीं?
6. बृहस्पति विवाह का कारक हैं अथवा नहीं?
7. वैधव्य दोष कैसे भंग होता हैं?

किस दिशा में विवाह सम्भव है?

(1) शुक्र से सप्तमेश की जो दिशा हो उसी दिशा में प्रायः कन्या का घर होता है।

(2) यदि सप्तम स्थान में ग्रह हो तो उस स्थान की राशि की जो दिशा हो अथवा सप्तम स्थान पर जिन ग्रहों की दृष्टि पड़ती हो उन ग्रहों की राशिस्थ–दिशाओं में कन्या का घर होता है। यदि स्थिर राशि हो तो कन्या का घर वर के घर से विशेष दूर न होगा और यदि चर राशि हो तो वर के घर से कन्या का घर दूर होगा।

ज्येष्ठ विचार

यदि कन्या कनिष्ठ हो और वर ज्येष्ठ भी हो, तो भी दोनों का ज्येष्ठ में विवाह करना शुभप्रद है।

विवाह वर्ष विचार

जन्म से प्रथम 6 वर्ष तक कन्या का विवाह नहीं करना चाहिए, क्योंकि प्रथम 2 वर्ष तक चन्द्रभाग्या, तदनन्तर 2 वर्ष तक गन्धर्व भोग्या, तत्पश्चात् 2 वर्ष तक अग्निदेव की भोग्या होती है। इस के बाद ही उसका विवाह करना चाहिए।

आठ वर्ष की कन्या को गौरी, नौ वर्ष की कन्या रोहिणी, दस वर्ष की अवस्था में कन्या और बारह वर्ष की युवती को शूद्री कहा जाता है। गौरी दान से नागलोक की प्राप्ति, रोहिणी दान से वैकुण्ठ प्राप्ति, कन्यादान से ब्रह्मलोक की प्राप्ति और शूद्री दान से घोर नरक की प्राप्ति होती है।

स्त्री का विवाह जन्म से सम वर्ष में करने से पुत्र, पौत्र प्राप्ति तथा पुरूष का जन्म से विषम वर्ष में विवाह हो, तो लक्ष्मी प्राप्ति, अन्यथा मृत्यु होती है।

यदि कन्या 12 वर्ष की अवस्था में पिता के घर में रहे, तो पिता को ब्रह्महत्या जन्य दोष होता है। तत्पश्चात् कन्या का अधिकार है, कि वह अपनी इच्छा से पति का वरण कर ले, यह आचार्यों का मत है।

वर ज्येष्ठ या कन्या ज्येष्ठा या ज्येष्ठा मास हो, तो ऐसी दो ज्येष्ठ की अवस्था में विवाह करना मध्यम है। एक ज्येष्ठ में करना शुभ है और पुरूष ज्येष्ठ, स्त्री ज्येष्ठ, मांस ज्येष्ठ, इन तीनों की स्थिति में या अवस्था में विवाह करना वर्जित है।

ज्येष्ठ स्त्री, ज्येष्ठ पुरूष का परस्पर विवाह नहीं करना चाहिए। यदि विवाह हो, तो दोनों का नाश होता है।

दस वर्ष के पश्चात् कन्या शुद्धि रहित होती है, तो उसकी तारा शुद्धि और चन्द्र शुद्धि और लग्न शुद्धि को देखकर विवाह करने का उद्योग करना चाहिए।

गोत्र मिलान

सर्वप्रथम वर एवं वधु का गोत्र आदि का मिलान किया जाता है। गोत्र मिलान में ध्यान योग्य बात है कि वर एवं वधु के पिता का गोत्र एक नहीं होना चाहिए। विवाह में ऋषिगोत्र नहीं बल्कि कुलगोत्र जिसे अल्ल या अवंटक आदि भी कहा जाता है, वर्जित है। क्योंकि अवंटक किसी एक मूल कुल का द्योतक होता है। इसके विपरीत ऋषिगोत्र किसी एक कुल के सूचक न होने के कारण ऋषिगोत्र को मान्यता न मिलने का प्रमुख कारण है कि पंचगौड़, और पंचद्राविड़ ब्राह्मणों के दसों वर्गों और गौड़, आद्यगौड़, गुर्जरगौड़ अथवा दाधीच, पारीक, सारस्वत, रखववाल सनाढ़य आदि ब्राह्मण समाज ही क्यों अपितु गोत्रप्रर्वतक ऋषियों के शिष्यगण अर्थात् क्षत्रियों और वैश्यों के भी ऋषिगोत्र एक समान हैं। इसी बात को ध्यान में रखकर ऋषिगोत्र को न मानते हुए अवंटक या कुलगोत्र को ही वर्जित किया गया है। न कि ऋषिगोत्र को।

गोत्र या सपिण्डय के निर्णय के उपरान्त यह देख लिया जाता है कि लड़के व लड़की की जन्म कुण्डली मे कम से कम 22 गुण मिलते है और दोनों में किसी प्रकार की शारीरिक एवं मानसिक दोष नहीं है तो विवाह के विषय में विचार किया जा सकता है। वैसे भारतीय ज्योतिष अष्टकूटों में कम से कम 18 गुणों के मिलने पर विवाह की आज्ञा दे देता है परन्तु उसको सामान्य मिलान कहा जाता है और 18 से 22 गुणों के मिलने पर मध्यम मिलान कहा जाता है। 22 से 32 गुणों के मिलने पर उत्तम मिलान एवं उसके उपरान्त मिलान होने पर अत्युत्तम कहा जाता है। किन्तु भारतीय ज्योतिष 22 गुणों के मिलान वाली जन्मपत्री को मध्यम मिलान कहता है क्योंकि इससे नीचे गुणों की संख्या वाली जन्मपत्री वाले जातक या जातिका से विवाह सम्बन्ध अतिश्रेष्ठकर नहीं रहता। वर एवं कन्या के जन्मपत्रिका मिलान के उपरान्त सर्वप्रथम कन्या पक्ष की ओर से विवाह का प्रस्ताव रखने का विधान है। जब लड़की एवं लड़के के माता–पिता एवं परिवार वालों को यह प्रस्ताव स्वीकार हो जाता है, तो वाग्दान के रूप में इस प्रस्ताव को वैधानिक रूप दिया जाता है। विवाह का यह प्रस्ताव लड़की का भाई रखता है। यह इसलिए भी किया जाता है क्योंकि हमारे यहाँ विदेशों की परम्परा नहीं है कि विवाह ाहेने से पहले ही तलाक की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। भारतीय परम्परा तो सात जन्मों के बन्धन की बात करता है। इसलिए यह क्रम तो पीढ़ी दर पीढ़ी चलता है। अतः बाद में भाई को ही अपनी बहन के यहाँ भात भरना या मायरा पहनाना आदि सम्पन्न करने होते हैं। इस प्रकार से भाई के मन में अपनी बहन के भावली जीवन के प्रति अपना उत्तरदायित्व वहन करने की भावना रहती है।

अभ्यास प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. क्या वर एवं वधु के गोत्र एक होने पर विवाह किया जा सकता हैं?
2. भारतीय परम्परा में सर्वप्रथम विवाह का प्रस्ताव वर अथवा कन्या किस पक्ष से रखा जाता है?
3. विवाह में कितने गुण मिलने पर यह संस्कार मान्य होता हैं?
4. तीन ऋण कौन–कौन से है?
5. विवाह मिलान में गुणों को कितनी श्रेणियों में बाँटा हैं और कौन–कौन सी है?

गुरू–शुक्रास्तोदयविचार

पूर्वदिशा में शुक्र का उदय हो, तो तीन दिन बालपन और अस्त हो, तो वृद्धत्व–पन्द्रह दिन तथा पश्चिम में उदय हो, तो पाँच दिन बालपन और अस्त हो, तो दस दिन वृद्धत्व होते हैं, ये शुभ कर्म में वर्जित है। इसी तरह गुरू के उदयास्त में 14 दिन वर्जनीय हैं।

उदयास्त के लक्षण

शुक्र 240 दिन पूर्व दिशा में अस्त रहता है और वें दिन पश्चिम में उदय होता है। इसी तरह 240 दिन पश्चिम में अस्त और 241वें दिन पूर्व में उदय होता है। यह विद्वानों का कथन है।

अस्तकाल में वर्ज्य कर्म

बावड़ी, कूप, तडाग, यज्ञ, यात्रा, चौलकर्म, देवप्रतिष्ठा, यज्ञोपवीत, विद्यारम्भ, नूतन गृहप्रवेश, बालक का कर्णवेध, महादान, गुरूसेवा, तीर्थस्थान, विवाह आदि शुभ कर्म, मन्त्रोपदेश आदि जीने की इच्छा रखने वाला पुरूष गुरू व शुक्र के अस्त काल में, इन कर्मों को प्रथम–प्रथम नहीं ही करे।

विवाह में वर्ज्य मासादिकाल

आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद्, आश्विन्, पौष, चैत्र आदि मास, शुक्र व गुरू अस्त और इन दोनों का वृद्धत्व व बालत्व, सिंह राशिस्थ गुरू, अधिक मास, क्षयमास इत्यादि सभी विवाहादि शुभ कर्म में वर्जित रना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

सत्य और असत्य बताइए–

1. वर एवं वधु के 13 गुण मिलने पर विवाह किया जा सकता हैं (सत्य/असत्य)
2. 22 गुण मिलने पर मध्यम विवाह श्रेणी में आता है। (सत्य/असत्य)
3. 32 गुणों के मिलने पर विवाह सामान्य माना जाता हैं। (सत्य/असत्य)
4. ऋषि गोत्र में विवाह किया जा सकता हैं। (सत्य/असत्य)
5. कुलगोत्र में विवाह किया जा सकता हैं। (सत्य/असत्य)
6. ब्रह्मचर्याश्रम के बाद विवाह नहीं करना चाहिए। (सत्य/असत्य)
7. चन्द्र शुद्धि का विचार गोचर से नहीं किया जाता हैं। (सत्य/असत्य)

अभ्यास प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. विवाह किया जा सका है।
   (अ) (ब)
   (स) (द)
2. सप्तम भाव में शुभ माना जाता हैं।
   (अ) राहु (ब) केतु
   (स) शनि (द) शुक्र
3. विवाह का कारक भाव हैं।
   (अ) पंचम (ब) दशम
   (स) चतुर्थ (द) सप्तम

4. वैधव्य दोष होता है।
   (अ) सप्तम में पापग्रह (ब) सप्तम में शुभ ग्रह
   (स) पापग्रह एवं शुभ ग्रह (द) इनमें से कोई नहीं
5. विवाह के लिए गोत्र मिलान मान्य है।
   (अ) ऋषिगोत्र (ब) कुलगोत्र
   (स) ऋषि एवं कुल गोत्र (द) इनमें से कोई नहीं
6. शुभ ग्रह हैं।
   (अ) सूर्य, चन्द्र, मंगल (ब) गुरू, शुक्र, बुध
   (स) गुरू, चन्द्र, मंगल (द) चन्द्र, शुक्र, मंगल
7. विवाह का योग होता है।
   (अ) सप्तम भाव एवं शुक्र (ब) सप्तमेश एवं शुक्र
   (स) अष्टम भाव एवं लग्न (द) नवम भाव एवं षष्ठ

प्रश्नलग्न से अरिष्ट विचार

प्रश्न कुण्डली में यदि चन्द्र बलवान होकर प्रश्न लग्न से षष्ठ या अष्टम स्थान में हो, तो विवाह से अष्टम वर्ष में स्त्री–पुरूष दोनों को अरिष्ट कहना चाहिए।

यदि प्रश्न लग्न में चन्द्र हो और चन्द्र से सप्तम स्थान में मंगल हो, तो विवाह से अष्टम वर्ष में पति को अरिष्ट जानना चाहिए।

यदि प्रश्न लग्न में पापग्रह अपने नीच स्थान पर हो या शत्रुग्रह से दृष्ट हो या पापग्रह पंचम भाव गत हो, तो सन्तान नाश और स्त्री वेश्या हो, ऐसा समझना चाहिए।

जिस कन्या के विवाह के प्रसंग का प्रश्न हो, प्रश्न के समय अकस्मात् जलकुम्भ भंग हो या निद्रा नाश हो या आसन भंग हो, या पादुका भंग हो आदि अपशकुन से उस कन्या को विधवा योग है, जानना चाहिए।

मंगलदोष विचार

जिस स्त्री या पुरूष की जन्म कुण्डली में मंगल ..... आदि स्थानों में से जिस किसी स्थान में हो, तो वह स्त्री या पुरूष अपने पति या पत्नी का नाश करते हैं। ऐसे में निश्चयपूर्वक मंगली स्त्री का विवाह मंगला पुरूष से करना उचित है अथवा मंगली कन्या का विवाह किसी ऐसे पुरूष से करना चाहिए, जिसकी जन्म कुण्डली में ग्रह बलवान हों, आयुष्य योग प्रबल हो।

भौम–दोष परिहार

जिस स्त्री या पुरूष की जन्म कुण्डली में ..... आदि स्थानो में शनि स्थित हो, तो उस स्त्री या पुरूष को भौम दोष नहीं होता है।

असत्कूट विचार

स्त्री नक्षत्र से वर नक्षत्र निकट हो, तो अशुभः वर नक्षत्र से स्त्री नक्षत्र दूर हो, तो शुभ और यदि एक नक्षत्र या स्वामी एक हो, तो शुभ समझना चाहिए।

दुष्टकूटों का दान

अत्यावश्यक विवाह में वधु और वर के दुष्ट कूटादिकों की शान्ति के लिए दान के क्रम से षडष्टक में दो गाय; नवपंचम में रूपा सहित का से का पात्र, एक नाड़ी में गौ, द्विर्द्वादश में अन्न, सुवर्ण, वस्त्र आदि तथा ब्राह्मणों को भोजन कराना इत्यादि से दुष्ट कूटादिक दोषों का परिहार कहा गया है।

विवाहोक्त

नक्षत्रमूल, अनुराधा, हस्त, स्वाती, मघा, रेवती, रोहिणी, तीनों उत्तरा, मृगशिरा आदि नक्षत्र कन्या के विवाह में निर्दोष और शुभ कहे गए हैं।

2.4 सारांश

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप जान चूकें होंगे कि विवाह जीवन का महत्वपूर्ण अंग है। विवाह के उपरान्त व्यक्ति का पुर्नजन्म होता है। क्योंकि विवाह से पूर्व व्यक्ति किसी भी कार्यक्रम के संचालन में अथवा सम्पादन में अपने मन एवं स्वयं की बुद्धि का प्रयोग करता है, परन्तु पाणिग्रहण संस्कार के उपरान्त स्वयं के साथ–साथ अपने जीवनसाथी के विचारों को भावनाओं को भी साथ लेकर चलना होता है। तथापि षोडश संस्कारों में प्रत्येक संस्कार का मानव जीवन में अहम योगदान हैं, परन्तु आधुनिक युग में विवाह संस्कार को आमजन ने उल्लास एवं आनन्द का संस्कार मान रखा है जबकि यहाँ से व्यक्ति कई परिवारों से कई बन्धु–बान्धवों से स्वयं से जुड़ कर एक नये समाज का सृजन करता है। इसलिए प्रायः भारतीय परिवारों में संस्कारों का योगदान होने के कारण आज सम्पूर्ण विश्व की संस्कृति भारतीय संस्कृति के आगे नतमस्तक होकर खड़ी है। आपने मुख्य रूप से इस ईकाई में अध्ययन किया कि विवाह में गोत्र मिलान ऋषिगोत्र को मान्यता न देकर कुलगोत्र को माना गया है क्योंकि ऋषिगोत्र तो ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र चारों वर्णों के हो सकते है। अतः ऋषिगोत्र को नहीं अपनाया जा सकता हैं, इसलिए ऋषिगोत्र में तो विवाह हो सकता है परन्तु कुलगोत्र में विवाह नहीं किया जा सकता है। विवाह में मुख्य विषय है कुल एवं उनके पीढ़ी दर पीढ़ी की परम्परा के विषय में जानना। क्योंकि भारतीय परम्परा में विवाह एक जन्म या मास अथवा वर्ष भर के लिए अन्य देशों की तरह नहीं किया जाता जिसे कान्टैंक्ट मैरिज कहा जाता है। यहाँ तो यह संस्कार करने के उपरान्त अग्नि के समक्ष जन्म जन्मान्तरों तक सम्बन्ध बनाने की सौगन्ध खाया करते हैं। इसलिए ज्योतिष शास्त्र ग्रहों की दिशा एवं दशा दोनों को ध्यान में रखकर इस संस्कार को करने के लिए आज्ञा देता है। इस ईकाई के अध्ययन से आप विवाह संस्कार के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे एवं आधुनिक समाज में पनप रहीं कुरीतियों को दूर करने में अपना अहम योगदान देंगे।

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

1. फलदीपिका, व्याख्याकार– गोपेश कुमार ओझा (1971) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

2. कर्मठगुरूः, मुकुन्दबल्लभ रचित, (1972) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
3. क्यों (धर्म दिग्दर्शन पूर्वार्थ), स्वामी करपात्री जी महाराज रचित, (2067) माधव विद्या भवन श्रीधाम 140, पुरानी गुप्ता कालोनी दिल्ली–1
4. क्यों (धर्म दिग्दर्शन उत्तरार्ध)।
5. ताजिक–नीलकण्ठी, पं. सीताराम शर्माकृत (1112), चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी।
6. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द शास्त्री रचित, (2007) भारतीय ज्ञानपीठ 17 इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड नई दिल्ली–110003
7. संस्कार प्रकाश, डा. भवानी शंकर त्रिवेदी कृत, (1176) श्री लालबहादुरशास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ शहीद जीतसिंह मार्ग नई दिल्ली 110016
8. ज्योतिष–रत्नाकार, देवकीनन्दन सिंह, (1173) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
9. भारतीय ज्योतिष विज्ञान, डा. सुरकान्त झा कृत, 2006, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी के0 37/117 गोपाल मन्दिर लेन वाराणसी।
10. सन्तान सुख सर्वांग चिन्तन, मृदुलात्रिवेदी कृत, (1110) 24 महानगर विस्तार ई0–40 कारपोरेशन क्वार्टर के सामने पीली कालोनी लखनऊ 226006
11. मुहूर्त चिन्तामणि– गोविन्द दैवज्ञ विरचित (2005) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 35यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।
12. वृहद्पाराशर होराशास्त्र पं. पद्मनाभ शर्मा (2001) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 37यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।
13. वृहद्जातकम।

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. विवाह योग्य कन्या एवं विस्तार पूर्वक वर्ण करें?
2. वैधव्य (विधवा) योगों का वर्णन विस्तार पूर्वक करें?
3. कुम्भ विवाह का वर्णन करते हुए उसकी विशेषताओं पर प्रकाश डालें?
4. विष्णु प्रतिमा के साथ विवाह क्यों आवश्यक है?
5. कन्या वरण मुहूर्त के विषय में बतायें?
6. वर वरण मुहूर्त के विषय में बतायें?
7. विवाह के कौन–कौन से योग शुभ है? सविस्तार पूर्वक बतायें?

इकाई – 3 अष्टकूट मिलान एवं उसकी उपयोगिता

रूपरेखा –

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 मुख्य भाग खण्ड एक
1.3.1 उपखण्ड एक – विवाह किसे कहते है। उसकी क्या आवश्यकता हैं। समाजशास्त्रियों के विभिन्न मत
1.3.2 उपखण्ड दो – विवाह कितने हैं। और मनु जी ने कितने प्रकार के विवाहों को मान्यता प्रदान की है।
1.3.3 उपखण्ड तीन – भारतीय विवाह का स्वरूप क्या है। विस्तृत जानकारी
3.4 सारांश
3.5 पारिभाषिक शब्दावली
3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.7 सन्दर्भ ग्रंथो की सूची
3.8 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

भारतीय ज्योतिष में मेलापक का मुख्य उद्देश्य है कि दोनों वर एवं वधु में विवाह के उपरान्त मृत्यु पर्यन्त तक आपसी प्रेम एवं सदभाव बना रहे तथापि भारतीय ज्योतिष के पितामह महर्षि पाराशर के पाराशर होराशास्त्र का अध्ययन करें तो मिलान का उल्लेख कहीं पर प्राप्त नहीं होता। लेकिन पाराशर होराशास्त्र के अनन्तर हुए दैवज्ञों ने शोध करके यह निष्कर्ष निकाला है कि मिलान एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा पति एवं पत्नी दोनों के गुण दोषों को अच्छी तरह से अध्ययन करके उनके भावी जीवन के विषय में जाना जा सकता है। प्रस्तुत ईकाई में विस्तार से उनके विचार और उनके विचारों का विश्लेषण प्रस्तुत है।

3.2 उद्देश्य

मेलापक का उद्देश्य है कि वर एवं वधु दोनों के मध्य आपसी प्रेम सद्भाव एवं एक दूसरे के मध्य आदर–सत्कार की भावना तथा विचारों को मेल–जोल बना रहे। ज्योतिष शास्त्र का भविष्य की सूचक शास्त्र है। जीवन में प्रायः अपने जन्म जन्मान्तरों में किये कर्मों के फलस्वरूप सुख एवं दुख को प्राप्त करता है। जिसको दशा के माध्यम से जाना जाता है इसलिए कब जीवन का स्वर्णमयी युग आने वाला है और उसमें कष्टों का सामना करना पड़ेगा। यह सभी हम इस ईकाई में जान सकेंगे।

3.3 मुख्य भाग : खण्ड एक

यह पहले ही लिखा जा चुका है कि ज्योतिष शास्त्र–सूचक है। विवाह के पूर्व वर–कन्या की जन्मपत्रियों को मिलाने का आशय केवल परम्परा का निर्वाह नहीं है, किन्तु भावी दम्पति के स्वभाव, गुण, प्रेम और आचार–व्यवहार के सम्बन्ध में ज्ञात करना है। जब तक समान आचार–व्यवहार वाले वर–कन्या नहीं होते तब तक दाम्पत्यजीवन सुखमय नहीं हो सकता है। जन्मपत्रियों की मेलनपद्धति वर–कन्या के स्वभाव, रूप और गुणों को अभिव्यक्त करती है। भारतीय संस्कृति में प्रेमपूर्वक विवाह कल्याणकारी नहीं माना गया है किन्तु दो अपरिचित व्यक्तियों का जीवन–भर के लिए गठबन्धन कर दिया जाता है। यदि ऐसी परिस्थिति में उन दोनों के स्वभाव के बारे में सूचक ज्योतिष द्वारा कुछ जान लिया जाये तो अत्यन्त उपकार उन व्यक्तियों का हो सकता है। अतएव इस वैज्ञानिक मेलन–पद्धति की उपेक्षा करना नितान्त अनुचित है। ज्योतिष नक्षत्र, योग, ग्रह राशि आदि के तत्वों के आधार पर व्यक्ति के स्वभाव, गुण का निश्चय करता है। वह बतलाता है कि अमुक, नक्षत्र ग्रह व राशि के प्रभाव से उत्पन्न नारी के साथ सम्बन्ध करना अनुकूल है। या प्रभाव–शामक सामंजस्य के होने से दोनों के स्वभाव–गुण में समानता है। अतएव मेलन–पद्धति द्वारा वर–कन्या की जन्मपत्रियों का विचार करना चाहिए। यहाँ सर्वप्रथम ग्रह मिलाने की विधि लिखी जाती ह।

ज्योतिष शास्त्र में स्त्रीनाशक और पतिनाशक योग बताये गये हैं। जन्मकुण्डली में ..... वें भाव में पापग्रहों का होना पति या पत्नीनाशक कहा गया है। इन स्थानों में पुरूष की

कुंडली में मंगल होने से समंगल और स्त्री की कुंडली में मंगल होने से मंगली संज्ञक योग होते हैं। समंगल पुरूष का मंगली स्त्री के साथ सम्बन्ध करना ठीक कहा जाता है, इसी प्रकार मंगली स्त्री का समंगल पुरूष के साथ सम्बन्ध होना अच्छा होता है। ज्योतिष में उपर्युक्त स्थानों में स्थित मंगल सबसे अधिक दोषकारक, उससे कम शनि और शनि से कम अन्य पापग्रह बतायें गये हैं। इस योग को चन्द्रमा, शुक्र और सप्तमेश से भी देख लेना चाहिए। स्त्री की कुण्डली में सप्तम और अष्टम स्थान में शनि और मंगल इन दोनों का रहना बुरा माना है। सप्तमेश में अष्टमेश का एक साथ रहना पति या पत्नी की कुण्ड में अनिष्टकारी होता है। यदि यही योग दोनों की कुण्डली में हो तो अच्छा होता है।

ज्योतिष शास्त्र में एक मत यह है कि वर की कुण्डली में लग्न और शुक्र एवं कन्या की कुण्डली में लग्न व चन्द्रमा से .....वें स्थान के पापग्रहों का विचार करते हैं। वर व कन्या के अनिष्टकारी पापग्रहों की संख्या समान या कन्या से वर के ग्रहों की संख्या अधिक होनी चाहिए। कन्या का सातवाँ और आठवाँ स्थान विशेष रूप से देखना चाहिए।

वर की कुण्डली में लग्न से छठवें स्थान में मंगल, सातवें में राहु और आठवें में शनि हो तो भार्याहन्ता योग होता है, इसी प्रकार कन्या की कुण्डली में यही योग पतिहन्ता होता है।

सौभाग्य विचार–सप्तम में शुभग्रह हों तथा सप्तमेश शुभग्रहों से युत या दृष्ट हो तो सौभाग्य अच्छा होता है। अष्टम स्थान में शनि या मंगल का होना सौभाग्य को बिगाड़ता है। अष्टमेश स्वयं पापी हो या पापी ग्रहों से युत या दृष्ट हो तो सौभाग्य को खराब करता है। सौभाग्य का विचार वर व कन्या दोनों की कुण्डली में कर लेना चाहिए। यदि कन्या का सौभाग्य वर के सौभाग्य से यथार्थ न मिलता हो तो सम्बन्ध नहीं करना चाहिए।

कुण्डली मिलाने के अन्य नियम–

1. वर के सप्तम स्थान का स्वामी जिस राशि में हो, वही राशि कन्या की हो तो दाम्पत्य–जीवन सुखमय होता है।
2. यदि कन्या की राशि वर के सप्तमेश का उच्च स्थान हो तो दाम्पत्य–जीवन में प्रेम बढ़ता है। सन्तान की प्राप्ति और सुख होता है।
3. वर के सप्तमेश का नीच स्थान यदि कन्या की राशि हो तो भी वैवाहिक जीवन सुखी रहता है।
4. वर का शुक्र जिस राशि में हो, वही राशि यदि कन्या की हो तो विवाह कल्याणकारी होता है।
5. वर की सप्तमांश राशि यदि कन्या की राशि हो तो दाम्पत्य–जीवन सुखकारक होता है। सन्तान, ऐश्वर्य की वृद्धि होती है।
6. वर का लग्नेश जिस राशि में हो, वही राशि कन्या की हो या वर के चन्द्रलग्न से सप्तम स्थान में जो राशि हो वही राशि यदि कन्या की हो तो दाम्पत्न–जीवन प्रेम और सुखपूर्वक व्यतीत होता है।
7. वर की राशि से सप्तम स्थान पर जिन–जिन ग्रहों की दृष्टि हो, वे ग्रह जिन–जिन

राशियों में बैठे हों, उन राशियों में से कोई भी राशि कन्या की जन्मराशि हो तो दम्पती में अपूर्व प्रेम रहता है।

8. जिन कन्याओं की जन्मराशि वृष, सिंह, कन्या या वृश्चिक होती है, उनको सन्तान कम उत्पन्न होती है।

9. यदि पुरूष की जन्मकुण्डली की षष्ठ और अष्टम स्थान की राशि कन्या की जन्मराशि हो तो दम्पती में परस्पर कलह होता है।

10. वर–कन्या के जन्मलग्न और जन्मराशि तत्वों का विचार करना चाहिए। यदि दोनों की राशियों के एक ही तत्व हों तो मित्रता होती है। अभिप्राय है कि कन्या की जन्मराशि या जन्मलग्न जलतव वाली हो और वर की जन्मराशि या जन्मलग्न जल या पृथ्वी तत्व वाली हो तो मित्रता और प्रेम समझना चाहिए। तत्वों की मित्रता निम्न प्रकार हैः पृथ्वीतत्व की मित्रता जलतव के साथ, अग्नितत्व की मित्रता वायुतत्व के साथ तथा पृथ्वीतत्व की मित्रता अग्नितत्व के साथ होती है। जलतव की अग्नितत्व के साथ और जलतव की वायुतत्व के साथ शत्रुता होती है। तत्व के इस विचार को जन्मलग्न और जन्मराशि के साथ अवश्य देख लेना चाहिए।

11. वर–कन्या के लग्नेश राशीशों के तत्वों की मित्रता भी देख लेनी चाहिए। यदि दोनों के लग्नेश एक ही तत्व या मित्रतत्व के हों अथवा दोनों राशीश भी लग्नेश के समान एक ही तत्व या मित्रतत्व के हों तो दाम्पत्य जीवन दोनों का सुख शान्तिपूर्वक व्यतीत होता है। अन्यथा कलह, झगड़ा और अशान्ति रहती है।

12. वर और कन्या की कुण्डली में सन्तान भाव का विचार अवश्य करना चाहिए। ज्योतिष में लग्न को शरीर और चन्द्रमा को मन माना गया है। प्रेम मन से होता है, शरीर से नहीं। इसीलिए आचार्यों ने जन्मराशि से मेलापक विधि का ज्ञान करना बताया है। गुण–मिलान द्वारा वर और कन्या की प्रजनन शक्ति, स्वास्थ्य, विद्या एवं आर्थिक परिस्थिति का ज्ञान करना चाहिए। इस गुण मिलान–पद्धति में निम्न बातें है– 1. वर्ण, 2. वश्य, 3. तारा, 4. योनि, 5. ग्रहमैत्री, 6. गणमैत्री, 7. भकूट और 8. नाड़ी। इनमें एक–एक अधिक गुण माने गये हैं। अर्थात् वर्ण का 1, वश्य का 2, तारा का 3, योनि का 4, ग्रहमैत्री का 5, गणमैत्री का 6, भकूट का 7 और नाड़ी का 8 गुण होता है। इस प्रकार कुल 36 गुण होते हैं। इसमें कम से कम 18 गुण मिलने पर विवाह किया जा सकता है, परन्तु नाड़ी और भकूट के गुण अवश्य होने चाहिए इनके गुण बिना 18 गुणों में विवाह मंगलकारी नहीं माना जाता है।

वर्ण जानने की विधि–मीन, वृश्चिक और कर्क राशियाँ ब्राह्मण वर्ण हैं। मेष, सिंह और धनु क्षत्रिय वर्ण हैं। कन्या, वृष और मकर वैश्य वर्ण हैं। मिथुन, तुला, कुम्भ शूद्र वर्ण हैं। इस वर्ण–विचार में श्रेष्ठ वर्ण की कन्या त्याज्य होती है।

वर्ण ज्ञात करने का चक्र

वर्ण	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र
राशि	मीन, वृश्चिक, कर्क	मेष, सिंह, धनु	वृष,कन्या,मकर	मिथुन,तुला,कुम्भ

वर्ण गुण–बोधक चक्र

वर का वर्ण		ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र
कन्या का वर्ण	ब्राह्मण	1	0	0	0
	क्षत्रिय	1	1	0	0
	वैश्य	1	1	1	0
	शूद्र	1	1	1	1

पहले वर और कन्या की राशि ज्ञात करके वर्ण का ज्ञान करना चाहिए। उसके पश्चात् उक्त चक्र के अनुसार वर्ण का गुण ज्ञात करना चाहिए।

उदाहरण–इन्द्रमुती और चन्द्रवंश का वर्ण गुण ज्ञात करना हो तो इन्दुमती की वृष राशि हुई तथा वैश्य वर्ण हुआ और चन्द्रवंश की मीन राशि तथा ब्राह्मण वर्ण हुआ। मिलान किया तो एक गुण आया।

वश्य विचार– आधी मकर, मेष, सिंह, वृष और आधी धनु ये राशियाँ चतुष्पद संज्ञक हैं। वृश्चिक की सर्प संज्ञक है। तुला, मिथुन, कन्या और धनु का पहला भाग ये राशियाँ द्विपद संज्ञक हैं। कर्क राशि कीट संज्ञक है। मकर का उत्तरार्द्ध भाग, कुम्भ और मीन ये राशियाँ जलचर संज्ञक हैं।

वश्य गुण–बोधक चक्र

वर का वश्य		चतुष्पद	सर्प	द्विपद	कीट	जलचर
कन्या का वश्य	चतुष्पद	2 1	1	1/2	1	2
	सर्प	0 1	2	0	1	1
	द्विपद	1	0	2	0	1
	कीट		1	0	2	1
	जलचर		1	1	1	2

उदाहरण–पूर्वोक्त इन्दुमती की वृष राशि होने से चतुष्पद वश्य हुआ व चन्द्रवंश की मीन राशि होने से जलचर वश्य हुआ। अतः कोष्टक में मिलाने दो गुण आये।

तारा विचार – कन्या के नक्षत्र से वर के नक्षत्र तक गिने और वर के नक्षत्र से कन्या के नक्षत्र तक गिने, गिनने से जैसे आये उसमें अलग–अलग 1 का भाग देने पर जो आये शेष बचे उसको ही तारा जानना चाहिए। इन ताराओं के नाम के अनुसार ही इनके फल हैं।

3,5,7 (विपत, प्रव्यरि, वध) तारा अपने नाम के अनुसार ही अशुभ हैं। यदि दोनों प्रकार से मिलने पर तारा 3,5,7 न हो तो तारा शुभ होती है तथा उसे पूरे 3 अंक प्राप्त होते हैं।

तारा गुण–बोधक चक्र

		जन्म	संपत	विपत्	क्षेम	प्रत्यरि	साधक	वध	मित्र	अतिमित्र
वर का तारा		1	2	3	4	5	6	7	8	9
कन्या का तारा	1	3	3	1 | |	3	1 | |	3	1 | |	3	3
	2	3	3	1 | |	3	1 | |	3	1 | |	2 1 | |	3
	3	1 | |	1 | |	0	1 | |	0 1 | |	1 | |	0	3	1 | | 3
	4	3	3	1 | |	3	0	3	1 | |	1 | |	1 | |
	5	1 | |	1 | |	0	1 | |	1 | |	1 | |	0	3	3
	6	3	3	1 | |	3	0	3	1 | |	1 | |	1 | |
	7	1 | |	1 | |	0	1 | |	1 | |	1 | |	0	3	3 3
	8	3	3	1 | |	3	1 | |	3	1 | |	3	
	9	3	3	1 | |	3		3	1 | |		

उदाहरण–

इन्दुमती का कृत्तिका नक्षत्र है और चन्द्रवंश का रेवती नक्षत्र। कृत्तिका से रेवती तक गिनने से 25 संख्या आयी और रेवती से कृत्तिका तक गिनने से 4 संख्या आयी। इन दोनों 9 का भाग दिया तो पहले स्थान में 7 संख्या शेष बची। अतः 7वीं तारा कन्या हुई और दूसरी जगह 9 का भाग देने से चार शेष बचा। अतः वर की 4वीं तारा हुई। इन दोनों को उपर्युक्त कोष्ठक में मिलाने से 1।। गुण तारा का प्राप्त हुआ। इसी प्रकार सब जगह तारा मिला लेना चाहिए। यदि एक की तारा शुभ हो तो 1 अंक और दोनों तरह से गिनने पर तारा अशुभ आए तो 0 अंक।

योनि ज्ञान विधि–अश्विनी, शतभिषा की अश्व योनि; स्वाति, हस्त की महिष योनि; पूर्वाभाद्रपद, धनिष्ठा की सिंह योनि; भरणी, रेवती की गज योनि; कृत्तिका, पुष्प की मेष (मेढ़ा) योनि; श्रवण, पूर्वाषाढ़ा की वानर योनि; उत्तराषाढ़ा, अभिजित् की नकुल योनि; रोहिणी, मृगशिरा की सर्प योनि; ज्येष्ठा, अनुराधा की मृग योनि; मूल आद्रा की श्वान योनि; पुर्नवसु, आश्लेषा की बिलाव योनि; पूर्वाफाल्गुनी, मघा की मूषक योनि; विशाखा, चित्रा की व्याघ्र योनि और उत्तराफाल्गुनी तथा उत्तराभाद्रपद की गौ यानि होती है।

योनि गुण बोधक चक्र

योनि वर	अश्व	गज	मेष	सर्प	श्वान	बिलाव	मूषक	गौ	महिष	व्याघ्र	मृग	वानर	नकुल	सिंह
अश्व	4	2	3	2	2	3	3	3	0	1	3	2	2	1
गज	2	4	3	2	2	3	3	3	3	1	3	2	2	0
मेष	3	3	4	2	2	3	3	3	0	1	3	0	2	1
सर्प	2	2	2	4	2	1	1	2	2	2	2	1	0	2
श्वान	2	2	2	2	4	1	2	2	2	2	0	2	2	2
बिलाव	3	3	3	1	1	4	0	3	3	2	3	2	2	2
मूषक	3	3	3	1	2	0	4	3	3	2	3	2	1	1
गौ	3	3	3	2	2	3	3	4	3	0	3	2	2	1
महिष	0	3	3	2	2	3	3	3	4	1	1	2	2	1
व्याघ्र	1	1	1	2	2	2	2	1	1	4	1	2	2	1
मृग	3	3	3	2	0	3	2	3	3	1	4	2	2	3
वानर	2	2	0	1	2	2	2	2	2	2	2	4	2	2
नकुल	2	2	2	0	2	2	1	2	2	2	2	2	4	2
सिंह	1	0	1	2	2	2	2	1	1	2	1	2	2	4

उदाहरण–इन्दुमती का कृत्तिका नक्षत्र होने से सर्प योनि हुई और चन्द्रवंश का रेवती नक्षत्र होने से गज योनि हुई। मिलाने से दो गुण प्राप्त हुए। इसी प्रकार अन्य जगह भी मिला लेना चाहिए।

योनि वैर–ज्ञान विधि–गौ और व्याघ्र का, महिष और अश्व का, श्वान और मृग का, सिंह और गज का, वानर और मेष का, मूषक और बिलाव का, नकुल (नेवला) और सर्प का वैर होता है।

ग्रह–मैत्री–सूर्य के मंगल, बृहस्पति और चन्द्रमा मित्र, बुध सम, शुक्र और शनैश्चर शत्रु हैं। चन्द्रमा के बुध और सूर्य मित्र, मंगल, बृहस्पति और चन्द्रमा मित्र, बुध सम, शुक्र और शनि सम और शत्रु कोई नहीं है। मंगल के चन्द्रमा, बृहस्पति और सूर्य मित्र, बुध शत्रु, शुक्र और शनैश्चर सम है। बुध के शुक्र और सूर्य मित्र, चन्द्रमा शत्रु, बृहस्पति, शनैश्चर और मंगल सम हैं। बृहस्पति के सूर्य, मंगल और चन्द्रमा मित्र, बुध और शुक्र शत्रु तथा शनैश्चर सम

हैं। शुक्र के बुध व शनैश्चर मित्र, चन्द्रमा व सूर्य शत्रु तथा मंगल व बृहस्पति सम हैं। शनैश्चर के शुक्र व बुध मित्र, सूर्य, चन्द्रमा व मंगल शत्रु तथा बृहस्पति सम हैं।

ग्रह–मैत्री गुण–बोधक चक्र

योनि गुण–बोधक चक्र

	योनि वर	अश्व	गज	मेष	सर्प	श्वान	बिलाव	मूषक	गौ	महिष	व्याघ्र	मृग	वानर	नकुल	सिंह
योनि कन्या	अश्व	4	2	3	2	2	3	3	3	0	1	3	2	2	1
	गज	2	4	3	2	2	3	3	3	3	1	3	2	2	0
	मेष	3	3	4	2	2	3	3	3	0	1	3	0	2	1
	सर्प	2	2	2	4	2	1	1	2	2	2	2	1	0	2
	श्वान	2	2	2	2	4	1	2	2	2	2	0	2	2	2
	बिलाव	3	3	3	1	1	4	0	3	3	2	3	2	2	2
	मूषक	3	3	3	1	2	0	4	3	3	2	3	2	1	1
	गौ	3	3	3	2	2	3	3	4	3	0	3	2	2	1
	महिष	0	3	3	2	2	3	3	3	4	1	1	2	2	1
	व्याघ्र	1	1	1	2	2	2	2	1	1	4	1	2	2	1
	मृग	3	3	3	2	0	3	2	3	3	1	4	2	2	3
	वानर	2	2	0	1	2	2	2	2	2	2	2	4	2	2
	नकुल	2	2	2	0	2	2	1	2	2	2	2	2	4	2
	सिंह	1	0	1	2	2	2	2	1	1	2	1	2	2	4

उदाहरण–इन्दुमती का कृत्तिका नक्षत्र होने से सर्प योनि हुई और चन्द्रवंश का रेवती नक्षत्र होने से गज योनि हुई। मिलाने से दो गुण प्राप्त हुए। इसी प्रकार अन्य जगह भी मिला लेना चाहिए।

योनि वैर–ज्ञान विधि–गौ और व्याघ्र का, महिष और अश्व का, श्वान और मृग का, सिंह और गज का, वानर और मेष का, मूषक और बिलाव का, नकुल (नेवला) और सर्प का वैर होता है।

ग्रह–मैत्री–सूर्य के मंगल, बृहस्पति और चन्द्रमा मित्र, बुध सम, शुक्र और शनैश्चर शत्रु हैं। चन्द्रमा के बुध और सूर्य मित्र, मंगल, बृहस्पति, शुक्र और शनि सम और शत्रु कोई नहीं है। मंगल के चन्द्रमा, बृहस्पति और सूर्य मित्र, बुध शत्रु, शुक्र और शनैश्चर सम है। बुध के शुक्र और सूर्य मित्र, चन्द्रमा शत्रु, बृहस्पति, शनैश्चर और मंगल सम हैं। बृहस्पति के सूर्य, मंगल और चन्द्रमा मित्र, बुध और शुक्र शत्रु तथा शनैश्चर सम हैं। शुक्र के बुध व शनैश्चर मित्र, चन्द्रमा व सूर्य शत्रु तथा मंगल व बृहस्पति सम हैं। शनैश्चर के शुक्र व बुध मित्र, सूर्य, चन्द्रमा व मंगल शत्रु तथा बृहस्पति सम हैं।

ग्रह–मैत्री गुण–बोधक चक्र

वर का राशि–स्वामी		सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	ग्रह
कन्या का राशि स्वामी	सूर्य	5	5	5	4	5	0	0	गुण विवरण
	चन्द्र	5	5	4	1	4	||	||	
	मंगल	5	4	5	||	5	3	||	
	बुध	4	1	||	5	||	5	4	
	गुरू	5	4	5	||	5	||	3	
	शुक्र	0	||	3	5	||	5	5	
	शनि	0	||	||	4	3	5	5	

उदाहरण–इन्दुमती की वृष राशि होने से, राशि–स्वामी शुक्र हुआ व चन्द्रवंश की मीन राशि होने से राशि–स्वामी गुरू हुआ। अतः उपर्युक्त कोष्ठक में वर व कन्या के राशि स्वामियों को मिलाने से 1/2 गुण आया। इसी प्रकार सर्वत्र ग्रहमैत्री गुण को मिलाना चाहिए।

गण जानने की विधि–मघा, आश्लेषा, धनिष्ठा, ज्येष्ठा, मूल, शतभिषा, कृत्तिका, चित्रा, और विशाखा–ये नक्षत्र राक्षसगण, तीनों पूर्वा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, भरणी, और आर्द्रा–ये नक्षत्र मनुष्यगण और अनुराधा, पुर्नवसु मृगशिरा, श्रवण, रेवती, स्वाती, हस्त, अश्विनी और पुष्प–ये नक्षत्र देवतागण संज्ञक हैं।

गणज्ञान–बोधक चक्र

राक्षस	मघा	आश्लेषा	धनिष्ठा	ज्येष्ठा	मूल	शतमिषा	कृत्तिका	चित्रा	विशाखा
मनुष्य	पूर्वा भाद्रपद	पूर्वा षाढ़ा	पूर्वा फाल्गुनी	उत्तरा भाद्रपद	उत्तरा षाढ़ा	उत्तरा फाल्गुनी	रोहिणी	भरणी	आर्द्रा
देवता	अनुराधा	पुनर्वसु	मृगशिरा	श्रवण	रेवती	स्वाती	हस्त	अश्विनी	पुष्य

गण गुण–बोधक चक्र

गण वर		देवता	मनुष्य	राक्षस
गण कन्या	देवता	5	5	1
	मनुष्य	6	6	0
	राक्षस	0	0	6

उदाहरण–इन्दुमती का कृत्तिका नक्षत्र होने से राक्षस गण हुआ और चन्द्रवंश का रेवती नक्षत्र होने से देवगण हुआ। उपर्युक्त कोष्ठक में वर और कन्या के गण को मिलाने से शून्य गण आया। इसी प्रकार अन्यत्र भी गण मिलाना चाहिए।

भकूट जानने की विधि और इसका फल–कन्या की जन्मराशि से वर की जन्मराशि तक गिनना चाहिए तथा इसी प्रकार वर की जन्मराशि से कन्या की जन्मराशि तक भी गिनना चाहिए। यदि गिनने से दोनों की राशि छठी और आठवीं हो तो दोनों की मृत्यु, नवमी और पाँचवीं हो तो सन्तान की हानि तथा दूसरी और बारहवीं हो तो निर्धन होते हैं। इससे भिन्न राशियों में दोनों सुखी रहते हैं।

भकूट गुण–बोधक चक्र

वर की राशि		मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
कन्या की राशि	मेष	7	0	7	7	0	0	7	0	0	7	7	0
	वृष	0	7	0	7	7	0	0	7	0	0	7	7
	मिथुन	7	0	7	0	7	7	0	0	7	0	0	7
	कर्क	7	7	0	7	0	7	7	0	0	7	0	0
	सिंह	0	0	7	0	7	0	7	7	0	0	7	0
	कन्या	0	0	7	7	0	7	0	7	7	0	0	7
	तुला	7	0	0	7	7	0	7	0	7	7	0	0
	वृश्चिक	0	7	0	0	7	7	0	7	0	7	7	0
	धनु	0	0	7	0	0	7	7	0	7	0	7	7
	मकर	7	0	0	7	0	0	7	7	0	7	0	7
	कुम्भ	7	7	0	0	7	0	0	7	7	0	7	0
	मीन	0	7	7	0	0	7	0	0	7	7	0	7

उदाहरण–इन्दुमती की वृष राशि और चन्द्रवंश की मीन राशि है। इनको कोष्ठक में मिलाया तो 7 गुण भकूट का हुआ। इसी प्रकार अन्यत्र भी भकूट मिलाना चाहिए।

नाड़ी जानने की विधि–ज्येष्ठा, मूल, आर्द्रा, पुनर्वसु, शतमिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, अश्विनी नक्षत्रों की आदि नाड़ी, मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, भरणी, धनिष्ठा, पूर्वाषाढ़ा, पुष्प, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद नक्षत्रों की मध्य नाड़ी व स्वाति, विशाखा, कृत्तिका, रोहिणी, आश्लेषा, मघा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, रेवती नक्षत्रों की अन्त्य नाड़ी होती है।

नाड़ी ज्ञान–बोधक चक्र

आदि नाड़ी	अश्विनी	आर्द्रा	पुनर्वसु	उत्तरा फाल्गुनी	हस्त	ज्येष्ठा	मूल	शतभिषा	पूर्वा भाद्रपद
मध्य नाड़ी	भरणी	मृगशिरा	पुष्य	पूर्वा फाल्गुनी	चित्रा	अनुराधा	पूर्वा षाढ़ा	धनिष्ठा	उत्तरा भाद्रपद
अन्त्य नाड़ी	कृत्तिका	रोहिणी	आश्लेषा	मघा	स्वाति	विशाखा	उत्तरा षाढ़ा	श्रवण	रेवती

नाड़ी गुण–बोधक चक्र

उदाहरण–इन्दुमती का कृत्तिका नक्षत्र और चन्द्रवंश का रेवती नक्षत्र होने से दोनों की अन्त्य नाड़ी हुई। कोष्ठक में नाड़ी मिलायी तो शून्य गुण प्राप्त हुआ। इसी प्रकार अन्यत्र भी मिलान करें।

नाड़ी का फल–यदि आदि और अन्त्य नाड़ी के नक्षत्र वर और कन्या दोनों के हों तो विवाह अशुभ होता है। मध्य नाड़ी के नक्षत्र होने पर दोनों की मृत्यु होती है।

वर्ण–गण–योनि आदि बोधक चक्र

कुमारी इन्दुमती व कुमार चन्द्रवंश के गुण निम्न प्रकार हुए:

वर	गुण	कन्या	वर	गुण	कन्या
ब्राह्मण वर्ण	1	वैश्य वर्ण	राशीश गुरू	।।	राशीश शुक्र
जलचर वश्य	2	चतुष्पद वश्य	देवगण	0	राक्षसगण
चतुर्थी तारा	1।।	सातवीं तारा	मीनराशि (भकूट)	7	वृषराशि (भकूट)
गजयोनि	2	सर्पयोनि	अन्त्य नाड़ी	0	अन्त्य नाड़ी
	योग 6।।				योग 7।।

3.5 सारांश–

ईकाई संख्या तीन में आपने अध्ययन किया कि अष्टकूट क्या हैं? ज्योतिष शास्त्र में

अष्टकूटों का विशेष महत्व है। जिस प्रकार से आधुनिक चिकित्सा शास्त्र रक्त परीक्षण को मिलाने के उपरान्त विवाह करने के लिए उचित ठहराता है, लेकिन उसके उपरान्त भी यह निश्चित नहीं कि आपस में वर एवं कन्या सुखी–स्वास्थ्य, दीर्घायु एवं वैभव पूर्ण जीवन यापन कर सकें लेकिन भारतीय ज्योतिष इसे कसौटी पर 10006 आज भी खरा उतरती है। क्योंकि ज्योतिष शास्त्र के अनुसार किया गया विवाह संस्कार व्यक्ति के जीवन में मिलने वाले सभी पहलुओं पर विचार विमर्श करके विवाह सम्बन्ध की आज्ञा देता है। इसी विषय को लेकर आपने वर्ण, वश्य, तारा, योनि, ग्रह, मैत्री, नक्षत्र मिलान तथा नाड़ी विज्ञान के विषय में अध्ययन किया होगा। अष्टकूट मिलान की प्रमुख उपयोगिता व्यक्ति के जीवन में शारीरिक, मानसिक, धन, धर्म, आय–व्यय एवं परिवार में सुख–शान्ति, समृद्धि एवं भाग्य में अभिवृद्धि किस प्रकार से हो यही प्रमुख विषय है।

3.6 सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

1. फलदीपिका, व्याख्याकार– गोपेश कुमारओझा, (1181) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
2. कर्मठगुरूः, मुकुन्दबल्लभ रचित, (1182) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
3. क्यों (धर्म दिग्दर्शन पूर्वार्थ), स्वामि करपात्री जी महाराज रचित, (2068), माधव विद्या भवन श्रीधाम 150, पुरानी गुप्ता कालोनी दिल्ली–9
4. क्यों (धर्म दिग्दर्शन उत्तरार्ध)।
5. ताजिक–नीलकण्ठी, पं. सीताराम शर्माकृत, (1992) चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी।
6. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री रचित, (2008) भारतीय ज्ञानपीठ 18 इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नई दिल्ली–110016
7. संस्कार प्रकाश, डा. भवानी शंकर त्रिवेदी कृत, (1186), श्री लालबहादुरशास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ शहीद जीतसिंह मार्ग, नई दिल्ली 110016
8. ज्योतिष–रत्नाकार, देवकीनन्दन सिंह, (1183) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
9. भारतीय ज्योतिष विज्ञान, डा. सुरकान्त झा कृत, 2006, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी के0 37/118, गोपाल मन्दिर लेन वाराणसी।
10. सन्तान सुख सर्वांग चिन्तन, मृदुलात्रिवेदी कृत, (1110) 24 महानगर विस्तार ई0–40 कारपोरेशन क्वार्टर के सामने पीली कालोनी लखनऊ 226006
11. मुहूर्त चिन्तामणि– गोविन्द दैवज्ञ विरचित (2005) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।
12. वृहद्पाराशर होराशास्त्र पं. पद्मनाभ शर्मा (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।
13. वृहद्जातकम।

3.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. अष्टकूटों का वर्णन करते हुए वर्ण एवं वश्य कूट की विस्तृत व्याख्या करें।
2. नाड़ी दोष का उल्लेख करते हुए बतायें कि क्या ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यादि वर्णों को भी नाड़ी दोष हैं?
3. ग्रहमैत्री का उल्लेख करते हुए उसकी क्या आवश्यकता है?
4. ताराकूट का जीवन में क्या प्रयोजन है? स्पष्ट उल्लेख करें।
5. योनि कूट क्या है? स्पष्ट करें।
6. गणों का वर्णन करते हुए बताये कि सामान्य जीवन में उनकी क्या भूमिका है?

ईकाई – 4 दक्षिण भारतीय मिलान पद्धति एवं ग्रह मेलापक

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 जन्मनक्षत्रादि वर्णन
4.4 गुरू, चन्द्र और सूर्य के बल में विशेषता
4.5 अशुभ गुरू का परिहार
4.6 गुरू बल विचार
4.7 अष्ट मैत्रीकूट ज्ञान
4.8 ग्रह मेलापक
4.9 सारांश
4.10 शब्दावली
4.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.13 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

इस ईकाई में हमारा प्रमुख विषय है कि दक्षिण भारत की मिलान पद्धति में अन्तर तो सर्वप्रथम तो हम बता दें कि दक्षिण में लोकाचार तो भिन्न हो सकता है परन्तु वहाँ पर ज्योतिष शास्त्र में परिवर्तन देखने या कहने वाले ज्योतिषी शास्त्र के विषय में ज्ञान नहीं रखते होंगे क्योंकि उन्हीं नौ ग्रहों की कल्पना उत्तर भारत में की गई है। सर्वप्रथम ज्योतिष शास्त्र के प्रर्वतक का ताज महर्षि पाराशर हो जाता है और उन्हीं को पितामह के नाम की उपाधि भी दी गई है। कालान्तर में भले ही अन्य आचार्यों ने शोध–परिशोध करने के उपरान्त अपने विचार प्रस्तुत किये हों परन्तु ग्रह, राशियाँ, दृष्टियाँ, गुण–दोष, धर्म, प्रकृति सम्पूर्ण वही वर्णन जब आपको मिलेगा तो भेदभाव कैसा और मिलान में भिन्नता क्या होगी। अर्थात् कुछ भी नहीं, केवल अन्तर यदि आप देख सकते हैं, तो मात्र लग्न की स्थिति में जब आप बारह भावों का निर्माण करेंगे तो उसमें लग्न की स्थिति में भिन्नता अन्यथा सब का सब वही आपको पठन करने पर ज्ञात होगा।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान जायेंगे कि –

- दक्षिण भारतीय मिलन पद्धति क्या है।
- दक्षिण भारत में विवाह हेतु मिलान कैसे किया जाता है।
- ग्रह मेलापक क्या है।
- ग्रह मेलापक में क्या – क्या प्रमुख होता है।

4.3 मुख्य खण्ड

इससे पूर्व आप तीन ईकाईयों का अध्ययन कर चूके हैं जिनमें विवाह कितने प्रकार के होते हैं। विवाह के कारक कौन–कौन से ग्रह हैं जिनकी दशा, महादशा आने पर व्यक्ति के विवाह के योग बनते हैं। वर एवं कन्या के चुनाव में किन–किन बातों को विशेष रूप से देखा जाता है। ये सभी अहम बिन्दुओं पर आपे अध्ययन किया इस प्रकार आज हम चौथी ईकाई में पढ़ेंगे दक्षिण भारत में मिलान में कौन–कौन सी विधियों का प्रयोग किया जाता है। तथा ग्रहों का मिलान किस प्रकार से किया जाता है चूँकि दक्षिण भारत में भी वहीं पाँच ताराग्रह एवं दो छायाग्रहों का उल्लेख मिलता है, परन्तु वहाँ पर जिस प्रकार से राहुकाल को विशेष रूप से माना जाता है, ठीक उसी प्रकार से अष्टकूटों की संख्या ग्रहों का मिलान उत्तर भारत की तरह ही है, परन्तु किंचित भिन्न होने के कारण उसमें भिन्नता दिखाई गई हैं।

मूल आदि नक्षत्र जन्म दोष

मूल नक्षत्र में उत्पन्न कन्या गुणों को नष्ट करने वाली होती है। श्लेषा में उत्पन्न कन्या व्यभिचारिणी होती है। विशाखा में देवर का नाश और ज्येष्ठा में अपने ज्येष्ठा (पति के बड़े भाई) का नाश करने वाली होती है।

जन्मनक्षत्रादि वर्णन

जन्म नक्षत्र, जन्म दिन, जन्म मास में उसी प्रकार शुभ कर्म वर्जित है, जिस प्रकार सधवा स्त्रियों का श्वेतवस्त्र धारण करना, उसी प्रकार ज्येष्ठ मास में ज्येष्ठ वर और कन्या का विवाह भी वर्जित करना चाहिए। कनिष्ठा कन्या, ज्येष्ठ वर या इसके विपरीत ज्येष्ठ कन्या, कनिष्ठ वर का ज्येष्ठ मास में विवाह शुभ जानें।

गुरू, चन्द्र और सूर्य के बल में विशेषता

स्त्रियों को गुरू का बल और पुरूषों को सूर्य का बल तथा दोनों को चन्द्रमा का बल श्रेष्ठ होता ह, ऐसा गर्ग मुनि ने कहा है।

गुरू बल विचार

कन्या की जन्म कुण्डली में लग्नस्थ बृहस्पति हो, तो विवाह के अनन्तर पुत्रों को नाश करने वाली होती है। लग्न से द्वितीय भाव में बृहस्पति हो, तो धनवती कन्या होती है। तृतीय में विधवा, चतुर्थ में व्यभिचारिणी, पंचम में पुत्रवती, षष्ठ में पतिनाश, सप्तम में सौभाग्यवती, अष्टम में पुत्रहीन, नवम में पतिप्रिया, दशम में पुत्र व पति नाश, एकादश में धनाढय, द्वादश में बाँझ कन्या होती है। इस प्रकार लग्नादि भावस्थ गुरू का फल जानें। कन्या के 2, 5, 7, 9, 11 भावों में गुरू हो तो शुभ और गुरू बल युक्त जानना चाहिए।

अशुभ गुरू का परिहार

जन्मस्थ, तृतीय, षष्ठ और दशम स्थान स्थित गुरू नेष्ट है, लेकिन पूजा या शान्ति कर्म कराने से शुभफलद हो जाते हैं। लेकिन चतुर्थ, अष्टम, द्वादशस्थ गुरू मृत्युकारक कहा गया है। अतः इसका विचार विवाह में अवश्य करें।

अष्ट मैत्रीकूट ज्ञान

वर्ण, वश्य, तारा, योनि, ग्रह, गण, भकूट, नाड़ी और मैत्री, ये आठ मैत्री कूटों को विवाह पूर्व वर व कन्या की कुण्डली मेलापन में विचार लेना चाहिए।

राशियों के वर्ण व वश्य का ज्ञान

अर्थ प्रायः स्पष्ट है। विशेषार्थ वर्ण–वश्य–स्वामी बोधक चक्र का अवलोकन करना चाहिए।

ताराबल ज्ञान

कन्या के नक्षत्र से वर के नक्षत्र तक जितनी नक्षत्र संख्या हो, उसमें 9 का भाग देने से यदि शेष तीन या सात हो, तो अशुभ और अन्य शुभ होते हैं। इसी प्रकार वर नक्षत्र से कन्या के नक्षत्र तक गिनकर, जितनी नक्षत्र संख्या हो, उसमें 9 का भाग देकर पूर्ववत् शुभाशुभ जानना चाहिए। योनि ज्ञान योनि वैर राशियों के स्वामी गणज्ञान अन्त्य नाड़ीज्ञान मध्य नाड़ीज्ञान आदि नाड़ीज्ञान बोध चक्र का अवलोकर करें।

वर्ण–वश्य–स्वामी बोधक चक्र

राशि	वर्ण	वश्य	स्वामी
मेष	क्षत्रिय	चतुष्पद	भौम
वृषभ	वैश्य	चतुष्पद	शुक्र
मिथुन	शूद्र	मानव	बुध
कर्क	विप्र	जनचर	चन्द्र
सिंह	क्षत्रिय	वनचर	श्रवि
कन्या	वैश्य	मनव	बुध
तुला	शूद्र	मानव	शुक्र
वृश्चिक	विप्र	कीटक	भौम
धन	क्षत्रिय	मानव	गुरू
मकर	वैश्य	जलचर	शनि
कुम्भ	शूद्र	मानव	शनि
मीन	विप्र	जलचर	गुरू

योनि–गण–नाड़ी बोध चक्र

नक्षत्र	योनि	वैरयोनि	गणः	नाड़ी
अश्विनी	अश्व	भैंस	देव	आद्य
भरणी	गज	सिंह	मनुष्य	मध्य
कृत्तिका	अजा	वानर	राक्षस	अन्त्य
रोहिणी	सर्प	नकुल	मनुष्य	अन्त्य
मृगशिरा	सर्प	नकुल	देव	मध्य
आर्द्रा	श्वान	हरिण	मनुष्य	आद्य
पुनर्वसु	मार्जार	मूसा	देव	आद्य
पुष्य	मेढ़ा	वानर	देव	मध्य
आश्लेषा	मार्जार	मूसा	राक्षस	अन्त्य
मघा	मूसा	मार्जार	राक्षस	अन्त्य
पूर्वाफाल्गुनी	मूसा	मार्जार	मनुष्य	अन्त्य
उत्तराफाल्गुनी	गौ	व्याघ्र	मनुष्य	आद्य
हस्त	भैंस	अश्व	देव	आद्य
चित्रा	व्याघ्र	गौ	राक्षस	मध्य
स्वाती	भैंस	अश्व	देव	अन्त्य
विशाखा	व्याघ्र	गौ	राक्षस	अन्त्य
अनुराधा	हरिण	श्वान	देव	मध्य
ज्येष्ठा	मृग	श्वान	राक्षस	आद्य

मूल	श्वान	हरिण	राक्षस	आद्य
पूर्वाषाढ़ा	वानर	मेढ़ा	मनुष्य	मध्य
उत्तराषाढ़ा	नकुल	सर्प	मनुष्य	अन्त्य
अभिजित्	नकुल	सर्प	मनुष्य	अन्त्य
श्रवण	वानर	मेढ़ा	देव	अन्त्य
धनिष्ठा	सिंह	गज	राक्षस	मध्य
शतभिणा	अश्व	भैंसा	राक्षस	आद्य
पूर्वाभाद्रपदा	सिंह	सिंह	मनुष्य	मध्य
उत्तराभाद्रपदा	पशु	व्याघ्र	मनुष्य	मध्य
रेवती	गज	सिंह	देव	अन्त्य

नक्षत्र व राशि का सम्बन्ध ज्ञान

भचक्र भागुं नक्षत्रं तत्संख्या सप्तविंशका।
तन्नक्षत्रे चतुःपादाः नवपादाः राश्चयुच्यते।।
अश्विनी भरणी च कृत्तिका पादमेकं मेषः।
कृत्तिका त्रयं रोहिणी मृगशिरार्द्धं वृषभः।।
मृगशिरार्द्धमार्द्रा पुनर्वसोः त्रयं मिथुनः।
पुनर्वसुपादमेकं पुष्याऽऽश्लेषान्तं कर्कटः।।
मघापूर्वोत्तराफाल्गुनी पादमेकं तु सिंहः।
उत्तराफाल्गुनी त्रयं हस्तचित्रार्द्धं तु कन्या।।
चित्रार्द्धं स्वाती विशाखा पादत्रयमेव तुला।
विशाखा पादैकमनुराधा ज्येष्ठान्तं वृश्चिकः।।
मूलं पूर्वोत्तराषाढ़ापादमेकमिति धनुः।
उत्तरात्रयं श्रवणं धनिष्ठार्द्धं च मकरः।।
धनिष्ठार्द्धं शतमिषा पूर्वापादत्रयं कुम्भः।
पूर्वाभाद्रपादैकमुत्तरारेवत्यन्तं मीनः।।

प्रत्येक नक्षत्र में चार पाद माने गये हैं और नौ पाद यानि सवा दो नक्षत्र की एक राशि का भोग होता है। इस प्रकार मेष राशि में अश्विनी, भरणी के चार–चार पाद और कृत्तिका का प्रथम पाद कुल नौ पाद होते हैं। शेष सभी श्लोक से स्पष्ट है।

नवपंचम योग

मीन राशि से नौवीं राशि वृश्चिक, वृश्चिक से पाँचवी राशि मीन, इस प्राकार कर्क से नौवीं मीन, मीन से पाँचवी कर्क, अन्यत्र भी कुम्भ–मिथुन, मकर कन्या आदि राशियों के बीच 'नवपंचक' योग होते है, जिसे हीन जानकर वर्जित करना चाहिए।

षडाष्टक योग

षडाष्टक योग शुभाशुभ भेद से दो प्रकार के होते हैं। प्रायः मेष–कन्या, तुला–मीन, मिथुन–वृश्चिक, मकर–सिंह, कर्क–कुम्भ, वृष–धनु, इन दो–दो राशियों के षडष्टक सम्बन्ध को 'मृत्युषडष्टक योग' कहा गया है, यह विवाहित में वर्जित है।

इसी तरह सिंह–मीन, तुला–वृष, कुम्भ–कन्या, मकर–मिथुन, मेष–वृश्चिक, धनु–कर्क, इन दो–दो राशियों के षडाष्टक को 'प्रीति षडाष्टक' कहा गया है। इसे शुभ योग माना जाता है।

मेलापक के समय वर–वधु के राशियों में अशुभ नवमपंचम, षडाष्टक आदि को वर्जित किया जाता है।

द्विर्द्वादश योग

मेष–मीन, वृष–मिथुन, कर्क–सिंह, तुला–कन्या, वृश्चिक–धनु, मकर–कुम्भ आदि दो–दो राशियाँ भी 'द्विर्द्वादश' अशुभ योग होने के कारण वर्जनीय हैं।

चतुर्थदशम–तृतीयैकादश–उभयसप्तम योग

उपरोक्त की तरह वर व वधु की राशियाँ परस्पर चतुर्थ–दशम, तृतीय–एकादश, उभय सम–सप्तक अथवा एक ही राशि हों, तो शुभ कहा गया है।

वश्यावश्य ज्ञान

सिंह को छोड़कर समस्त चतुष्पद मनुष्यों के वश्य हैं और जनजन्तु भक्ष्य हैं, वृश्चिक को छोड़कर सभी सिंह के वश्य हैं, शेष राशियों में भक्ष्या–भक्ष्य विचार करते हुए वश्यावश्य व्यवहार से निर्णय कर लेना चाहिए।

ग्रहों की मित्रत्व, समत्व और शत्रुत्व ज्ञान

शत्रु मन्दसितौ समक्ष शशिजो मित्राणि शेषारवे
स्तीक्ष्णांशुर्हिमरश्मिजश्र सुहृदौ शेषाः समाः शीतकोः।
जीवेन्दूष्णकराः कुजस्य सुहृदौ ज्ञो रिः सितार्की समौ
मित्रे सूर्यसितौ बुधस्य हिमगुः शत्रुः समाश्रापरे।।
सूरेः सौम्यसितावरी रविसुतो मध्यो परे त्वन्यथा
सौम्यार्की सुहृदौ समौ कुजगुरू शुक्रस्य शेषावरी।
शुक्रज्ञौ सुहृदौ समः सुरगुरूः सौरस्य त्वन्ये रवे–
र्ये प्रोक्ताः सुहृदस्त्रिकोणभवनात्ते मी मया मीर्त्तिताः।।

श्लोकार्थ स्पष्ट है। विशेष स्पष्टार्थ चक्र का अवलोकन करना चाहिए।

नाम	रवि	चन्द्र	भौम	बुध	गुरू	शुक्र	शनि
शत्रु	शनि शुक्र	0	बुध	चन्द्र	बुध शुक्र	सूर्य चन्द्र	रवि चन्द्र मंगल
सम	बुध	शुक्र गुरू भौम शनि	शुक्र शनि	भौम गुरू शनि	शनि	गुरू मंगल	गुरू
मित्र	चन्द्र गुरू मंगल	रवि बुध	चन्द्र गुरू सूर्य	सूर्य शुक्र	सूर्य चन्द्र मंगल	बुध शुक्र	बुध शुक्र

मार्तण्डमत से गुण मेलापन

1. वर्ण का गुण

दोनों का एक वर्ण अथवा वर का उच्च वर्ण हो, तो शुभ जानना चाहिए।। गुणज्ञान के लिए चक्र का अवलोकन करें।

2. वश्य का गुण

शत्रु और भक्ष्य में गुण शून्य (0) तक जाति में गुण 2, वश्य और वैर में गुण 1 वश्य और भक्ष्य में गुण आधा (1/2) लेना चाहिए। विशेषार्थ चक्र देखें।

वर्ण गुण स्पष्टार्थ चक्र–1

वर का वर्ण					
वधू का	वर्ण	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र
	ब्राह्मण	1	0	1	0
	क्षत्रिय	1	1	0	0
	वैश्य	1	1	0	0
	शूद्र	1	1	1	1

वश्य गुण स्पष्टार्थ चक्र 2

वश्य का गुण					
वश्य	चतुष्पद	मानव	जलचर	वनचर	कीट
चतुष्पद	2	| |	1	0	2
मानव	| |	2	0	0	0
जलचर	1	0	2	2	2
वनचर	0	0	2	2	0
कीटक	1	0	0	0	0

तारा का गुण

वर–वधु में एक का शुभ तारा और दूसरे का अशुभ तारा हो, तो गुण डेढ़, दोनों का एक ही तारा या शुभ तारा हो तो गुण तीन तथा दोनों का तारा अशुभ होने पर गुण शून्य जानना चाहिए। तारागुण मेलापनार्थ प्राचीन मुनियों ने इस प्रकार कहा है।

तारागुण ज्ञानार्थ चक्र–3

तारा	1	2	3	4	5	6	7	8	9
1	3	3	1 | |	3	1 | |	3	1 | |	3	3
2	3	3	1 | |	3	1 | |	3	1 | |	3	3
3	1 | |	1 | |	0	1 | |	0	1 | |	0	1 | |	1 | |
4	3	3	1 | |	3	1 | |	3	1 | |	3	3
5	1 | |	1 | |	0	1 | |	0	1 | |	0	1 | |	1 | |
6	3	3	1 | |	3	1 | |	3	1 | |	3	3
7	1 | |	1 | |	0	1 | |	0	1 | |	0	1 | |	1 | |

8	3	3	1	3	1	3	1	3	3
9	3	3	1	3	1	3	1	3	3

4. योनि का गुण

महावैर का गुण (0), दोनों की शत्रुता का गुण एक (1), अपने स्वभाव का गुण 2, दोनों की मित्रता का गुण 3, अतिमित्रता का गुण 4 जानना चाहिए।

5. ग्रह मैत्री का गुण

दोनों के राशि स्वामी ग्रह मित्र हो या एक ही ग्रह हो, तो 5 गुण, एक मित्र दूसरा सम हो, तो भी 4 गुण, दोनों सम हो, तो 3 गुण, एक मित्र दूसरा शत्रु हो, तो 1 गुण, एक सम दूसरा शत्रु हो, तो 1/2 गुण, दोनों शत्रु हो, तो 0 गुण लिया जाता है।

योनि गुण ज्ञानार्थ चक्र–4

	अ.	ग.	मे.	स.	श्वा.	मा.	मू.	गौ.	म.	व्या.	ह.	वा.	न.	सि.
अश्व	4	2	2	3	2	2	2	1	0	1	3	3	2	1
गज	2	4	3	3	2	2	2	2	3	1	2	3	2	0
मेष	2	3	4	2	1	2	1	3	3	1	2	0	3	1
सर्प	3	3	2	4	2	1	1	1	1	2	2	2	0	2
श्वान	2	2	1	2	4	2	1	2	2	1	0	2	1	1
मार्जर	2	2	2	2	2	4	0	2	2	1	3	3	2	2
मूषक	2	2	3	1	1	0	4	2	2	2	2	2	2	1
गाय	1	2	3	2	2	2	2	4	3	0	3	2	2	1
महिषी	0	3	3	2	2	2	2	3	4	1	2	2	2	3
व्याघ्र	1	2	1	1	1	1	2	0	1	4	1	1	2	2
हरिण	3	2	3	2	2	3	2	3	2	1	4	2	2	2
वानर	3	3	0	2	2	3	2	2	2	1	3	4	3	2
नकुल	2	3	3	0	0	2	1	2	2	2	2	3	0	2
सिंह	1	0	1	2	2	1	1	1	3	2	2	2	1	4

ग्रह मैत्री ज्ञानार्थ चक्र–5

	वर का गुण							
वधू का गुण	वार	र.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.
	रवि	5	5	5	3	5	0	0
	चन्द्रमा	5	5	4	1	4	।।	।।
	मंगल	5	4	5	।।	5	3	।।
	बुध	3	1	।।	5	।।	5	4
	गुरू	5	4	5	1।।	5	।।	3
	शुक्र	5	।।	3	5	।।	5	5
	शनि	0	।।	।।	4	3	5	5

6. गण का गुण

दोनों का गण एक हो, तो गुण 6, पर देवगण और वधु मनुष्य गण उसका गुण भी 6, इससे विपरीत होने पर गुण 5, वर राक्षसगण और वधु देवगण हो, तो उसका गुण 1 और अन्यथा शून्य गुण लेना चाहिए।

गणगुण ज्ञानार्थ चक्र–6

	वर के गुण			
वधू के गुण	गण	देव	मनुष्य	राक्षस
	देव	6	5	1
	मनुष्य	6	6	0
	राक्षस	6	0	6

7. भकूट का गुण विचार

शुभ भकूट के गुण दोनों की राशि एक हो, भिन्न चरण या भिन्न नक्षत्र हो, तो उसका गुण 7, दोनों की राशियाँ तृतीयैकादश हो या भिन्न राशि और नक्षत्र हो, तो गुण 5, शुभ षडष्टक या द्विर्द्वादश या नवमपंचम हो, तो वर दूरत्व योनि शत्रुता होने पर भी गुण 6 लेना चाहिए।

अशुभ कूट का गुण वर योनि मैत्री व स्त्री दूरत्व हो, तो षडष्टक, द्विर्द्वादश, नवमपंचम आदि दुष्ट कूटों के भी गुण 4, योनि मैत्री व स्त्री दूरत्व, इन में से एक हो, तो दुष्ट कूट का गुण 1, यहाँ एक नक्षत्र या एक चरण का भी प्रभाव नहीं लिया जाता हैं।

भकूट गुण ज्ञान चक्र–7

	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	कं.	तु.	व.	ध.	म.	कु.	मी.
मे.	7	0	7	7	0	0	7	0	0	7	7	0
वृ.	7	7	0	7	7	0	0	7	0	0	7	7
मि.	0	7	7	0	7	7	0	0	7	0	7	7
क.	7	0	7	7	0	7	7	0	0	7	0	7
सि.	0	7	0	7	7	0	7	7	0	0	7	0
कं.	0	0	7	0	7	7	0	7	0	0	0	7
तु.	7	0	0	7	0	7	7	0	7	7	0	0
वृ.	0	7	0	0	7	0	7	7	7	7	7	0
ध.	0	0	7	0	0	7	0	7	7	0	7	7
म.	7	0	0	7	7	0	7	0	0	7	0	7
कु.	7	7	0	0	7	0	0	7	7	7	7	0
मी.	0	7	7	0	7	7	0	0	0	0	7	7

8. नाड़ी का गुण

वर व वधु दोनों की भिन्न नाड़ी हो, तो शुभ और दोनों की समान नाड़ी हो, तो अशुभ अर्थात् शून्य गुण लेना चाहिए।

वर व वधु के गुण मेलापन में यदि गुण 18 या सबसे अधिक हो, तो शुभ, अन्यथा अशुभ जानकर त्याज्य करना चाहिए।

नाड़ी गुण ज्ञानार्थ चक्र–8

वधू के गुण	वर के गुण			
	नाड़ी	आदि	मध्य	अन्त्य
	आदि	0	8	8
	मध्य	8	0	8
	अन्त्य	8	8	0

वर्ण के फल

जिस कन्या का वर्ण वर के वर्ण से श्रेष्ठ हो, तो उसका पति अथवा उसका ज्येष्ठा पुत्र का नाश हो जाता है।

वैर योनि का फल

जैसे अश्व और भैंस की वैर योनि है, उसी तरह वर व वधु की वैर–योनि का विचार करना चाहिए। राजा या स्वामी और सेवक इत्यादि का भी विचार करें। नित्य शुभ की इच्छा करने वाले मनुष्य को परस्पर वैर योनि का परहेज करना चाहिए।

गणफल

वर व वधु का समान गण हो, तो उत्तम प्रीति, मनुष्य और देव में मध्यम, देव और राक्षस में कलह तथा मनुष्य और राक्षस में मृत्यु होती है। दोनों का षडष्टक की, अन्त्य नाड़ी हो, तो कन्या को मृत्यु कारक होती है।

दोनों की मध्य नाड़ी निर्धनता का कारण होती है और गर्भनाश होती है। अन्त्य नाड़ी दुर्भाग्य कारक होती है।

दोनों की मध्य नाड़ी मृत्युप्रद, वैसे ही पार्श्व नाड़ी भी मृत्युप्रद भी होती है, परन्तु विवाह में पार्श्व नाड़ी निन्दित नहीं है, ऐसा अन्य मत में क्षत्रियादिंकों के लिए कहा गया है।

स्त्री–पुरूष के समान वर्ग में, जैसे दोनों सिंह ही हो, तो महाप्रीति, दोनों मित्र हो, तो समान प्रीति तथा दोनों उदासीन हो तो थोड़ी प्रीति, लेकिन शत्रुवर्ग में होने से मृत्युप्रद होती ळें

ग्रह मेलापक–ग्रह मेलापक जन्म कुण्डली मिलान में एक सूक्ष्म प्रक्रिया है। ग्रह मेलापक के द्वारा आप यह जान सकेंगे कि दोनों वर एवं वधु दोनों में सामंजस्य किस प्रकार से स्थापित किया जा सके क्योंकि ज्योतिष शास्त्र का सिद्धान्त है कि यदि जन्म कुण्डली में कन्या के ग्रहों की संख्या केन्द्र अथवा त्रिकोण स्थानों में पुरूष की जन्म कुण्डली की अपेक्षा अधिक प्रभावी हैं तो कन्या वर से भारी होगी। इसी प्रकार से वर की जन्म कुण्डली की भी यही प्रक्रिया है। परन्तु शास्त्र के अनुसार कन्या का वर के लिए भारी होना कष्टप्रद है। इसका कारण है कि भारतीय समाज पुरूष प्रधान है। यहाँ पर पुरूष परिवार का समाज का अपने घर का नेतृत्व स्वयं करता है। स्त्री गृहिणी होने के कारण वह घर के आन्तरिक क्रिया कलापों में सहयोग प्रदान करती है। स्वभाव से प्रकृति ने पुरूष को कठोर एवं कठिनतम कार्यों को करने की क्षमता प्रदान की है। जबकि ये गुण स्त्रियों में नहीं पाये जाते, यत्र–तत्र यदि किसी स्त्री जाति में ये गुण पाये जाते हैं तो देश और

दुनिया के लिए तो अच्छा माना जाता है परन्तु परिवार और घर में उनका कोई अहम योगदान नहीं रहता। यदि कदाचित् यह सम्भव हो भी जाता है तो वहाँ पर विदेशों की प्रणाली प्रभावी हो जाती है जिसको आप कान्ट्रेक्ट मैरिज कह सकते हैं। इसलिए भारतीय ज्योतिष का उद्देश्य घर बसाने में है न कि उजाड़ने से, अथवा विवाह कोई आनन्द, उल्लास के लिए नहीं किया जाता अपितु यहाँ पर स्थापित करने की रस्में और कसमें खाई जाती है। ग्रह मेलापक में यदि लड़के की जन्मकुण्डली में लग्न से

शुक्र से गणना करने पर – 3 शुभ ग्रह शुक्र, बुध, चन्द्र

चन्द्रमा से गणना करने पर – 2 चन्द्र एवं शुक्र

शुभ ग्रहों का लग्न, शुक्र एवं चन्द्रमा से योग संख्या – 8

लड़के के जन्मांग चक्र में यदि पापग्रहों की गणना करें तो इस प्रकार से योग है–

लग्न मेष यथा – 3 पापग्रह सूर्य, राहु, एवं मंगल

चन्द्रलग्न से यथा – 2 मंगल एवं सूर्य

शुक्रलग्न से यथा – 3 सूर्य, मंगल एवं शनि

पपग्रहों का कुल योग – 8 हुआ।

इस प्रकार से उपर्युक्त जन्मांग चक्र का अध्ययन करने के उपरान्त निष्कर्ष यह निकला कि अमुक व्यक्ति के जन्मांग चक्र में शुभ एवं अशुभ ग्रहों का योग आठ–आठ होने के कारण इस व्यक्ति का आहार–विहार, खान–पान, रहन–सहन, आय–व्यय, एवं स्वभाव से सामान्य रहेगा।

अब अग्रिम जन्मांग चक्र में देखने से ज्ञान होगा कि लड़की का स्वभाव एवं गुणदोष किस प्रकार से होंगे। यथा–

लग्न से शुभग्रहों की संख्या – 3 शुक्र, बुध एवं बृहस्पति

चन्द्रमा से शुभग्रहों की संख्या – 2 चन्द्र एवं बृहस्पति

शुक्र से शुभग्रहों की संख्या – 3 शुक्र, बुध एवं बृहस्पति

शुभ ग्रहों की संख्या का कुल योग – 8

लड़की के जन्मांग चक्र में पाप एवं क्रूर ग्रहों की संख्या इस प्रकार से है। यथा–

लग्न मेष पापग्रहों की संख्या – 2 सूर्य एवं शनि

चन्द्र लग्न से पापग्रहों की संख्या – 1 शनि

शुक्र लग्न से पापग्रहों की संख्या – 2 सूर्य एवं शनि

कुल योग – 5

पपग्रहों की संख्या – 05

शुभ ग्रहों की संख्या – 08

उपर्युक्त जन्मांग चक्र में कन्या की कुण्डली में 3 शुभ ग्रहों का अधिक्य होने के कारण लड़की का आचरण रहन–सहन, खान–पान, आय–व्यय, परिवार के साथ एवं समाज में योगदान उत्तम रहेगा।

यदि उपर्युक्त दोनों जन्मांग चक्रों में शुभ ग्रहों की अपेक्षा अशुभ ग्रहों का आधिक्य ज्यादा रहता तो यह लड़की सकारात्मक की अपेक्षा नकारात्मक विचार धारा वाली होती एवं लड़के के लिए तथा परिवार समाज में पुरूषों के समान प्रभावशाली होती परन्तु परिवार और आपसी सम्बन्धों में कहीं न कहीं कड़वाहट पैदा होती।

भारतीय ज्योतिष एवं कुण्डली मिलाने का प्रमुख उद्देश्य है, पति एवं पत्नी के सम्बन्धों में सहजता, सरलता, सहृदयता एवं आपस में एक दूसरे के सुख एवं दुख में बराबर का भागीदार होना।

इसके विपरीत यदि केन्द्र त्रिकोण में शुभ ग्रहों की अपेक्षा अशुभ ग्रह लड़के के जन्मांग चक्र में प्रभावी होते तो ग्रह मेलापक में उसको अच्छा माना जाता है। ग्रह मेलापक एक अहम प्रकिया है।

अभ्यास प्रश्न –1

बहुविकल्पीय प्रश्न–

1. वर्णकूट की संख्या है–

(अ) 2 (ब) 4

(स) 3 (द) 1

2. ग्रहमैत्री द्वारा गुण प्राप्त होते है–

(अ) 10 (ब) 4

(स) 5 (द) 3

3. नाड़ी कूट द्वारा गुण प्राप्त होते है–

(अ) 7 (ब) 8

(स) 9 (द) 6

4. ब्राह्मण वर्ण की राशियाँ हैं–

(अ) मीन, वृश्चिक (ब) धनु, सिंह

(स) वृष, मकर (द) कुम्भ, तुला

5. क्षत्रिय वर्ण में ये राशियाँ आती है–

(अ) कर्क, वृश्चिक (ब) धनु, सिंह

(स) मकर, कन्या(द) मिथुन, कुम्भ

6. निम्न राशियों का वैश्य वर्ण है–

(अ) मीन, कर्क (ब) मेष, सिंह

(स) मिथुन, कुम्भ (द) वृष, मकर

केन्द्र 1, 4, 7, 10 अथवा त्रिकोण 9, 5 स्थानों में शुभ ग्रह चन्द्र, बुध, बृहस्पति, शुक्र ग्रहों की संख्या अधिक हो तो उसे श्रेष्ठ जन्म कुण्डली माना जाता है एवमेव कन्या के जन्मांग चक्र में भी केन्द्र 1, 4, 7, 10 में शुभ ग्रहों की संख्या अधिक हो तो वह कन्या वर के योग्य मानी जाती है क्योंकि प्रथम भाव से शरीर का विषय में विचार किया जाता है, ''शरीरमाद्य

खलु धर्मसाधनम्'' धर्म की साधना के लिए शरीर प्रधान अंग है अन्यथा इसके न रहने पर धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष चतुष्टय का कोई औचित्य नहीं रहता। अतः प्रथम भाव में शुभ ग्रह होंगे शुभ ग्रहों का दृष्टिपात होगा तो व्यक्ति दीर्घायु तेजस्वी, ओजस्वी एवं सात्विक विचार धारा का होगा। इसी प्रकार से यदि चतुर्थ भाव में शुभ ग्रहों का संयोग में गति स्थिति व्यक्ति को भूमि, भवन, वाहन, उदर, माता के सुख से परिपूर्ण करता हुआ हष्ट–पुष्ट करता है। सप्तम भाव परिवार का, पति एवं पत्नी का, व्यापार का स्थान है जो मानव जीवन में अहम भूमिका अदा करते हैं। दशमभाव कर्म का प्रधान रूप से है जिसके बल पर व्यक्ति समाज में, परिवार में, देश एवं विदेश में उच्च स्थान को प्राप्त करता है। त्रिकोण स्थानों की बात करें तो पंचम भाव बुद्धि और विद्या का ये दोनों जिसके पास वह व्यक्ति सर्वसम्पन्न होता है। क्योंकि कहा गया है कि ''बुर्द्धेयस्य तस्य बलम्'' जिसके पास बुद्धि है वही बलशाली है। नवमभाव व्यक्ति के जीवन में अहम योगदान रखता है। धर्म और भाग्य के विषय में विचार यिका जाता है। धर्म के द्वारा ही भाग्य का निर्माण होता है। अतः नवमभाव पर शुभ ग्रहों की दृष्टिशुभ ग्रहों का संयोग एवं नवमेश का शुभग्रहों के साथ सहभागिता व्यक्ति को धार्मिक एवं भाग्यशाली बनाता है। अतः उपर्युक्त स्थानों में यदि शुभ ग्रह हो तो व्यक्ति को धार्मिक एवं भाग्यशाली बनाता है। अतः उपर्युक्त स्थानों में यदि शुभ ग्रह हो तो व्यक्ति समाज में दर्पण का कार्य करता है और समाज उस व्यक्ति विशेष अनुगामी होता है। जिस प्रकार से गीत में भगवान कृष्ण एवमेव उनके द्वारा कथि उपदेश यथा–यद्यद्य चरति श्रेष्ठस्तक्तदेवत्तरो जनः।

अभ्यास प्रश्न

1. वाग्दान की व्याख्या करते हुए उसकी आवश्यकता बतायें?
2. शास्त्र के अनुसार कन्या और वर का विवाह कब करना चाहिए?
3. शास्त्रानुसार विवाह मुहूर्त का उल्लेख करें।
4. अष्टकूटों का वर्णन करते हुए वर्ण एवं वश्य कूट की विस्तृत व्याख्या करें।
5. नाड़ी दोष का उल्लेख करते हुए बतायें कि क्या ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यादि वर्णों को भी नाड़ी दोष हैं?
6. ग्रहमैत्री का उल्लेख करते हुए उसकी क्या आवश्यकता है?
7. ताराकूट का जीवन में क्या प्रयोजन है? स्पष्ट उल्लेख करें।
8. योनि कूट क्या है? स्पष्ट करें।
9. गणों का वर्णन करते हुए बताये कि सामान्य जीवन में उनकी क्या भूमिका है?

4.9 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान चूके होंगे कि उत्तर भारत की मिलान पद्धति में एवं दक्षिण भारत की मिलान पद्धति में सूक्ष्म अन्तर है। परन्तु यह अन्तर मात्र इतना है कि जैसे वर्षारम्भ चैत्र मास शुक्ल पक्ष से होता है और उत्तर भारत में

कृष्णपक्ष को मास का प्रथम पक्ष माना जाता है। जबकि दक्षिण भारतीय परम्परा में शुक्ल पक्ष ही प्रथम पक्ष ही माना जाता है। उसी प्रकार से उत्तर भारत में मिलान की पद्धति कोई भिन्न नहीं हैं, यहाँ पर लोक व्यवहार में राशि मैत्री प्रचलन में हैं जबकि दक्षिण भारत में नक्षत्र पद्धति प्रचलन में हैं। तथापि राशि का निर्माण नक्षत्रों के द्वारा ही होता है। परन्तु लोक व्यवहार के लिए नक्षत्रों पर अधिक ध्यान दिया जाता है। अन्तिम निर्णय यही लिया जाता है कि उत्तर एवं दक्षिण भारतीय मिलान पद्धति में कोई विशेष अन्तर नहीं हैं। उत्तर भारत में ग्रह मेलापक को ज्यादा महत्व नहीं दिया जाता लेकिन दक्षिण भारत में ग्रह मेलापक एक अहम बिन्दु माना जाता हैं। अतः आप इस ईकाई के माध्यम से दक्षिण भारतीय मिलान के विषय में ज्ञान प्राप्त कर चुके होंगे।

4.10 शब्दावली

वाग्दान–सगाई

अष्टकूट–नाड़ी आदि आठ मेलापक आधार

नक्षत्र – न क्षरति इति नक्षत्रम्।

मेलापक – वर–कन्या का जन्म नक्षत्र के आधार पर गुण सम्बन्धी मेल की जाने वाली किया।

योनि – अष्टकूटों में एक कूट। जिसका गुण संख्या 4 है।

4.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न – 1 का उत्तर

1. ब
2. स
3. ब
4. अ
5. ब
6. द

4.12 सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

1. फलदीपिका, व्याख्याकार– गोपेश कुमारओझा, (1181) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

2. कर्मठगुरूः, मुकुन्दबल्लभ रचित, (1182) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

3. क्यों (धर्म दिग्दर्शन पूर्वार्थ), स्वामि करपात्री जी महाराज रचित, (2067) माधव विद्या भवन श्रीधाम 150, पुरानी गुप्त कालोनी दिल्ली–9

4. क्यों (धर्म दिग्दर्शन उत्तरार्ध)

5. ताजिक–नीलकण्ठी, पं. सीताराम शर्माकृत, (1192) चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी।

6. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द शास्त्री रचित, (2008) भारतीय ज्ञानपीठ 18 इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नई दिल्ली 110003

7. संस्कार प्रकाश, डा. भवानी शंकर त्रिवेदी कृत, (1986) श्री लालबहादुरशास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ शहीद जीतसिंह मार्ग नई दिल्ली 110016

8. ज्योतिष–रत्नाकर, देवकीनन्दन सिंह, (1983) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

9. भारतीय ज्योतिष विज्ञान, डा. सुरकान्त झा कृत, 2006, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी के0 37/118 गोपाल मन्दिर लेन वाराणसी।

10. सन्तान सुख सर्वांग चिन्तन, मृदुलात्रिवेदी कृत, (1990), 24 महानगर विस्तार ई0–40 कारपोरेशन क्वार्टर के सामने पीली कालोनी लखनऊ 226006

11. मुहूर्त चिन्तामणि– गोविन्द दैवज्ञ विरचित (2005) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38 यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।

12. वृहद्पाराशर होराशास्त्र पं. पद्मनाभ शर्मा (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38 यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।

13. वृहद्जातकम।

4.13 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. विवाह योग का उल्लेख करते हुए विस्तार पूर्वक स्पष्ट करें?
2. विवाह योग कन्या के गुणों का वर्णन करते हुए व्याख्या करें?
3. विवाह भंगयोग का सोदाहरण पूर्वक वर्णन करें?

अवकहड़ा चक्र

नक्षत्र	अश्विनी				भरणी				कृतिका				रोहिणी				मृगशिरा				आर्द्रा				पुनर्वसु				पुष्य				आश्लेषा			
नाड़ी	आद्य				मध्य				अन्त्य				अन्त्य				मध्य				आद्य				आद्य				मध्य				अन्त्य			
योनि	अश्व				गज				मेष				सर्प				सर्प				श्वान				मार्जार				मेष				मार्जार			
गण	देव				मनुष्य				राक्षस				मनुष्य				देव				मनुष्य				देव				देव				राक्षस			
चरण	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4
नामा.	चू	चे	चो	ला	ली	लू	ले	लो	आ	ई	ऊ	ए	ओ	दा	वी	वू	वे	वो	का	की	कू	घ	ङ	छ	के	को	हा	ही	हू	हे	हो	डा	डी	डू	डे	डो
न.स्वा.	मं	शु	बु	चं	र	बु	शु	मं	गु	श	श	गु	मं	शु	बु	चं	र	बु	शु	मं	गु	श	श	गु	मं	शु	बु	चं	र	बु	शु	मं	गु	श	श	गु
राशि	मेष								वृष								मिथुन								कर्क											
रा.स्वा.	मंगल								शुक्र								बुध								चंद्र											
वर्ण	क्षत्रिय								वैश्य								शूद्र								विप्र											
वश्य	चतुष्पाद								चतुष्पाद								मानव								जलचर											

नक्षत्र	मघा				पूर्वा				उ. भाद्र.				हस्त				चित्रा				स्वाति				विशाखा				अनुराधा				ज्येष्ठा			
नाड़ी	अन्त्य				मध्य				आद्य				आद्य				मध्य				अन्त्य				अन्त्य				मध्य				आद्य			
योनि	मूषक				मूषक				गौ				महिषी				व्याघ्र				महिषी				व्याघ्र				मृग				मृग			
गण	राक्षस				मनुष्य				मनुष्य				देवे				राक्षस				देव				राक्षस				देव				राक्षस			
चरण	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4
नामा.	मा	मी	मू	मे	मो	टा	टी	टू	टे	टो	पी	पी	पू	षा	णा	ठा	पे	पो	रा	री	रू	रे	रो	ता	सी	तू	ते	तो	ना	नी	नू	ने	नो	या	यी	यू
न.स्वा.	मं	शु	बु	चं	र	बु	शु	मं	गु	श	श	गु	मं	शु	बु	चं	र	बु	शु	मं	गु	श	श	गु	मं	शु	बु	चं	र	बु	शु	मं	गु	श	श	गु
राशि	सिंह								कन्या								तुला								वृश्चिक											
रा.स्वा.	सूर्य								बुध								शुक्र								मंगल											
वर्ण	क्षत्रिय								वैश्य								शूद्र								विप्र											
वश्य	वनचर								मानव								मानव								कीटक											

नक्षत्र	मूल				पू.षा.				उ.षा.				श्रवण				धनिष्ठा				शतभिषा				पू.भा.				उ.भा.				रेवती			
नाड़ी	आद्य				मध्य				अन्त्य				अन्त्य				मध्य				आद्य				आद्य				मध्य				अन्त्य			
योनि	श्वान				वानर				नकुल				वानर				सिंह				अश्व				सिंह				गौ				गज			
गण	राक्षस				मनुष्य				मनुष्य				देव				राक्षस				राक्षस				मनुष्य				मनुष्य				देव			
चरण	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4	1	2	3	4
नामा.	ये	यो	भा	भी	भू	धा	फा	ढा	भे	जो	जा	जी	खी	खू	खे	खो	गा	गी	गू	गे	गो	सा	सी	सू	से	सो	दा	दी	दू	था	झा	आ	दे	दो	चा	ची
न.स्वा.	मं	शु	बु	चं	र	बु	शु	मं	गु	श	श	गु	मं	शु	बु	चं	र	बु	शु	मं	गु	श	श	गु	मं	शु	बु	चं	र	बु	शु	मं	गु	श	श	गु
राशि	धनु								मकर								कुंभ								मीन											
रा.स्वा.	गुरु								शनि								शनि								गुरु											
वर्ण	क्षत्रिय								वैश्य								शूद्र								विप्र											
वश्य	मानव								जलचर								मानव								जलचर											

घात चक्र

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुंभ	मीन
घातमास	कार्तिक	मार्गशीर्ष	आषाढ़	पौष	ज्येष्ठ	भाद्रपद	माघ	आश्विन	श्रावण	वैशाख	चैत्र	फाल्गुन
घाततिथि	1,6,11	5,10,15	2,7,12	3,8,13	5,10,15	4,9,14	1,6,11	3,8,13	4,9,14	3,8,13	5,10,15	1,6,11
घातवार	रविवार	शनिवार	चंद्रवार	बुधवार	शनिवार	शनिवार	गुरुवार	शुक्रवार	शुक्रवार	मंगलवार	गुरुवार	शुक्रवार
घातनक्षत्र	मघा	हस्त	स्वाती	अनुराधा	मूल	श्रवण	शतभिषा	रेवती	भरणी	रोहिणी	आर्द्रा	आश्लेषा
घातयोग	विषकुंभ	शुक्ल	परिघ	व्याघात	धृति	शुक्ल	शुक्ल	व्यतिपात	वज्र	वैधृति	गंड	वज्र
घातकरण	बव	शकुनि	कौलव	नाग	बव	कौलव	तैतिल	गरज	तैतिल	शकुनि	किंस्तुघ्न	चतुष्पाद
घातप्रहार	1	4	3	1	1	1	4	1	1	4	3	4
पु.घातचंद्र	1	5	9	2	6	10	3	7	4	8	11	12
स्त्री.घातचंद्र	1	8	7	9	4	3	6	2	10	11	5	12

भाग–1

वर–वधू गुण मेलापक सारणी

ऊर्ध्वाधरस्थाम्यपि भानि पुंसां पार्श्व द्वयस्थानि तथा वधू नाम्। संपात कोष्ठे शुभयोर्गुणैक्यं सर्वे शुभं तत्सस्मृतितोऽधिकं यत्।।

कन्या ↓	वर →	मेष			वृष			मिथुन			कर्क			सिंह			कन्या			तुला			वृश्चिक			धन			मकर			कुम्भ			मीन		
	नक्षत्र	अ.	भ.	कृ.	कृ.	रो.	मृ	मृ	आ.	पुन.	पुन.	पु.	श्ले	म.	पूफा	उ.फा	उ.फा.	ह.	चि.	चि.	स्वा.	वि.	वि.	अनु	ज्ये.	मू.	पूषा	उ.षा.	उ.षा.	श्र.	ध	ध.	श	पूभा.	पूभा.	उ.भा.	रे
	चरण	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4
मेष	अ 4	28 3	33 0	28ll	18ll 4	21ll -4	22ll -4	26	17 3	19 3	23ll 3	31ll	28	21 +5	25 +5	15ll 3.5	11 3.6	9 236	13 6	22ll	26ll -2	22ll	18ll -6	25ll -6	14 3.6	13ll 3.5	25 +5	23ll +5	25	26	20	20	15 3	16 3	14ll 3.4	24ll +4	26ll +4
	भ 4	34	28 3	29 01	19 0.4.1	21ll -4	14ll 34	18 3	26	27	31ll	23ll 3	25ll 1	20 15-	18 2.5	26 +5	21ll 6	20 6	4 1.36	13ll 1.3	29ll	21ll 1	17ll -16	17ll 3.6	19ll -16	20 1.5	18 3.5	26 +5	27ll	26	10 132	10 1.32	20 -1	24 -2	22ll 24+	17ll +3.4	26ll +4
	कृ 1	27ll	29 1	28 3	18 3.4	10 1340	16ll 4	20	20 1	21	25ll	26ll	23ll 3	16ll 3.5	20 1.5	20 1.5	15ll 1.6	15ll 6	18 6	27ll	15ll 3	19ll 3	15ll 3.6	19ll -6	25ll -6	24ll +5	18 125	12 3.1.5	13ll 13	11ll 2.3	25	25	27	19 1	17ll 1.4	19ll 1.4	11ll 3.4
वृष	कृ 3	18ll -4	20 1.4	19 3.4	28 3	20 0.1.3	26ll	17ll +4	17ll 1.4	18ll +4	22	23	20 3	18ll 3	22 1	22 1	21 1.5	21 +5	23ll +5	22ll -6	10ll 3.6	14ll 3.6	20ll 3	24ll	30ll	20 6	13ll 126	7ll 1.3.6	12 1.3.5	10 3.5.2	23ll +5	29ll	31ll	23ll 1	20 1	22 1	14 3
	रो 4	23ll -4	23ll 4	11 341	20 31	28 3	36 0	25ll 04	23ll +4	22ll +4	26	27	22 31	10ll 31	24ll	27	26 +5	26 +5	20 15-	19 16	15 36	9ll 316	15ll 31	29ll	23ll 1	14 16	19ll 6	11ll 362	16 352	17 35	20 15-	24ll -1	24ll -1	30ll	27	27	19 3
	मृ 2	23ll -4	14ll 34	18ll -4	27ll	35	28 3	19 34	24 04	22ll +4	26	19 1	21	19ll	15ll 3	24ll	23ll +5	26 +5	13 35	12 36	25 -6	18ll -6	24ll	21ll 3	24ll	15 6	10 36	17 26	21ll +25	25 +5	13 35	19 3	27	29ll	26	18 3	27
मिथुन	मृ 2	27	18 03	22	19ll +4	27 +4	20 34	28 3	33 0	31ll	19 -4	12 34	14 4	23ll	19ll 3	28ll	31ll	34	21 3	14 35	27 +5	20ll +5	14 6	11 36	14 6	23	18 3	25 +2	20 -26	23ll -6	11ll 36	13 35	21 +5	23ll +5	25ll	17ll 3	26ll
	आ 4	19 3	27	21 1	18ll 14+	24ll +4	26 +4	34	28 3	25 03	12ll 034	20 -4	13 14	23ll 1	29ll	21ll 3	24ll 3	24ll 3	27 1	20 -15	27 +5	20 15+	13ll 16	17 26	5 1362	16 13	28	28	23 -6	23 -6	17ll -16	19 +15	12 135	17 35	19 3	26ll	26ll
	पु 3	20 3	27	23	20ll +4	22ll +4	23ll +4	31ll	24 3	28 3	15ll 34-	22ll 04	17 -4	22ll +2	26ll +2	21ll 3	24ll 3	25ll 3	27ll	20ll +5	28 +5	22 +5	15ll 6	21ll 6	7 36	14 3	27	27	22 -6	23 -6	17ll -6	18ll +5	14 35	16 35	18 3	8	27ll
कर्क	पु 1	22ll 3	29ll	25ll	22	24	25	18 4	10ll 34	14ll 34	28 3	35 0	29ll	16ll 24	20ll 34	15ll 3	18 3	19	21	20ll	28	22	20ll +5	26 +5	11ll 35	8 36	21 -6	21 -6	26	27	21	12ll 6	8 36	10 36	16 35	26 +5	25ll +5
	पु 4	30ll	21ll 3	26ll	23	25	18 3	11 34	18 4	21ll 4	35	28 3	30 0	19ll +4	15ll 34	23ll +4	26	27	12 3	11ll 3	26ll	21	19 -5	18 35	21 -5	17	11 236	21 6	26	25 -2	13 3	4ll 36	14ll 6	18 6	24 +5	18 35	27 +5
	आ 4	26	24ll 1	22ll 3	19 3	11 31	19	12 4	12 14	15 4	28ll	29	28 3	15 342	15ll 142	18ll 14	21 1	21	26	25ll	12ll 3	17ll 3	15ll 35	20 -5	26 -5	22ll 6	16 16	8 316	13 13	13 3	26	17ll 6	19ll 6	11ll 16	17ll 15-	21 15	13 35
सिंह	म 4	20 +5	20 15	16ll 35	17ll 3	9ll 31	17ll	21ll	22ll 1	20ll -2	16ll 24+	19ll +4	16 342	28 3	30 01	27ll 1	16ll 14	16ll +4	21ll 4	24ll	11ll 3	16ll 3	22ll 3	25ll	33	25 +5	19 15	8ll 135	3ll 316	4ll 36	18ll 6	24ll	25ll	18ll 1	18ll 16-	19ll 16-	13 36
	पूफा 4	26 +5	18 35	20 15-	21 1	23ll	15ll 3	19ll 3	28ll	26ll -2	22ll 24+	17ll +34	16ll 124	30 -1	28 3	35 0	24 04	22 +4	7ll 134	10ll 13	25ll	18ll 1	24ll -1	23ll 3	25ll -1	19 15+	17 35	24 +5	17ll 6	18ll 6	4ll 136	10 13	19ll 1	24ll	24ll -6	17ll 36	25ll -6
	उफा 1	16ll 35	26 +5	20 15-	21 1	26	24ll	28ll	20ll 3	21ll 3	17ll 34	15ll +4	19ll 14-	27ll -1	35	28 3	17 34	16 034	13ll 142	16ll 12	25ll	16ll 12	22ll -12	31ll	17ll 13	9ll 135	25 +5	25 +5	20 6	20 6	11ll 16	17ll 1	11ll 13	15ll 3	15ll 36	26ll -6	25ll -6
कन्या	उफा 3	13 36	22ll 6	16ll 16	21 15+	26 +5	24ll +5	31ll	23ll 3	24ll 3	20 3	28	22 1	17ll 14	25 +4	18 34	28 3	27 03	24ll 12+	16ll 124-	25ll +4	16ll 124	18 12	27	13 13	14 13	29ll	29ll	24ll +5	24ll +5	16 15+	16ll -6	10ll 316	14ll 36	17ll 3	28ll	27ll
	ह 4	10 236	20 6	17ll 6	22 +5	25 +5	26 +5	33	22ll 3	24ll 3	20 3	28	23	18ll +4	22ll +4	16 34	26 3	28 3	28 0	20 04	26ll +4	18ll +4	20	26	13 3	15 3	27	28ll	23ll +5	24ll +5	18ll +5	19 6	8ll 362	13ll 36	16ll 3	26ll	27ll
	चि 2	13 6	5 136	19 6	23ll +5	20 15	12 35	19 3	26 1	25ll	21	12 3	27	22ll +4	8ll 134	14ll 124	24ll 12	27	28 3	20 34	19 04	26ll +4	28	11 3	25	27	14 13	22 1	17 15	18ll +5	15ll 35	16 36	24 -6	16ll 16	19ll 1	10ll 132	19ll

वर्णवश्य आदि के संयोग से निर्मित यह गुण.दोष सारणी जिसमें ऊपर की पंक्ति में वर के नक्षत्र, खडी लाइन में कन्या के नक्षत्र लिखे हैं और सम्पात कोष्ठकों के ऊपरी भाग में गुण संख्या तथा नीचे महादोषों के चिन्ह दिए हैं। चिन्हों का अभिप्राय है। एक नाड़ी दोष की जगह (3), गण महा दोष (मनुष्य राक्षस) के स्थान में (1), भकूट महादोष (षडाष्टक) में (6), नव पंचम में (5), द्विर्द्वादश में (4) वैर योनि में (2) लिखे हैं।

भाग–2

वर–वधू गुण मेलापक सारणी।

ऊर्ध्वाधरस्थाम्यपि भानि पुंसां पार्श्व द्वयस्थानि तथा वधू नाम्। संपात कोष्ठे शुभयोर्गुणैक्यं सर्वे शुभं वत्सस्मृतितोऽधिकं यत्।।

वधू	वर→	मेष			वृष			मिथुन			कर्क			सिंह			कन्या			तुला			वृश्चिक			धन			मकर			कुम्भ			मीन		
	नक्षत्र	अ	भ	कृ.	कृ.	रो	मृ	मृ.	आ.	पुन.	पुन.	पु	श्ले	म.	पूफा	उ.फा	उ.फा.	ह.	चि.	चि.	स्वा.	वि.	वि.	अनु	ज्ये.	मू	पू.षा.	उ.षा.	उ.षा.	श्र.	ध.	ध.	श.	पू.भा.	पू.भा.	उ.भा.	रे
	चरण	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4
तुला	चि.2	22॥	14॥ 13	28॥	23॥ +6	20 16	12 36	13 35	21 15	19॥ +5	20॥	11॥	26॥	25॥	11॥ 13	17॥ 12	17॥ 124	20 +4	21 34	28 3	27 0	34॥	23॥ 4	6॥ 34	20॥ 4	27	14 13	22 1	25 01	26॥	23॥ 3	18 35	26 +5	18॥ 15	12॥ 16	3॥ 1362	12॥ 6
	स्वा.4	27॥ +2	29॥	17॥ 3	12॥ 36	15॥ 36	26 -6	27 +5	26 +5	28 +5	29	27॥	14॥ 3	13॥ 3	25॥	25॥	25॥ +4	27॥ +4	21 +4	28	28	20 03	9 034	21A 4	16॥ 4	23	27	19 3	22 3	23 3	26॥	21 +5	20 52+	25 +5	19 6	19॥ 6	12॥ 36
	वि.3	22॥	22॥ 1	20॥ 3	15॥ 36	10॥ 136	18॥ -6	19॥ +5	20 15	21 +5	22	21	18॥ 3	17॥ 3	19॥ 1	17॥ 12	17॥ 142	18॥ +4	27॥ +4	34॥	19 3	28 3	17 34	16 04	20॥ 4	27	22 1	14 13	17 13	17 3	30	24॥ +5	26 +5	20 15	14 16	13 162	4॥ 36
वृश्चिक	वि.1	16॥ +6	16॥ 16	14॥ 36	19॥ 3	14॥ 13	22॥	12 6	12॥ 16	13॥ 6	19 -5	18 -5	15॥ -5	21॥ 3	23॥ 1	21॥ 12	17 12	18	27	22॥ 4	7 34	16 34	28 3	27 0	31॥	21॥ +4	16॥ 41	8॥ 134	12 13	12 3	25	24	25॥	19॥ 1	19 15	18 15	9॥ 325
	अनु.4	24॥ -6	15॥ 36	19॥ -6	24॥	27॥	20॥ 3	10 36	15 26	20॥ 6	26 -5	18 35	21 -5	24॥	20॥	29॥	25	26	11 3	6॥ 34	21॥ 4	16 4	28	28 3	31 0	15॥ 24+	13॥ 34	21॥ +4	25	26	12 3	11 3	21	24॥	24 +5	18 35	27 +5
	ज्ये.4	12 36	18॥ 16	24॥ -6	29॥	22॥ 1	22॥	12 6	2 3162	5 63	10॥ 53	20 +5	26 +5	31	23॥ 1	16॥ 13	12 13	12 3	24 0	19॥ 4	14॥	19॥ 4	31॥	30	28 3	14 0234	16॥ 14	16॥ 14	20 1	20	25	24	18 3	10 13	9॥ 135	21 15	21 +5
धनु	मू.4	12 35	20 15	24॥ +5	19॥ 6	13 16	13 6	21	15 13	12 3	8 36	17 6	23॥ 6	25 +5	19 15	9॥ 153	13 31	13 3	27	26	21	26	22॥ +4	15॥ +24	15 342	28 3	28 01	26॥ 1	15 14	15 4	20 4	28॥	21॥ 3	14॥ 13	16 13	25 1	26॥
	पूषा.4	26 +5	18 35	18 -125	12॥	18 162	10 6	18 36	27 3	27	23	13 6	17 236	19 16	17 -15	25 35	28॥ +5	27	13	13 13	27 13	21	17॥ 1	15॥ 14-	17॥ 34	28 14-	28 +1	34 3	22॥ 0	23 04	6 4	14॥ 134	23॥ 13	28॥ 1	30	23	31 3
	उषा.1	24॥ +5	26 +5	12 135	6॥ 136	10॥ 236	17 26	25 +2	27	28	23 6	23 6	9 163	8॥ 153	24 +5	25 +5	28॥	28॥	21 1	21 1	19 3	13 13	9॥ 134	23॥ +4	17॥ -14	26॥ -1	34	28 3	16॥ 34	14॥ 340	15 14	23॥ 1	23॥ 1	29॥	31	31	23 3
मकर	उषा.3	27	28॥	14॥ 13	12 135	16 235	22॥ 25+	20 26+	22 -6	22 -6	28	28	14 13	4॥ 136	20 6	21 6	24॥ +5	24॥ 11	17 15	24 -1	22 3	16 13	13 31	27	21 1	16 14	23॥ 4	17॥ 34	28 3	26 30	26॥ +1	17 14+	17 14+	23 +4	30॥	30॥	22॥ 3
	श्र.4	27	26	13॥ 32	11 352	26 35	25 +5	22॥ -6	21 -6	22 -6	28	26 +2	15 3	6॥ 36	18॥ 6	20 6	23॥ +5	24॥ +5	19॥ 5	26॥	22 3	17 3	14 3	27	22	17 4	23 4	14॥ 34	25 3	28 3	28 0	18॥ 04	18 +4	21 +4	28॥	29॥	22॥ 3
कुम्भ	ध.2	20	11 132	26	23॥ +5	20 15	12 35	9॥ 36	16॥ 16	15 -6	21	13 3	27	19॥ 6	5॥ 136	12॥ 16	15॥ 15	17॥ -5	15॥ 35	22॥ 3	24॥	29	26	12 3	26	21 4	7 341	16 41	26॥ 1	27	28 3	18॥ 34	23॥ 40	19 14	26॥ 1	15॥ 13	22॥ +2
	ध.2	20	11 132	26	30॥	27 1	19 3	12 35	19 15	17॥ +5	12॥ 6	4॥ 36	18॥ 6	26॥	11॥ 13	18॥ 1	17॥ 16	19 +6	17 36	18 35	20 -5	24॥ -5	25	11 3	25	29॥	15॥ 13	24॥ 1	18 14	18॥ +4	19॥ +4	28 3	33 0	28॥ 1	18 14	7 134	14 42
	श.4	15 3	21 1	28	32॥	25॥ 1	27	20 +5	12 135	13 35	6॥ 36	14॥ 6	20॥ 6	26॥	20॥ 1	12॥ 13	11॥ 136	8॥ 236	25 6	26 +5	19 +5	26 +5	26॥	21	19 3	22॥ 3	24॥ 1	24॥ 1	18 14	18॥ +4	24॥ +4	33	28 3	19 0	8॥ 0	17 14	16 4
	पूभा.3	18 3	25 +2	20 -1	24॥ -1	31॥	31॥	24 +5	17 35	18 35	12 36	20 6	12॥ 16	19॥ 1	25॥	16॥ 3	15॥ 36	15॥ 36+	17॥ 16	18॥ 15	26 +5	20 +15	20॥ 1	26॥	11 13	15॥ 13	29	30॥	24 +4	23॥ +4	20 -14	28॥ -1	19 13	28 3	17॥ 34	22॥ 04	20 42
मीन	पूभा.1	14॥ 34	21॥ +24	16॥ -14	19 1	26	26	25॥	18 3	18 3	17 35	25 5	17॥ 15	17॥ -16	23॥ +6	14॥ +36	16॥ 3	16॥ 3	18॥ +1	11॥ 16	19 6	13 16	19 15-	25 +5	9॥ 135	15 13	29	30	29॥	28॥	25॥ 1	17 14	7॥ 134	16॥ 34	28॥ 3	33 0	30॥ +2
	उभा.4	24॥ +4	16॥ 34	18॥ -14	21 1	26	18 3	17॥ 3	25॥	28	27 5	19 35	21 15	18॥ -16	16॥ 36	25॥ +6	27॥	26॥	9॥ 132	2॥ 1362	19॥ 6	12 162	18 152	19 35	21 -15	24 01	22 3	30	29॥	29॥	14॥ 13	6 134	16 14	21॥ 4	33	28 3	35 0
	रे.4	25 +4	24॥ +4	11॥ 34	14 3	17 3	26	25॥	24॥	26॥	25॥ 5	27 5	14 35	13 36	23॥ +6	23॥ +6	25॥	26॥	19॥	12॥ 6	11॥ 36	4॥ 36	10॥ 35	27 +5	22 +5	26॥	29	21 3	20॥ 3	21॥ 3	22॥ -2	14 42	16 4	18 42	29॥ +2	34	28 3

और जहां थोड़ा दोष समझा गया वहां (–) चिह्न है, जहां (स्वामी मैत्री आदि के) दोष का पूरा निर्वाह हैं वहा (+), ऐसा चिह्न बता दिया है और जिस जगह वर के नक्षत्र से पूर्व वधू का नक्षत्र है (इस का भी महादोष है) वहां 0 शून्य का चिह्न हैं और जहां कोई भी महादोष नहीं मिलता वहां केवल गुण ही लिखें हैं। जैसे कृतिका के प्रथम चरण वर का नक्षत्र और अश्विनी वधू नक्षत्र के सामने सम्पात कोष्ठक मे 28।। गुण ही लिखें हैं।

खण्ड–2

मंगल दोष व मेलापक विचार

इकाई – 1 विवाह–संस्कारादि

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1..2 उद्देश्य
1.3 मुख्य भाग खण्ड– एक
1.3.1 उपखण्ड एक – विवाह संस्कार के विषय में आवश्यक निर्णय।
1.3.2 उपखण्ड दो – ज्योतिषशास्त्र के अनुसार विवाह योग।
1.3.3 उपखण्ड तीन– विवाह में स्त्री के गुणदोषादि का विवरण।
1.3.4 उपखण्ड चार – स्त्री के रोगादि का विचार।
1.4 सारांश
1.5 पारिभाषिक शब्दावली
1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.7 सन्दर्भ ग्रंथों की सूची
1.8 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

भारतीय धर्मशास्त्र में भिन्न–भिन्न ऋषियों मुनियों ने अपने–अपने मतानुसार संस्कारों के विषय में विशेष रूप से ध्यान आकर्षित किया है। क्योंकि यह तो निश्ति है कि व्यक्ति जिस परिवेश में रह कर पल्वित–पुष्पित होता है, उन्हीं गुण एवं दोषों का समावेश उसके भीतर होता है। अतः समाज एवं राष्ट्र निर्माण में अहम् भूमिका व्यक्ति विशेष की होती है। आज राष्ट्र की ओर दृष्टि डालें अथवा भारतीय समाज की रूपरेखा की ओर ध्यान आकर्षित करें, तो आज मानव ने उसको कटघरे में लाकर खड़ा कर दिया है। आज स्थिति यह बन चुकी है कि व्यक्ति पूर्ण रूप से पाश्चात्य परिश में परिवर्तित हो चुका है। जबकि भारतदेश ऋषियों और मुनियों, साधु सन्तों एवं पथप्रदर्शकों का देश रहा है। अतः भारत की संस्कृति, भाषा, समाज, शिक्षा यहाँ का अनुशासन पूरे विश्न के लोग सीखते थे।

भारत के पूर्वकालीन शुभ चिन्तकों ने बड़ी सूक्ष्म दृष्टि से शोध करके यह निष्कर्ष निकाला कि यदि ईश्वर की उपस्थिति में संस्कारों को किया जाए तो व्यक्ति विशेष रूप से संस्कारित होता हुआ मानवता के पथ पर चलता हुआ विश्व के पटल पर अहम स्थान प्राप्त करेगा और यहीं कुछ हुआ पूर्व में भारत को जगदगुरू की संज्ञा से उद्‌बोधित करते थे। लेकिन धीरे–धीरे पाश्चात्य संस्कृति के आगोश में आकर आज यहाँ की संस्कृति को ग्रहण लगता जा रहा है। भारतीयों ऋषियों ने षोडश संस्कारों की कल्पना की गई है। उनमें भी बहुत ही विशेष बात है कि गर्भ से पूर्व एवं गर्भ के मध्य तथा जन्म के उपरान्त तथा मृत्यु के उपरान्त भी संस्कार किये जाते हैं। जबकि सम्पूर्ण विश्व में ऐसी कोई संस्कृति नहीं है, जहाँ पर इस प्रकार की कल्पना की जाती हो कि अमुक जीव वास्तविक रूप से मानव बने। केवल मात्र भारत एक ऐसा देश है जहाँ पर चार आश्रमों एवं सोलह संस्कारों के विषय में विचार किया जाता रहा हो। उसमें भी हिन्दू धर्म विशेष रूप से आज हम इस ईकाई में विवाह संस्कार के विषय में पढ़ेंगे।

1.2 उद्देश्य

1. इस ईकाई के निर्माण का प्रथम उद्देश्य है कि विवाह संस्कार क्यों आवश्यक है?
2. विवाह संस्कार को सनातन परम्परा एवं भारतीय संस्कृति किस भाव से देखती है?
3. विवाह संस्कार राष्ट्र निर्माण एवं गृहस्थाश्रम का प्रवेश द्वार तथा राष्ट्र के लिए अनुशासन है। राष्ट्र के निर्माण में विवाह संस्कार का अहम् योगदान है, क्योंकि विवाह संस्कार नहीं होता तो मानव कुत्ते बिल्ली के तरह गली–कूचों में, खुले आसमान के नीचे सम्बन्ध बनाते दृग्गोचर होते। इसलिए यह संस्कार इस दृष्टि अहम् योगदान रखता है।
4. इस संस्कार का प्रमुख उद्देश्य यह भी है कि भारतीय संस्कृति विश्वबन्धुत्व की भावना से ओत–प्रोत है प्रायः देखा गया है कि अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया आदि देशों की भाँति केवल विवाह गठबन्धन और विषयभोग की सामग्री मात्र न जानकर सात जन्मों की रस्मों और कसमों के साथ यह संस्कार सम्पन्न होता है। इसी प्रकार के अहम् बिन्दुओं को ध्यान में रखकर वर एवं वधू का चुनाव किया जाना चाहिए।

1.3 उपखण्ड एक – विवाह संस्कार के विषय में आवश्यक निर्णय

(1) मानव का जीवन विद्याध्ययन के पश्चात् विवाहादि संस्कार से आरम्भ होता है। प्राचीन समय में भारतवर्ष के लोग विद्याध्ययन के बाद ही विवाह करते थे, परन्तु आजकल तो प्रायः कुल बातों में ही उल्टी नदी बह रही है। हिन्दूशास्त्रानुसार विवाह एक धार्मिक–सम्बन्ध है। अन्य सम्प्रदाय वालों ने जो इसे एक साधारण सम्बन्ध समझ रखा है, वह ठीक नहीं है, क्योंकि एक दूसरे घर की कन्या एक अपरिचित वर के साथ सम्बन्धित होकर आजन्म सुःख–दुःख की संगिनी बनती है। आजकल के नवयुवकों की जो यह धारणा है कि जो कन्यापसन्द हो जाय वही ठीक है, बड़ी भूल की बात है। जब तक वर–वधू का मानसिक तत्व, शारीरिकतत्व, बुद्धितत्व (भेद, धार्मिकभेद, इत्यादि का परस्पर मेल न हो तब तक केवल मन–बन्ध का सम्बन्ध अति दुःखदायी और उपद्रवी हो जा सकता है। जहाँ तक साध्य हो सके प्रति मनुष्य को उचित है कि विवाह के पूर्व ऋषि–प्रणीत ज्योतिषशास्त्र के अनुकूल पूर्ण विचार के बाद पुत्र और कन्या का विवाह करे।

प्रथमखंड में लिखा जा चुका है कि भिन्न–भिन्न राशियों के भिन्न–भिन्न तत्व होते हैं। अतः यदि अग्नितत्व वाले का विवाह जलतव वाले से कर दिया जाय तो परिणाम यह होगा कि एक दूसरे का आजन्म शत्रु बना रहेगा। पराशर, वशिष्ठ, जैमिनि, अत्रि आदि भारतवर्ष के प्राचीन ऋषियों ने अपनी दिव्यदृष्टि से, अनुभव से तथा अनेक प्रकार से जाँच विचार कर निस्वार्थ हो, मनुष्यों के हितार्थ बहुत सी रीतियाँ बना कर रख छोड़ी है। जान बूझ कर उन सब शिलाओं और रीतियों का उल्लंघन करना मानो अपनी पुत्र–पुत्री को काँटे की शय्या पर सुलाना है। बहुत लोग ऐसा विवाद करते हैं कि कुंडली मिलान करने से विवाह में बहुत कुछ असुविधायें उपस्थित हो जाती हैं। परन्तु दुःख की बात है कि जब किसी को एक कोट तैयार करना होता है तो एक दुकार से दूसरी दुकान, यहाँ तक कि कभी–कभी एक शहर से दूसरे शहर की भी खाक छान डालते हैं और इसी तरह की असुविधाओं को मनुष्य सानन्द सहन कर लेता है। परन्तु जब उसी मनुष्य को किसी के विवाह के लिये वर खोज–ढूँढ करना पड़ता है, उसके लिए कुंडली मिलाना होता है तो चित्त कातर और अधीर हो उठता है। यह स्मरण नहीं रहता कि किसी के जीवन भर के साथी की खोज हो रही है। जनता से अनुरोध है कि ऐसे कष्टों की परवाह न कर विवाह के पूर्व ही निम्नलिखित नियमों पर या किसी अन्य पुस्तक में लिखे हुए इस प्रकार के नियमों को खूब छानबीन और स्वयं देख–भाल, कर विवाह निश्चय करें।

स्त्री सम्बन्धी बातें

(1) स्त्री का विचार सप्तमस्थान से और उसकी सौतिन का विचार सप्तम से षष्ठ अर्थात् द्वादश स्थान से किया जाता है। यदि तीसरी स्त्री का विचार करना हो तो द्वादश से षष्ठ अर्थात् पंचम स्थान से विचार होता है। इसी प्रकार यदि उससे भी अधिक स्त्री हो तो क्रमशः उससे षष्ठ स्थान से विचार होगा। शुक्र, स्त्री कारकग्रह होता है। अतः शुक्र से भी

स्त्री का विचार होता है। कभी–कभी धनस्थान से भी स्त्री सम्बन्धी बातों का विचार किया जाता है। महर्षि जैमिनि ने तो उपपद अर्थात् द्वादश के पदलग्न के द्वितीय स्थान से स्त्रीविषयक बहुत बातों का विचार बतलाया है।

(2) स्त्री के रंगरूप इत्यादि का विचार सप्तमेश, सप्तमस्थान और शुक्र से किया जाता है। इनमें से जो सबसे बलीग्रह हो उससे स्त्री के रंग, गुण इत्यादि का अनुमान होता है। जैसे, किसी का जन्म धनलग्न में हो तो उसका सप्तम स्थान मिथुन हुआ, सप्तमेश बुध और स्त्रीकारक शुक्र है। इन तीनों में से जो बली होगा उसी ग्रह की आकृति अनुसार उस जातक की स्त्री की आकृति आदि होगी। (परन्तु स्मरण रहे कि ज्योतिष शास्त्र में अनुमार शक्ति की बड़ी प्रबलता रहनी चाहिए।) इससे यह न समझ लें कि स्त्री का रंग केवल नौ तरह का ही होता है। यहाँ पर स्थान, दृष्टि, नवाँशादि के भेद से अनेकानेक विभिन्न रंग–रूप की आकृति होती है और यही देखने में भी आता है कि एक मनुष्य की आकृति दूसरे से नही मिलती। अतः ज्योतिष अनुसार फल कहने में बड़ी सावधानी एवं अनुमार की आवश्यकता है।

(3) सप्तमभाव से और सप्तमस्थग्रह आदि से प्रथम स्त्री के रंगरूप इत्यादि का विचार होता है। यदि दूसरी स्त्री हो तो जातक के सप्तम स्थान से षष्ठ अर्थात् द्वादशस्थित राशि आदि से देखा जायेगा। सप्तमभाव से स्त्री के गठनादि का विचार किया जायेगा। इस स्थान में यदि जलतव की अधिकता होगी तो स्त्री के मोटेपन की सम्भावना होगी। वायुराशि, अग्निराशि और शुष्कग्रह की अधिकता से स्त्री का शरीर कृश तथा दुबला होता है तथा पृथ्वीराशि और पृथ्वीग्रह के अधिकता से स्त्री दृढ़ कायावाली होती है। यदि स्त्री–भाव जलराशि का हो, उस में जलग्रह की स्थिति भी हो तथा दृष्टि भी हो तो जाया का शरीर अवश्य मोटा होता है। यदि जाया भाव अग्निराशि हो और अग्निग्रह की उस में स्थिति भी हो तो जाया बलवती अवश्य होगी पर शरीर की पुष्टि तथा मोटाई न होगी। यदि जाया भाव पृथ्वीराशि हो और पृथ्वीग्रह की उसमें स्थिति भी हो तो स्त्री प्रायः नाटी कद और दृढ़ काया वाली होती है। जायाभाव यदि वायुराशि हो और उस में वायुग्रह भी स्थित हो अर्थात् जायास्थान में शनि हो तो स्त्री शरीर से दुर्बल पर तीक्ष्ण वाली होती है। इसी प्रकार जो जो नियम उक्त स्थान पर लिखे गये हैं उन्हीं नियमों के आधार पर जाया को लग्न मान कर विचार करना होगा।

उदाहरण–

यह स्त्री की कुण्डली है। विचार किया जाय तो सप्तमस्थान मिथुनगत है। वहीं प्रथम जाया लग्न है। उसमें राहु और बृहस्पति बैठे हैं; मिथुन वायु तत्व और निर्जल ग्रह है तथा बृहस्पति आकाश तथा तेज तत्व का है और जलग्रह भी है। शुष्क शनि की पूर्ण दृष्टि है। इस प्रकार ऊपर लिखे हुए नियमों के अनुसार प्रथम भार्य्या कृष होगी पर बृहस्पति के रहने से अति कृष न होगी। और तेजतत्व के सम्मिश्रण से उसकी कान्ति एवं ..... अच्छी होगी। पुनः यदि दूसरी स्त्री का विचार किया जाये तो सप्तम स्थान मिथुन लग्न से षष्ठ

अर्थात् द्वादश से जो उक्त कुण्डली में वृश्चिक राशि है, विचार किया जायेगा। वृश्चिक जलराशि है और पादजल भी है तथा उस पर शुष्कग्रह मंगल की दृष्टि है। इस कारण इस जातक की द्वितीय भार्य्या बहुत मोटी तो नहीं पर मोटी अवश्य है। इस स्थान में वृश्चिक राशि पर अपने स्वामी मंगल की पूर्ण दृष्टि रहने से वृश्चिक लग्न को दृढ़ता और बल प्राप्त होता है। जायाभाव का विचार उपर्युक्त रीति से किया जाता है।

(1) पहली बात यह देखनी है कि लग्नराशि कैसी है?

(2) लग्न में यदि ग्रह है तो वह कैसा है?

(3) लग्नेश कैसा ग्रह है और किस राशि में है?

(4) लग्नेश के साथ कैसे ग्रह हैं?

(5) लग्न पर किसकी दृष्टि हैं?

(6) लग्नेश अष्टम वा द्वादशगत तो नहीं हैं?

(7) बृहस्पति लग्न में है अथवा लग्न को देखता है और कैसी राशि में बृहस्पति की स्थिति है?

(8) जाया की आकृति आदि का विचार उसी तरह से किया जाता है जैसे जातक की आकृति का लग्न के नवाँशादि से होता है। अर्थात् जाया की आकृति का विचार जायास्थान के नवाँश से होता है। उदाहरण कुंडली में सप्तम का स्फुट 2।19 है, तो सप्तम स्थान का नवाँश मीन हुआ। अतः बृहस्पति का नवाँश होते के कारण नेत्र किंचित पिंगलवर्ण, आवाज गम्भीर, ऊँची और कद मझोला होगा।

(9) जाया के भाई का विचार जाया स्थान के तृतीय स्थान से होता है। यथा पहली स्त्री के भाई का विचार सप्तम स्थान से तृतीय स्थान अर्थात् नवें स्थान से होता है। द्वितीय भार्य्या की भाई–बहन का विचार द्वादश स्थान से तृतीय अर्थात् जातक के लग्न से द्वितीय स्थान से किया जाता है। इसी प्रकार जाया स्थान के तृतीय से साला, साली का और सप्तम से साढ़ और सरहज का विचार होता है। जाया स्थान के चतुर्थ से सास का और नवम से श्वसुर का विचार होता है।

अति लघुत्तरीय प्रश्न

1. मानव जीवन में विवाह संस्कार कब सम्पन्न होता था?
2. स्त्री का विचार कौन से भाव से किया जाता है?
3. सौतिन का विचार कौन से भाव से किया जाता है?
4. स्त्री कारक कौन ग्रह है?
5. महर्षि जैमिनि के अनुसार स्त्री का विचार कौन से भाव से होता है?

2.3.2 उपखण्ड दो – ज्योतिषशास्त्र के अनुसार विवाह योग

(1) यदि सप्तमाधिपति शुभ युक्त न होकर षष्ठ, अष्टम तथा द्वादश भावगत हो और नीच का हो तो जाया–सुख नहीं होता है।

(2) यदि षष्ठेश, अष्टमेश अथवा द्वादशेश सप्तमगत हो और उसमें शुभग्रह की दृष्टि वा योग न हों अथवा सप्तमाधिपति, 12 का भी स्वामी हो तो स्त्री सुख में बाधा होती है।

(3) यदि सप्तमेश द्वादशगत हो और लग्नेश और चन्द्र–लग्नेश (जन्मराशि का स्वामी) सप्तमस्थ हो तो भी जातक का विवाह सम्भव नहीं होता है।

(4) यदि शुक्र और चन्द्रमा साथ होकर किसी भाव में बैठे हों और शनि और कुज उनसे सप्तमभाव में हों तो भी जातक का विवाह नहीं होता है।

(5) यदि लग्न में, सप्तम में और द्वादशभाव में पापग्रह बैठे हों और पंचमस्थ चन्द्रमा निर्बल हो तो उस जातक का विवाह नहीं होता और यदि अन्य योग से विवाह हो भी तो स्त्री बंध्या होगी।

(6) किसी का मत ऐसा भी है कि द्वादश और सप्तम में दो दो या इससे अधिक पापग्रह बैठे हों और यदि पंचम में चन्द्रमा हो तो जातक स्त्री–पुत्रविहीन होता है।

(7) शनि और चन्द्रमा के सप्तमस्थ होने से प्रायः जातक का विवाह नहीं होता और यदि विवाह हो भी तो स्त्री बंध्या होती है।

(8) सप्तमभाव में पापग्रह रहने से मनुष्य को स्त्री–सुख में बाधा है।

(9) शुक्र बुध के साथ सप्तम में रहने से जातक कलत्रहीन होता है। परन्तु यदि शुभग्रह की दृष्टि हो तो अधिक अवस्था में स्त्री मिलती है।

(10) यदि लग्न से सप्तमभाव अथवा चन्द्र से सप्तमभाव में शुभग्रह हों अथवा शुभग्रह की दृष्टि पड़ती हो अथवा अपने स्वामी की दृष्टि पड़ती हो तो विवाह सुख होता है।

(11) सूर्य स्पष्ट में चार राशि तेरह अंश और बीस कला (4।13।20) जोड़कर जो राश्यादि आवे वह 'धूम' होता है। यदि वही सप्तम स्थान का स्पष्ट हो ऐसे जातक का विवाह नहीं होता है। 'फलदीपिका' में पधूमो वेदगृहैस्त्रयोदश भिरप्यशैः समेते रवैय जैसा लिखा है।

(12) यदि शुक्र और मंगल सप्तमभाव मं हो तो जातक स्त्री–रहित होता है। शुक्र और मंगल के नवम एवं पंचमभाव में रहने से स्त्री बंध्या होती है।

(13) यदि शुक्र किसी पापग्रह के साथ होकर पंचम, सप्तम अथवा नवम भाव में बैठा हो तो जातक का विवाह नहीं होता वा स्त्री–वियोग से पीड़ित रहता है।

(14) यदि शुक्र, बुध, एवं शनि सब के सब नीच वा शत्रु नवमांश में हो जातक स्त्री–पुत्र–विहीन होता है। (और दुःखमय जीवन व्यतीत करता है।)

स्त्री–कुल का ज्ञान

(1) यदि सप्तमेश बली हो तो उसका विवाह श्रेष्ठ धनी कुल में होता है और कन्या रूपवती होती है। यदि सप्तमेश निर्बल हो तो इसके विपरीत फल होता है।

(2) यदि लग्नेश से सप्तमेश बली हो और सप्तमेश शुभ नवाँश में हो अथवा उस पर शुभग्रह की दृष्टि वा योग हो अथवा उच्च हो तो उसकी भार्य्या श्रेष्ठ जाति और श्रेष्ठ–कुल–मर्यादा की कन्या होती है।

(3) यदि लग्नेश सप्तमेश से बली हो और उच्चस्थ वा शुभग्रह के साथ हो और केन्द्र बली त्रिकोण में हो तो वह अपनी भार्य्या से उच्च कुल का होगा।

(4) यदि सप्तमेश लग्नेश से कम बल रखता हो और यदि सप्तमेश अस्त हो अथवा मित्र गृह में हो अथवा नवाँश में नीच राशि का हो तो उस जातक का विवाह अपने से नीच कुल की कन्या से होता है।

(5) यदि लग्नेश सप्तमेश से निर्बल हो और यदि लग्नेश पापग्रह के साथ हो या नीच नवाँश का हो या अष्टमस्थ हो तो जातक अपनी स्त्री से नीच कुल और नीच व्यवहार का होगा।

(6) उपपद से द्वितीय स्थान का स्वामी यदि उच्च राशि में स्थित हो तो उच्च कुल की स्त्री मिलती है और यदि नीच राशि में स्थित हो तो नीच कुल की स्त्री होती है।

लघुत्तरीय प्रश्न

1. प्रथमस्त्री के रंगरूप का विचार कहाँ से किया जाता है?
2. स्थूल शरीर वाली स्त्री कौन–कौन से ग्रहों के संयोग वाली होती है?
3. सप्तम भावस्थ शनि युक्त स्त्री कैसी होती है?
4. पत्नी के भाई का विचार कहाँ से किया जाता है?
5. द्वितीय पत्नी के भाई बहन का विचार कहाँ से किया जाता है?

1.3.3 उपखण्ड तीन–विवाह में स्त्री के गुणदोषादि का विवरण।

यह नीति की बात है और सत्य भी है कि जिसकी स्त्री शुभगुणसम्पन्न होती है उसे गृहस्थाश्रम ही में स्वर्ग–सुख प्राप्त होता है। अतएव पाठकगण इस विषय को ध्यानपूर्वक मनन करें।

(1) लग्न से सप्तम स्थान एवं चन्द्र लग्न से सप्तम स्थान से स्त्रीकामातुरता,

स्त्रीसम्भोग–शक्ति का बोध होता है। लग्न से सप्तमेश, चन्द्रमा से सप्तमेश और शुक्र से भी इन सब विषयों का विचार होता है। इस कारण देखना होगा कि कुण्डली में लग्न से सप्तमस्थान, चन्द्रलग्न से सप्तमस्थान और उन दोनों के स्वामियों और शुक्र की क्या स्थिति है। अर्थात् इन सब पर पापग्रह की या शुभग्रह की दृष्टि है, अथवा ये सबके सब या इनमें से कोई पापमध्यगत तो नहीं है। इनमें से सब या किसी के साथ शुभग्रह है या पापग्रह। लेखक का अनुभव है कि यदि विस्तारपूर्वक इन सब शुभ और अशुभ लक्षणों का विवरण करके एक चक्र बनाया जाय तो उस चक्र के अनुसार फल कहने में सुविधा होगी।

(2) इन्हीं सब नियमों और अन्य नियमों के अनुसार विद्वानों ने ग्रंथान्तर में कतिपय योग बतलाया है जिसका यहाँ उल्लेख किया जाता है। यदि शुक्र चर राशि गत हो, बृहस्पति सप्तमस्थ हो और लगनेश बली हो तो उस जातक की स्त्री पतिव्रता, सुन्तरी और प्रेम करने वाली होती है।

(3) यदि सप्तमेश, बृहस्पति के साथ हो अथवा बृहस्पति से दृष्ट हो अथवा शुक्र, बृहस्पति के साथ हो अथवा शुक्र पर बृहस्पति की पूर्ण दृष्टि पड़ती हो तो स्त्री उपर्युक्त गुणसम्पन्ना होती हुई वह अपने पति के सुख दुख पर सर्वदा ध्यान देती रहेगी।

(4) यदि सप्तमेश बृहस्पति हो तो और उस पर शुक्र और बुध की दृष्टि हो, अथवा बृहस्पति सप्तमस्थ हो और वह पापग्रह की दृष्टि वा योग से वर्जित हो तो उसकी स्त्री भी पतिव्रता, सुन्दरी और चित्त को आर्कषित करने वाली होती है।

(5) यदि सप्तमेश केन्द्र में बैठा हो और उस के साथ शुभग्रह हो, अथवा वह केन्द्रवर्ती सप्तमेश शुभनवांश वा शुभ राशिगत हो तो स्त्री पतिव्रता होती है।

(6) यदि सप्तमेश शुभग्रह के साथ हो अथवा उस पर शुभग्रह की दृष्टि हो तो जातक का स्वभाव विनीत और नम्र होगा, वह धनी और अधिकारी होगा और राजकीय पद में उसकी अच्छी स्थिति होगी तथा उसकी स्त्री प्रेम करने वाली और चित्त को आकर्षित करने वाली होगी।

(7) यदि सप्तम स्थान पर बृहस्पति की पूर्ण दृष्टि हो तो उस की स्त्री दयालु, सुन्दरी और सुचरित्रवती होती है। यदि सप्तम स्थान पर पापग्रह की पूर्ण दृष्टि हो तो उसकी स्त्री झगड़ालू और दुख देने वाली होती है। यदि एक ही कुंडली में कई तरह के योग पाये जाये तो पाठक सावधानी पूर्वक अपनी बुि(की तराजू पर तौल कर अनुमान करेंगे।

(8) यदि लग्नाधिपति सप्तम में अथवा सप्तमाधिपति पंचम में रहे तो जातक अपनी स्त्री के मतानुसार चलने वाला होता है अर्थात् स्त्री का आज्ञानुयायी होता है।

(9) लग्न में राहु, केतु के रहने से स्त्री स्वामी के वशीभूत रहती है।

(10) यदि सप्तमेश शुभग्रह के साथ हो तो स्त्री अच्छी मिलती है। इसी प्रकार यदि सप्तमेश उच्चस्थ, स्वगृही, मित्रगृही, हो तो भी उसकी स्त्री सुशीला होती है। यदि सप्तमेश उच्चस्थ अथवा शुक्र पर बृहस्पति और बुध की दृष्टि पड़ती हो तो स्त्री पतिव्रता होती है तथा बृहस्पति के भी सप्तम स्थान में रहने से स्त्री गुणवती होती है। यदि सप्तमेश केन्द्र में हो और उस पर शुभग्रह की दृष्टि हो, शुभराशिगत हो, अथवा शुभनवांश का हो तो स्त्री पतिव्रता होती है।

(11) यदि शुक्र, उच्च या अच्छे नवांश का हो, अथवा सप्तमेश बृहस्पति के साथ हो, अथवा बृहस्पति की सप्तमेश पर दृष्टि पड़ती हो तो स्त्री पतिव्रता और प्रेम करने वाली होती है।

(12) यदि सप्तम भाव का स्वामी सूर्य्य हो और उसके साथ कोई शुभग्रह हो, अथवा उस पर किसी शुभग्रह की दृष्टि पड़ती हो, अथवा वह सूर्य्य शुभराशिगत हो अथवा शुभनवांश का हो परन्तु वह लग्नेश का मित्र हो तो ऐसे स्थान में उसकी स्त्री आज्ञाकारिणी और सेवा करने वाली होती है।

(13) यदि सप्तम भाव का स्वामी चन्द्रमा हो और उसके साथ पापग्रह बैठा हो अथवा उस पर पापग्रह की दृष्टि हो, अथवा वह पापराशिगत हो, अथवा पाप नवांश में हो तो उसकी स्त्री टेढ़े स्वभाव की और चित्त से कठोर होती है। यदि वही चन्द्रमा, शुक्र के साथ होकर शुभ–राशिगत हो शुभनवांश का हो, मित्र–गृही हो, स्वगृही अथवा उच्च हो तो स्त्री दानशीला और मर्यादित रहती है।

(14) यदि सप्तम स्थान का स्वामी मंगल हो और वह नीच, शत्रुगृही, अस्तगत अथवा शत्रु–द्रेष्काण का हो तो उसकी स्त्री कुल्टा और कुचरित्रा होती है। परन्तु यदि वैसा मंगल मित्रगृही, उच्च, शुभग्रह के साथ अथवा शुभ दृष्ट हो तो यद्यपि उसकी स्त्री निर्दयी होगी तथापि अपने पुरूष की आज्ञाकारिणी और प्रेम करने वाली होगी।

(15) यदि सप्तमेश बुध हो और पापग्रह के साथ हो, अथवा नीचस्थ हो, अथवा शत्रुगृही हो, अथवा अस्त हो और अष्टम या द्वादश सीनगत हो और पापग्रहों से घिरा हो, अथवा उस पर पापग्रह की दृष्टि पड़ती हो तो उस जातक की स्त्री अपने पुरूष की जान लेने वाली होती है और इसके विपरीत रहने से विपरीत फल होता है।

(16) यदि गुरू सप्तमेश और बली हो, अथवा मित्रगृही हो, अथवा उच्चस्थ हो, अथवा स्वगृही हो और गोपुरांश में हो तो जातक की स्त्री की सन्तान उत्तम होती है और स्त्री

स्वयं अच्छे आचरण की एवं दानशीला होती है तथा धार्मिक विचारों से वार्ता करने वाली होती है।

(17) यदि शुक्र, सप्तमेश हो और पापग्रह के साथ हो, अथवा पापदुष्ट हो, अथवा वह शुक्र, नीच वा शत्रुनवांश का हो, अथवा पाप षष्ठांश में हो तो उसकी स्त्री कठोर चित्त वाली, कुमार्गिणी और कुल्टा होती है।

(18) यदि शनि सप्तमेश हो और शुभग्रह के साथ हो, अथवा शुभग्रह के नवांश में हो, मित्रगृही हो तो उसकी पत्नी पुत्रवती, वाचाल और शुभचरित्रा होती है।

(19) यदि शनि सप्तमेश हो, वह पापग्रह के साथ हो और नीच नवांश में हो, अथवा नीच राशिगत हो, अथवा पापग्रह के साथ शत्रुनवांश में हो और पापग्रह से दृष्ट हो तो उसकी स्त्री क्रूरा और कुल्टा होती है।

(20) यदि सप्तमेश शनि बलवान हो और उस पर शुभग्रह की दृष्टि हो तो उसकी स्त्री विनीत, सहायता करने वाली और उत्तम प्रकृति की होती है। यदि उस शनि पर बृहस्पति की दृष्टि हो तो उसकी स्त्री ईश्वर–प्रेमी ब्राह्मण–सेवा में निरत रहने वाली और ज्ञानवती होती है।

(21) यदि राहु अथवा केतु, सप्तमगत हो और उसके पापग्रह हो, अथवा उस पर पापग्रह की दृष्टि हो तो उस जातक की स्त्री छोटे (ओछे) ख्याल की होती है। यदि वह राहु वा केतु, क्रूरनवांश का हो तो उसकी स्त्री अपने स्वामी पर विषप्रयोग करने वाली होती है और अपने को अपयश का भाजन बनाती तथा स्वयं दुखी रहती है।

(22) यदि सप्तमेश किसी पापग्रह के साथ हो और सप्तम स्थान में कोई पापग्रह बैठा हो और सप्तमेश, पापनवांश में हो तो उसकी स्त्री निकम्मी एवं अभागिनी होती है।

(23) यदि सप्तमेश द्व,{12 में बैठा हो, शुक्र निर्बल हो तो उसकी स्त्री अच्छी नहीं होती है। एवं यदि सप्तमेश और शुक्र नीचस्थ हो और शुभदृष्टि से वर्जित हो तो उस जातक की स्त्री निकम्मी होती है।

(24) यदि सप्तमेश के साथ कोई शुभग्रह हो और सप्तमस्थान में भी शुभग्रह हो और सप्तम स्थान पर तथा सप्तमेश पर शुभग्रह की दृष्टि हो तो स्त्री सुशीला होती है।

(25) इसी प्रकार यदि (1) सप्तमेश, दशमेश और शुक्र, शुभ नवांश का हो अथवा बली हो, (2) यदि शुक्र उच्च का हो अथवा शुभवांश का हो, (3) अथवा यदि सप्तमेश बृहस्पति के साथ हो अथवा बृहस्पति की उस पर दृष्टि पड़ती हो अथवा (4) सप्तमेश पर शुक्र और

सूर्य्य की दृष्टि पड़ती हो और बृहस्पति सप्तमस्थ हो तो ऐसे योग वाले जातक की स्त्री प्रिय पतिव्रता और सुलक्षणा होती है और उसके गृह में स्वर्ग का सा सुख प्राप्त होता है।

(26) यदि उपपद से द्वितीय स्थान शुभग्रह के षड़वर्ग का हो अर्थात् उस स्थान का स्पष्ट शुभ नवांश आदि में हो अथवा उपपद से द्वितीय स्थान पर शुभग्रह की दृष्टि हो अथवा शुभग्रह बैठा हो तो जातक की स्त्री रूपवती होती है।

(27) यह विषय ऐसा है कि कुंडलियों का प्रमाण देना उचित नहीं। फल विचरने के समय केवल इसी स्थान में नहीं किन्तु प्रत्येक भाव के विचार में, प्रत्येक बात के विचार में, ग्रहों की उत्कर्षता आदि पर विचार करके फल की उत्कर्षता कहनी होती है। इस विषय को समुचित स्थान में विशेष रूप से लिखा जायेगा और वही नियम सर्वदा लागू होगा। अतः वह नियम स्मरण रखने योग्य है।

निम्नलिखित में सही का चयन कर रिक्त स्थानों की पूर्ति करें–

1. पत्नी के भाई का विचार ..... भाव से होता है। (तृतीय, नवम, सप्तम)
2. बृहस्पति ग्रह है..... तत्व है। (आकाश, जल, वायु)
3. स्त्रीकारक ग्रह.....है। (बृहस्पति, शनि, शुक्र)
4. हिन्दूशास्त्र के अनुसार विवाह.....सम्बन्ध है। (धार्मिक, शुभ, लाभदायक)
5. उपपद से द्वितीय स्थान का स्वामी उच्चराशि में हों तो.....कुल की

स्त्री मिलती है। (उच्चकुल, मध्यमकुल, नीचकुल)

2.1.3.4 उपखण्ड चार– स्त्री के रोगादि का विचार।

(1) (1) उपपद के द्वितीय स्थान, (2) उपपद के सप्तम स्थान से द्वितीय राशि, (3) उपपद से सप्तम भाव का स्वामी जिस राशि में हो उससे द्वितीय राशि, (4) उपपद से सप्तम भाव की नवांश राशि से द्वितीय राशि और (5) उपपद से सप्तमस्थ नवांश का स्वामी जिस राशि में हो उससे द्वितीय राशि से स्त्री के रोगादि का विचार किया जाता है।

निम्नलिखित नियमों में जहाँ यह लिखा गया है कि उपपद से द्वितीय स्थान में अमुक अमुक ग्रहों के रहने से अमुक अमुक रोग से ग्रसित स्त्री होगी, वहाँ पाठक यह समझ लें कि उपपद से द्वितीय ही का केवल अभिप्राय नहीं है, बल्कि (1) उपपद के सप्तम स्थान से द्वितीय, (2) उपपद से सप्तमेश की स्थित राशि से द्वितीय राशि, (3) उपपद से सप्तम भाव की नवांश राशि से द्वितीय राशि और (4) उपपद से सप्तम स्थान के नवांश का स्वामी जिस राशि में गत हो उससे द्वितीय राशि में उन्हीं योगों के होने से वही सब रोग

होंगे।

(क) उपपद से द्वितीय स्थान में यदि शुक्र और केतु दोनों ग्रह बैठे हो तो जातक की स्त्री को रक्प्रदर रोग होता है। (ख) उपपद से द्वितीय स्थान में यदि बुध और केतु दोनों पापग्रह हों तो अस्थिश्राव अर्थात् कठिर प्रदर रोग होता है। (ग) उपपद से द्वितीय स्थान में शनि, सूर्य्य और राहु बैठे हों तो स्त्री को अस्थि–ज्वर होता है। (घ) उपपद से द्वितीय स्थान में बुध और केतु, ये दोनों ग्रह बैठे हों तो स्त्री स्थूल शरीर की होती है। (ड़) उपपद से द्वितीय स्थान में यदि मिथुन या कन्या राशि हो और उसमें शनि और मंगल दोनों ग्रह बैठे हों तो उसकी स्त्री को नासिका रोग होता है। (च) उपपद से द्वितीय स्थान में मेष या वृश्चिक राशि हो और उसमें शनि और मंगल, दोनों ग्रह बैठे हों तो भी स्त्री को नासिका रोग होता है। (छ) उपपद से द्वितीय स्थान में मिथुन, कन्या, मेष अथवा वृश्चिक राशि हो और उसमें बृहस्पति और शनि बैठे हों तो कर्ण रोग, नाड़ी का निसारण रोग वाली स्त्री होती है। (ज) उपपद से द्वितीय स्थान में मिथुन, कन्या, वृश्चिक अथवा मेष राशि और बृहस्पति और राहु हों तो स्त्री को दाँत का रोग होता है। (झ) उपपद से द्वितीय स्थान मे कन्या अथवा तुला राशि हो और उसमें शनि और राहु दोनों हों तो उसकी स्त्री पघगुली (लुल्ही) अथवा बात रोग वाली होती है।

उपर्युक्त योगों में यदि उन ग्रहों पर शुभग्रह की दृष्टि हो अथाव उन ग्रहों के अतिरिक्त कोई शुभग्रह उनके साथ हो तो वैसे योग में स्त्री को रागि नहीं होता है। इस स्थान पर भी जैसा ऊपर लिखा जा चुका है, स्मरण रखना चाहिए कि ये योग केवल उपद से द्वितीय स्थान में ही नहीं होता है। पाठकों के सुविधा के लिये, सुगमता से देखने की विधि बतलाई जाती है। जिस कुंडली का विचार करना हो, प्रथम उसमें यह देखें कि शुक्र और केतु एक साथ हैं या नहीं। इस प्रकार बुध और केतु, शनि और मंगल, बृहस्पति और शनि, बृहस्पति और राहु, अथवा शनि और राहु एक साथ हैं कि नहीं। यदि इन योगों में से कोई योग न हो तो इसके पीछे समय नष्ट करना व्यर्थ हैं और यदि इनमें से एक या एक से अधिक योग हो और यदि वे ग्रह उन राशियों में हों जिनका उल्लेख ऊपर हो चुका है तो उपर्युक्त नियमानुसार विचार करें।

(2) यदि शनि, मंगल, और सूर्य्य, शुक्र से चतुर्थ और षष्ठ स्थानगत हो तो पुरूष की आँखों के सामने उसकी स्त्री जल कर मर जाती है।

(3) यदि द्वादश स्थान और षष्ठ स्थानों में से एक में सूर्य्य और दूसरे में चन्द्रमा बैठे हों तो स्त्री और पुरूष दोनों काने (एकाक्ष) होते हैं।

(4) यदि नवम अथवा पंचम स्थान में सूर्य्य और शुक्र बैठा हो तो कभी–कभी उसकी स्त्री

किसी अंग से हीन होती है।

स्त्री की मृत्यु

(1) उपपद से द्वितीय स्थान यदि पापराशिगत हो और उसमें पापग्रह बैठा हो तो जातक की स्त्री की मृत्यु होती है, अथवा जातक संन्यास ग्रहण करता है। परन्तु स्मरण रहे कि इस योग में सिंह राशि पापराशि नहीं है और सूर्य्य इस योग के लिये पापग्रह नहीं कहा जा सकता और यह भी स्मरण रहे कि उपर्युक्त योग में यदि शुभग्रह की दृष्टि होगी तो योग का भंग होगा अर्थात् न तो स्त्री मरेगी और न जातक संन्यासी होगा।

(2) उपपद से द्वितीय स्थान में राहु और शनि दोनों के रहने से जातक लोकनिन्दा के कारण अपनी स्त्री को त्योग देता है अथवा उसकी स्त्री मर जाती है।

(3) निम्नलिखित योगों के रहने से जातक की जीवितावस्था ही में उसकी स्त्री मर जाती है। (1) यदि कोई पापग्रह सप्तम स्थान में हो और उस पर पापग्रह की दृष्टि भी हो। (2) यदि कोई निर्बल पापग्रह सप्मतस्थान में हो। (3) यदि पंचमेश, सप्तमस्थानगत हो। (4) अथवा अष्टमेश, सप्तम स्थानगत हो। (5) अथवा नीच का बृहस्पति, सप्तमगत हो। (6) अथवा शुक्र पापग्रह के साथ होकर सप्तमस्थ हो और इन सब स्थानों पर शुभग्रह की न योग हो और न दृष्टि हो।

(4) स्त्री के जन्म–नक्षत्र से पुरूष का जन्म–नक्षत्र तक गिन जाने पर जो संख्या आवे उसको 7 से गुणा कर गुणनफल में 28 से भाग देने पर जो शेष रहे उसका नाम संख्या (प) रखें। अब यदि (प) संख्या (क) संख्या से विशेष हो तो स्त्री की मृत्यु पहले होगी और यदि (क) संख्या (प) से विशेष हो तो स्त्री से पूर्व पुरूष की मृत्यु होगी। यदि (क) और (प) एक ही संख्या आ जाये तो स्त्री और पुरूष की मृत्यु थोड़े ही समय के अन्तर में होगी। उदाहरण रूप से यदि मान लिया जाये कि स्त्री का जन्म आश्लेषा नक्षत्र में है और पुरूष का जन्म भरणी नक्षत्र में, तो आश्लेषा से भरणी तक गिनने पर 21 (इक्कीस) हुआ। इसको 7 से गुणा करने पर 147 होता है। पुनः इसमें 28 का भाग देने से 7 शेष रहा, जो (क) संख्या हुई। इसी प्रकार भरणी से आश्लेषा तक गिना जाये तो 7 होगा। इसको 8 से गुणा करने पर 56 हुआ और इस गुणनफल में 28 का भाग दिया, शेष शून्य रहा, जो (प) संख्या हुई। अब (क) संख्या (प) से विशेष है, इस कारण पुरूष की मृत्यु पहले कही जायेगी।

(5) यदि मंगल सप्तम स्थान में हो और शुक्र के नवांश में हो और यदि सप्तमेश, पंचमगत हो तो जातक को स्त्री–मृत्यु का दुख भागना पड़ता है।

(6) इसी प्रकार यदि द्वितीयेष और सप्तमेश साथ होकर दुःस्थान (6,8,12) में हो, अथवा

तृतीयभाव में हो तो उस जातक को तीन स्त्री–मृत्यु का दुख भागना पड़ता है। परन्तु यदि द्वितीयेश और सप्तमेश बलवान हो तो स्त्री सुरक्षित रहेगी।

(7) (क) लग्न स्पष्ट को सप्तमेश के स्पष्ट से घटाने पर जो शेष रहे उससे किसी राशि का बोध होगा। जब गोचर का बृहस्पति उस राशि में अथवा उसके त्रिकोण में जाता है तो स्त्री की मृत्यु होती है। (ख) यदि सप्तमेश के स्पष्ट को लग्न के स्पष्ट से घटा दिया जाये तो उस शेष राशि में अथवा उसके नवांश में जब गोचर का बृहस्पति जाता है तो उस समय भी स्त्री की मृत्यु की सम्भावना होती है।

(8) निम्नलिखित सात ग्रहों को छिद्र ग्रह कहते हैं। (पहला) अष्टमेश, (दूसरा) अष्टमगतग्रह, (तीसरा) अष्टमभाव पर दृष्टि डालने वाले ग्रह, (चौथा) लग्न से बाइसवें द्रेष्काण का स्वामी (जिसको खर कहते हैं), (पाँचवा) अष्टमेश के साथ वाला ग्रह, (छठा) जन्म का नक्षत्र जिस नवांश में हो उस नवांश से चौसठवें नवांश का स्वामी और (सातवाँ) अष्टमेश का अतिशत्रु ग्रह। इन छिद्रग्रहों में से जो बली हो उसकी दशा में जातक को स्त्री–मृत्यु–भय होता है। इसी प्रकार सप्तम का जो छिद्र होगा उन ग्रहों की दशा–अन्तरदशा में जातक की स्त्री को मृत्यु–भय होता है।

(9) यदि सप्तमेश और स्त्री कारक शुक्र, शुभग्रह और सप्तमस्थ हो और यदि सप्तम स्थान बली हो तथा उस पर अर्थात् सप्तम स्थान पर पापग्रह की दृष्टि अथवा योग न पड़ता हो तो स्त्री पुरूष की एक साथ मृत्यु होती है। ऐसे योग में सप्तम स्थान का जो छिद्रग्रह होगा उसी की दशा में मृत्यु सम्भव होती है।

(10) यदि कन्या–लग्न का जन्म हो और उसमें सूर्य्य हो तथा सप्तम स्थान में मीन का शनि हो तो शनि की दशा में स्त्री की मृत्यु होती है।

(11) यदि कन्या लग्न हो और रवि, कन्या राशिगत हो और मंगल सप्तमस्थ हो तो ऐसे योग में जातक अपनी मृत्यु के समय रंडवा रहता है, एक से अधिक विवाह भी क्यों न हों

(12) यदि नीच का शुक्र अथवा चन्द्रमा, चतुर्थ स्थान में हो तो स्त्री की मृत्यु होती है और इसी योग में यदि सप्तमेश पाश अथवा सर्प द्रेष्काण का हो तो उसकी स्त्री की मृत्यु फाँसी लगा कर होती है।

(13) यदि सप्तमेश का नवांशधिपति नीचस्थ हो अथवा शत्रु के नवांश में हो अथवा पापग्रहों से घिरा हो और पापग्रह की दृष्टि हो तो इन सब योगों से भी मृत्यु होती है।

(14) यदि षष्ठ में मंगल, सप्तम में राहु, और अष्टम में शनि रहे तो भार्य्या जीवित नहीं रहती है।

(15) लग्न, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम वा द्वादश में मंगल रहने से दामाद दीर्घजीवि नहीं होता है और जातक की स्त्री भी दीर्घजीवि नहीं होती है।

(16) ज्योतिषशास्त्र का यह बहुत बड़ा रहस्य है कि यदि शुक्र, द्विस्वभाव राशिगत हो और सप्तमस्थान पीड़ित हो अर्थात् सप्तम स्थान पर पापग्रह की दृष्टि हो अथवा पापग्रह बैठा हो तो वैसे स्थान में यह अवश्य पाया गया है कि जातक को स्त्री की मृत्यु का शोक अवश्य भोगना पड़ता है।

बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. स्त्री स्थूल शरीर वाली होती है।

(अ) पृथ्वीराशि और पृथ्वी ग्रह (ब) पृथ्वीराशि और वायुग्रह

(स) पृथ्वीराशि और अग्नितत्व (द) पृथ्वीराशि और आकाशतत्व

2. दुर्बल एवं कृशकाया वाली जाया होती है।

(अ) वायु एवं जलतत्व (ब) पृथ्वी एवं अग्नितत्व

(स) वायु एवं शुष्कग्रह (द) वायु एवं शनि

3. पत्नी की आकृति का विचार किया जाता है।

(अ) सप्तम स्थान एवं राशि से (ब) सप्तमराशि एवं भाव से

(स) सप्तम भाव एवं लग्न से (द) सप्तमभाव एवं उसके नवांश से

4. पत्नी का सुख नहीं मिलता है।

(अ) सप्तमभावेश नवम में हो (ब) सप्तमभावेश पंचम में हो

(स) सप्तम भावेश तृतीय में हो (द) सप्तमभावेश अष्ट एवं नीच हो

5. जातक स्त्रीरहित होता है।

(अ) शुक्र मंगल सप्तम भाव में हो (ब) शुक्रमंगल चतुर्थ में हों

(स) बृहस्पति शुक्र षष्ठ भाव में हो (द) शुक्रमंगल अष्टम भाव में हो

ज्येष्ठ विचार में विशेष

वर ज्येष्ठ या कन्या ज्येष्ठा या ज्येष्ठा मास हो, तो ऐसी दो ज्येष्ठ की अवस्था में विवाह करना मध्यम है। एक ज्येष्ठ में करना शुभ है और पुरूष ज्येष्ठ, स्त्री ज्येष्ठ, मास ज्येष्ठ, इन तीनों की स्थिति में या अवस्था में विवाह करना वर्जित है।

ज्येष्ठ स्त्री, ज्येष्ठ पुरूष का परस्पर विवाह नहीं करना चाहिए। यदि विवाह हो, तो दोनों का नाश होता है।

दस वर्ष के पश्चात् कन्या शुद्धि रहित होती है, तो उसकी तारा शुद्धि और चन्द्र शुद्धि और लग्न शुद्धि को देखकर विवाह करने का उद्योग करना चाहिए।

कन्या का लक्षण

जिस स्त्री की वाणी हंस–सर्दश मीठी हो, शु(वर्ण हो, नेत्र का वर्ण मधु सदृश हो या पिंगल (सफेद़काला) हो। यदि ऐसी कन्या से विवाह हो, तो पुरूष को गृहस्थ सुख प्राप्त होता है।

वर का लक्षण

जाति में उत्तम हो, विद्यायुक्त हो, युवक हो, स्वभाव का अच्छा हो, स्वस्थनिरोगी हो, परिवार बड़ा हो, पत्नी की इच्छा रखता हो, धन–सम्पदा युक्त हो, ऐसे आठ लक्षणों से युक्त वर को कन्या देना, उचित है।

कन्या के दोष

लम्बी नासिका वाली, लम्ब ओष्ट वाली, कुष्ठ रोग वाली, जिसकी बोली लड़खड़ाती

हो रोगिणी हो, जिसके भाई न हो, जिसके देह से दुर्गन्ध आती हो, उस कन्या के साथ विवाह नहीं करना चाहिए।

वर के दोष

विद्वानों ने कहा है कि अधिक दूर रहने वाले, मोक्षधर्मी, योगाभ्यासी, यु(करने वाले और दरिद्र पुरूष को कन्या नही ंदेनी चाहिए।

प्रश्नलग्न से अरिष्ट विचार

प्रश्न कुण्डली में यदि चन्द्र बलवान होकर प्रश्न लग्न से षष्ठ या अष्टम स्थान में हो, तो विवाह से अष्टम वर्ष में स्त्री–पुरूष दोनों को अरिष्ट कहना चाहिए।

यदि प्रश्न लग्न में चन्द्र हो और चन्द्र से सप्तम स्थान में मंगल हो, तो विवाह से अष्टम वर्ष में पति को अरिष्ट जानना चाहिए।

यदि प्रश्न लग्न में पापग्रह अपने नीच स्थान पर हो या शत्रुग्रह से दृष्ट हो या पापग्रह पंचम भाव गत हो, तो सन्तान नाश और स्त्री वेश्या हो, ऐसा समझना चाहिए।

जिस कन्या के विवाह के प्रसंग का प्रश्न हो, प्रश्न के समय अकस्मात् जलकुम्भ भंग हो या निद्रा नाश हो या आसन भंग हो, या पादुका भंग हो आदि अपशकुन से उस कन्या को विधवा योग है, जानना चाहिए।

–अभ्यास प्रश्न–

सत्य/असत्य प्रश्न–

1. ज्योतिषीय उपायों द्वारा ज्येष्ठ बालक का विवाह ज्येष्ठ मास में किया जा सकता है। (सत्य/असत्य)
2. हिन्दूधर्मानुसार विवाह एक धार्मिक संस्कार है। (सत्य/असत्य)
3. सप्तम स्थान से भार्या का विचार करना चाहिए। (सत्य/असत्य)
4. स्त्री के रंगरूप विचार के विषय में ज्योतिष के द्वारा नहीं जाना जा सकता। (सत्य/असत्य)
5. बृहस्पति का आकाश तत्व है। अतः श्रोत्र का विचार गुरू से करना चाहिए। (सत्य/असत्य)

1.4 सारांश–

इस ईकाई में आपने विवाह संस्कार के विषय में विस्तृत रूप से अध्ययन किया होगा। भारतीय विवाह विश्व के भिन्न–भिन्न सम्प्रदायों एवं भिन्न–भिन्न धर्मों एवं भिन्न वर्गों से अलग तरह की भावना से ओत–प्रोत होता हुआ यह संस्कार सम्पन्न किया जाता रहा है। इस ईकाई में आपने स्त्रीकुल के विषय में वह कैसा होना चाहिए, स्त्री का स्वभाव एवं गुण–दोषों के विषय में अध्ययन किया होगा। एवं स्त्री के सम्पूर्ण साहित्य के विषय में अध्ययन किया होगा। यह सभी क्यों आवश्यक है? इस प्रकार के प्रश्नों का एक ही उत्तर मिलता है कि यह सभी जानकर एक अच्छे सुशिक्षित एवं आदर्शपूर्ण समाज का निर्माण करना और समाज निर्माण के बल पर ही राष्ट्र का निर्माण होता है। अतः इन सभी विषयों को ध्यान में रखते हुए ही विवाह संस्कार को सम्पन्न करना चाहिए।

1.5 पारिभाषिक शब्दावली–

दिव्यदृष्टि– देवताओं की दृष्टि।
निस्वार्थ– लोक कल्याण के लिए।
सानन्द– आनन्द के साथ।
सौतिन– पहली पत्नी के रहते दूसरी पत्नी रखना।
सप्तमेश– सप्तम घर का स्वामी।
प्रबलता– अत्यधिक बल के साथ।
पृथ्वीराशि– जिस में पृथ्वी तत्व अधिक हो।
जायाभाव– पत्नी का घर या भाव।
वायुतत्व– जिसमें वायु तत्व की अधिकता हो।
निर्जल– जल से रहित।
शुष्क ग्रह– सूखा ग्रह जहाँ जल, वायु, नहीं है।

नवांश– राशि के नवें भाग का नाम।
पिंगलवर्ण– शहद के सदृश रंग वाला।
षष्ठेश– रोगेश या छठे घर का स्वामी।
अष्टमेश– आठवें घर का मालिक।
सप्तमाधिपति– सातवें घर का स्वामी।
कुज– कु अर्थात् पृथ्वी और कुज उसकी संतान मंगल।
बन्ध्या– जिसके बच्चे नहीं हो।
कलत्रहीन– पत्नी के रहित।
धूम– एक योग सूर्य से होने वाला।
रूपवती– सुन्दर रंगरूप आकार वाली।
केन्द्र– प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, दशम भाव।
त्रिकोण– प्रथम, नवम एवं पंचम भाव।
आकर्षित– खिंचवा, अपनी ओर।
कुचरित्रा– दुःश्चरित्रा, चरित्रहीन।
कुमार्गिणी – कठिन मार्ग।
कूरनवांश – दृष्ट ग्रह का नवांश।
अस्थिश्राव – हड्डियों का बहना।
अस्थिज्वर – हड्डियों में बुखार होना।

1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अतिलघुत्तर

1. विद्या अध्ययन के उपरान्त।
2. स्त्री का विचार सप्तम भाव से किया जाता है।
3. सप्तम से षष्ठ अर्थात् द्वादश भाव से किया जाता है।
4. शुक्र स्त्रीकारक ग्रह है।
5. द्वादश भाव के पदलग्न के द्वितीय भाव से।

लघुत्तर प्रश्नोत्तर–

1. पहली स्त्री के रंगरूप का विचार सप्तमभावस्थराशि एवं सप्तम भाव में स्थित ग्रह से करना चाहिए।
2. यदि सप्तम भाव में जलराशि हो, जलचर ग्रह हो, अथवा जलचर ग्रह की दृष्टि हो तो स्त्री स्थूल होती है।
3. सप्तमभाव में शनि हो तो स्त्री दुर्बल एवं तीक्ष्ण बु(ि से युक्त होती है।
4. पत्नी के भाई का विचार जाया भाव के तृतीय स्थान से होता है।
5. द्वितीय पत्नी के भाई बहन का विचार द्वादश स्थान से तृतीय भाव से किया जाता

है। अर्थात् लग्न से द्वितीय भाव से किया जाता है।

सत्य/असत्य की उत्तरमाला–

1. असत्य। 2. सत्य। 3. सत्य। 4. असत्य। 5. सत्य।

रिक्तस्थानों के उत्तर।

1. नवम भाव से। 2. आकाश तत्व। 3. शुक्र।4. धार्मिक। 5. उच्चकुल।

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर–

1. (अ)।2. (द)।3. (द)।4. (द)।5. (अ)।

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

1. फलदीपिका, व्याख्याकार– गोपेश कुमार ओझा, (1981) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
2. कर्मठगुरूः, मुकुन्दबल्लभ रचित, (1982) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
3. क्यों (धर्म दिग्दर्शन पूर्वार्ध), स्वामी करपात्री जी महाराज रचित, (2067) माधव विद्या भवन श्रीधाम 150, पुरानी गुप्ता कालोनी दिल्ली–9
4. क्यों (धर्म दिग्दर्शन उत्तरार्ध)।
5. तजिक–नीलकण्ठी, पं. सीताराम शर्माकृत, (1992) चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी।
6. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द शास्त्री रचित, (2008) भारतीय ज्ञानपीठ 18 इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड नई दिल्ली–110003
7. संस्कार प्रकाश, डा. भवानी शंकर त्रिवेदी कृत, (1986) श्री लालबहादुरशास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ शहीद जीतसिंह मार्ग नई दिल्ली 110016
8. ज्योतिष–रत्नाकर, देवकीनन्दन सिंह, (1983) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
9. भारतीय ज्योतिष विज्ञान, डा. सुरकान्त झा कृत, 2006, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी के0 37/118 गोपाल मन्दिर लेन वाराणसी।
10. सन्तान सुख सर्वांग चिन्तन, मृदुलात्रिवेदी कृत, (1990) 24 महानगर विस्तार ई0–40 कारपोरेशन क्वार्टर के सामने पीली कालोनी लखनऊ 226006
11. मुहूर्त चिन्तामणि– गोविन्द दैवज्ञ विरचित (2005) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।
12. वृहद्पाराशर होराशास्त्र पं. पद्मनाभ शर्मा (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।
13. वृहद्जातकम (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।

1.8 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. संस्कार प्रकाश, डा. भवानी शंकर त्रिवेदी कृत, (1986) श्री लालबहादुरशास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ शहीद जीतसिंह मार्ग नई दिल्ली 110016

2. मुहूर्त चिन्तामणि– गोविन्द दैवज्ञ विरचित (2005) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।
3. फलदीपिका, व्याख्याकार– गोपेश कुमार ओझा, (1981) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द शास्त्री रचित, (2008) भारतीय ज्ञानपीठ 18 इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड नई दिल्ली–110003
5. वृहद्पाराशर होराशास्त्र पं. पद्मनाभ शर्मा (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।

1.1.9 निबन्धात्मक प्रश्न–

1. सप्तमभाव से पत्नी का विचार क्यों किया जाता है? कारण स्पष्ट करें।
2. द्वितीय भार्या का विचार एवं आकृति का विचार कौन–कौन से ग्रहों के माध्यम से किया जाता है? स्पष्ट करें?
3. कन्या के गुणदोषों का विस्तृत रूप में विवेचन करें।
4. ज्येष्ठ लड़के का विचार क्यों आवश्यक है? विस्तृत रूप से स्पष्ट करें?
5. हिन्दूशास्त्र के अनुसार विवाह के विषय में स्पष्ट उल्लेख करें?

इकाई– 2 मांगलिक विचार एवं परिहार

रूपरेखा–

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 मुख्य भाग खण्ड एक
    2.3.1 उपखण्ड एक – मांगलिक विचार एवं मांगलिक योग।
    2.3.2 उपखण्ड दो – मंगल दोष अपवाद।
    2.3.2 उपखण्ड तीन – मांगलिक योग एवे मांगलिक दोष परिहार।
2.4 सारांश
2.5 पारिभाषिक शब्दावली
2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 सन्दर्भ ग्रंथों की सूची
2.8 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना –

भारतीय ज्योतिष का वर्चस्व इस भूमण्डल पर आज से वहीं है अपितु यह सदियों से हैं यहाँ तक कह सकते हैं कि जब से ब्रह्मण्ड की संरचना ईश्वर ने की होगी तब से ज्योतिष शास्त्र का प्रादुर्भाव हुआ होगा। ज्योतिष के विषय में भिन्न–भिन्न मत–मतान्तर शास्त्रों में मिलते हैं परन्तु यह भी निश्चित है कि ज्योतिष का जन्म भारतवर्ष में ही हुआ है। महर्षि पाराशर के अनुसार सात ग्रहों की परिकल्पना की गई है और दो छाया ग्रह राहु और केतु है जिन्हें ग्रहों की श्रेणी में नहीं रखा गया है। तथापि आधुनिक वैज्ञानिकों ने कुछ अन्य पिण्डों जैसे प्लूटों, नेपच्यून आदि को खोज निकाला हैं परन्तु उनका अपना कोई अस्तित्व नहीं है। इसलिए वह सामान्य जगत को प्रभावित करने में असमर्थ हैं। क्योंकि सातों ग्रहों का सम्बन्ध मेष–वृष आदि राशियों के साथ है इसलिए वह जगत के प्रत्येक जीव प्रभावित करते है। राहु और केतु को महर्षि पाराशर जी ने छाया ग्रह कहा है उसका अर्थ ये मानों अन्धकार, इसलिए राहु और केतु जिस राशि एवं ग्रह के साथ जन्मकुण्डली में होते है, उसी राशि, भाव एवं ग्रह के गुण एवं दोषों को वृद्धि करके फल देते है। एवमेव हम इस ईकाई में चर्चा कर रहे हैं मंगल ग्रह की, मंगल शब्द का वास्तविक अर्थ है कल्याण वाचक और मंगल हमेशा कल्याण ही करता है इसके विषय में हम विस्तृत रूप से इस ईकाई के माध्यम से चर्चा करेंगे।

2.2 उद्देश्य–

आज समाज की स्थिति यह बन चुकी है कि मंगल, राहु–केतु एवं शनि ग्रहों के माध्यम से सड़कछाप दैवज्ञों द्वारा उपर्युक्त ग्रहों की भयावह स्थिति उत्पन्न करके समाज में ज्योतिष के नाम पर लोगों को ऐंठा जाता है जबकि ज्योतिष स्वयं में एक विज्ञान है और विज्ञान का शाब्दिक अर्थ होता है कि जिस विषय में विशेष ज्ञान हो। मंगल शंब्द कल्याण का वाचक है लेकिन ग्रहों में सेनापति है। सेनापति प्रायः कड़क और दबंग की तरह हुआ करता है यदि ऐसा न हुआ तो सेना विद्रोह कर देती है सेनापति नियमों का पालन करने वाला होता है। इसलिए जिस व्यक्ति की जन्म कुण्डली में मंगलदोष होता है उसके नियमों एवं विचारों के समक्ष सामान्य लोग नहीं टिक पाते है और लोग इस प्रकार के व्यक्ति को क्रूर या दुष्ट कह दिया करते है जो शास्त्र के विरूद्ध है। इसक सबसे बड़े दोषी है जो लोग ज्योतिष का ज्ञान नहीं रखते है। अतः इस ईकाई का प्रमुख उद्देश्य है कि मंगल दोष कैसे होता है और यदि मंगल दोष है तो उसका समाधान क्या होगा और क्या दोष मंगल भंग भी हो जाया करता है। इन सभी अनसुलझे विषयों के बारे में हम इस ईकाई में अध्ययन करेंगे।

2.3 मांगलिक विचार एवं परिहार

2.3.1 मांगलिक विचार एवं मांगलिक योग

भारतीय ज्योतिष में नौ ग्रहों एवं 12 राशियों की कल्पना की गई है। खगोल विज्ञान के अनुसार आकाश को बराबर बारह भागों में बाँट देने से प्रत्येक भाग 30 अंश का

होगा और इस प्रकार से बारह भागों का मान 360 अंश हो जायेगा जिसको भचक्र या राशि चक्र के नाम से पुकारा जाता है। इसी राशिचक्र को नक्षत्र चक्र भी कहते हैं क्योंकि एक राशि के नौ बराबर भाग कर देने से कुल भागों की संख्या 12ग9=108 हो जाया करती है। जिसे नक्षत्र चरण के नाम से जाना जाता है। अश्वनी, भरणी आदि सत्ताईस नक्षत्रों के प्रत्येक के चार–चार चरण हुआ करते हैं। सवा दो नक्षत्रों के मूल से एक राशि का निर्माण होता है। इन्हीं राशियों क ऊपर शासन करने वाले ग्रह हैं। सूर्य, चन्द्र, मंगलादि जिनका योग व्यक्ति की जन्मकुण्डली में अपने जन्म–जन्मान्तरों में किये गये शुभाशुभ कर्मो के फलस्वरूप हुआ करता है। व्यक्ति तभी राजा होता हैं, जब व्यक्ति ने जन्म–जन्मान्तरों तक शुभ कर्मों का कोष जमा किया हो अन्यथा व्यक्ति सामान्य लोगों की तरह पैदा होता है, और मृत्यु को प्राप्त होता है। व्यक्ति स्वयं के कर्मों के वशीभूत इस संसार में राजा अथवा भिखारी के घर में जन्म लेता है और अपने कर्मों को भोगता हुआ मृत्यु को प्राप्त होता है। भाारतीय ज्योतिष शास्त्र का इस जन्म–मरण रूपी च्रक में विशेष योगदान है। ज्योतिष शास्त्र सूचक के नाम से प्रसिद्ध है अपितु सूचक शास्त्र क्योंकि व्यक्ति के विषय में पूर्व में शुभ या अशुभ समय के विषय में पूर्व में ही बतलाने वाला शास्त्र है। इस ईकाई में हम अध्ययन करेंगे मंगल ग्रह के विषय में, मंगल ग्रह की नौ ग्रहों में अहम् भूमिका है। सूर्य एवं चन्द्रमा को ग्रहों में राजा एवं रानी की श्रेणी में माना गया हैं क्योंकि सूर्य पुरूष ग्रह है और चन्द्रमा स्त्री ग्रह। सूर्य और चन्द्रमा के द्वारा व्यक्ति विशेष रूप से प्रभावित होते है और ज्योतिष जगत दोनों ग्रह प्रत्यक्ष दृग्गोचर भी होते है। इनके विषय में कहा भी गया है कि

अप्रत्यक्षाणि शास्त्राणि विवादस्तत्र केवलः।
प्रत्यंक्ष ज्यौतिषं शास्त्रं चन्द्रा कौं यत्र साक्षिणौ।।

अन्य पाँच ग्रहों को ताराग्रह कहा गया है क्योंकि यह स्वयं के प्रकाश से प्रकाशिन न होकर सूर्य से प्रकाश लेकर पृथ्वीवासियों को प्रभावित करते है। जिस प्रकार से दर्पण के ऊपर सूर्य की किरणें डाले तो वह प्रतिबिम्बित होकर किसी अन्य स्थान पर अपना प्रभाव दिखाती है। आपने प्रायः देखा होगा कि जब दर्पण के ऊपर सूर्य की किरणें डालते हैं तो उनमें भयंकर उष्णता रहती है, परन्तु वह जब किरणें वहाँ से प्रत्यावर्तित होकर किसी अन्य स्थान पर पड़ती हैं, तब उनमें शीतलता रहती है। ठीक इसी प्रकार से ग्रहों का अपना स्वयं का प्रकाश न होने के कारण यह भी सूर्य की तरह तेज एवं तीखी किरणों से प्रभावित नहीं कर सकते। आकाश में प्रत्येक ग्रहों की अपनी–अपनी कक्षा है, उसी प्रकृति एवं गुणधर्म के फलस्वरूप वह हमें प्रभावित करते है।

मंगल ग्रहों में सेनापति है, इसलिए वह सभी ग्रहों में विशेष प्रभावशाली माना जाता है, क्योंकि सेनापति कभी भी शान्त एवं प्रेम से बोलने वाला नहीं होता यदि ऐसा हो तो सेना कभी अपने सेनापति की आज्ञा के आगे नतमस्तक होकर मरने और मारने के लिए तैयार नहीं होगी। दूसरी ओर, सेनापति नारियल के फल की तरह होते है। बाहर से कठोर एवं अन्दर से कोमल, इसलिए मंगल ग्रह की गतिस्थिति भी कुछ इसी प्रकार की है। मंगल का शाब्दिक अर्थ है कल्याण वाचक अर्थात् कल्याण करने वाला, लेकिन आज मंगल ग्रह को तथाकथित ज्योतिषियों ने एक भयानक एवं कष्टदाई ग्रह की पंक्ति में खड़ा कर दिया है।

भारतीय ज्योतिष में व्यक्ति के भूत–भविष्य एवं वर्तमान स्थिति के विषय में जानने के लिए बारह भावों की कल्पना की हैं। प्रत्येक भाव का व्यक्ति क जीवन में घटित होने वाली घटनाओं के विषय में, उसके जीवन में आवश्यकताओं के विषय में विचारणीय विषयों के सम्बन्ध में विचार किया जाता है एवं व्यक्ति उन घटनाओं को घटित होने के पूर्व ही जानकारी प्राप्त कर सकता है। इस ईकाई में मांगलिक योग के विषय में चर्चा करेंगे। प्रायः व्यक्ति की जन्मपत्री में प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम, एवं बारहवें घर में यदि मंगल की स्थिति हो तो मंगली योग होता है।

प्रथम भाव–में मंगली योग के विषय में विचार करें तो भाव प्रथम जन्मकुण्डली का अहम स्थान रखता है। प्रथम भाव से व्यक्ति के शरीर से सम्बन्धित समस्त बिन्दुओं के विषय में विचार किया जाता है। यदि व्यक्ति का शरीर स्वस्थ है तो व्यक्ति कुछ भी कर गुजरने की क्षमता रखता है। इसी प्रकार से यदि प्रथम भाव पीड़ित है तो व्यक्ति कितना भी साहसी क्यों न हों, बुद्धिमान क्यों न हो, परन्तु वह लाचार होकर जीवन यापन करता है। इसी प्रकार से यदि मंगल ग्रह स्थिति प्रथम भाव में रहती है तो ऐसा व्यक्ति दबंग और क्रूर स्वभाव एवं अपने सामने किसी को खड़ होने का साहस नहीं होने देगा, जिसके कारण वह व्यक्ति समाज में निन्दित कहलाता है।

चतुर्थ भाव–जन्मांग चक्र का भाव चतुर्थ व्यक्ति के जीवन में मूलभूत सुविधाओं को प्रदान करने वाला होता है, जैसे भूमि, भवन, वाहन आदि लेकिन शरीर में उसका स्थान पेट का स्थान है। प्रायः नकारात्मक एवं सकारात्मक दोनों धारायें एक साथ रहती है। इसलिए सकारात्मकता के कारण चतुर्थ भावस्थ मंगल भूमि, भवन, वाहन को देने वाला होता है और नकारात्मकता के चलते उदर में विकार पैदा करता है। चतुर्थ भाव में स्थित होकर मंगल सप्तम स्थान एवं दशम स्थान तथा एकादश भाव को अपनी विशेष दृष्टि डालता है और उन–उन स्थानों को प्रभावित करता है।

सप्तम भाव–भाव सप्तम का जन्मांग चक्र में अहम स्थान है। इस स्थान में अत्यंत कष्टप्रद एवं अत्यन्त नाजुक स्थान भी कहते है क्योंकि यहाँ से पत्नी, व्यापार आदि का विशेष रूप से विचार किया जाता है। यदि सप्तम भाव में क्रूर ग्रह की स्थिति हो तो सप्तम भाव पीड़ित होगा और सप्तम भाव से मिलने वाले सुख–संसाधनों में कमी आने के कारण व्यक्ति प्रभावित होता है। इस भाव को मारक स्थान भी कहा गया है। प्रायः आपने देखा होगा कि व्यक्ति की मृत्यु मं 40 प्रतिशत भूमिका स्त्री का झमेला या व्यापारादि में हानि के द्वारा होती है।

अष्टम भाव–अष्टम भाव से व्यक्ति की आयु एवं मृत्यु के नाम से जाना जाता है। अष्टम स्थान पर शुभ ग्रहों की दृष्टि एवं अष्टमेश एवं लग्नेश का शुभयोग होने से व्यक्ति दीर्घायु होता है और यदि इसके विपरीत हो तो अल्पायु होता है। अष्टम भाव को मारक स्थान भी कहा गया है।

महर्षि पाराशर के अनुसार–

अष्टमं हि आयुषः स्थानम्, अष्टमाद् अष्टमं च यत्।
तयोरपि व्ययस्थानं मारकस्थानमुच्यते।।

द्वादश भाव–द्वादश भाव से व्यय का मुख्य रूप से विचार करते है। ''मनोऽनुकूलम् सुखम्, मनः प्रतिकूलम् दुखम्'' परिभाषा द्वादश भाव पर खरी उतरती है। आज भौतिक युग है, इसमें प्रायः सभी जन भौतिक सुखों की भोग–लिप्सा में रत हैं। अतः द्वादश भाव में ग्रहों की स्थिति अनुकूल होगी तो व्यक्ति की आय–व्यय की स्थिति ठीक रहेगी, अन्यथा आय से अधिक खर्च होने पर व्यक्ति की मानसिक दशा ठीक नहीं रहने के कारण व्यक्ति दुखी रहता है। इसलिए द्वादश भाव की भी अहम भूमिका है यही कारण है कि उपर्युक्त पाँचों भावों में मंगल की स्थिति विशेष परिस्थिति को पैदा करने वाली होती है।

ज्योतिष शास्त्र मेलापक द्वारा दम्पति के आगामी जीवन के, सुख–दुख, लाभ–हानि, आय–व्यय, एवं मानसिक रूप से विक्षिप्त होने वाली घटनाओं के द्वारा मिलने वाले फल का निरीक्षण एवं परीक्षण करके अन्तिम निर्ण पर पहुँच कर उसका मनोवैज्ञानिक दृष्टि से तात्विक विवेचन करता है। अतः मेलापक में प्रमुख रूप से यह बात देखी जाती है कि यदि वर और कन्या के ग्रहों में भी मैत्री होगी तो भारतीय ज्योतिष एवं भारतीय संस्कृति की प्रवाह रूप में बह रही अविरत धारा अनवरल रूप से बहती रहेगी, जिसके बल पर आज समस्त विश्व टक–टकी नजर गढ़ायें हुए नतमस्तक होकर खड़ा है। यही कारण है कि आज भारत की परिवारवाद की व्यवस्था भी इसी के ऊपर आधारित है। विश्व की अन्य कोई ऐसा संस्कृति नहीं जो भारतीय संस्कृति की तुलना करने में समर्थ हों। भारतीय संस्कृति एवं भारतीय ज्योतिष शास्त्र में यह बात साक्षत रूप में देखी जा सकती है कि जिसमें जाति–पाति, ऊँच–नीच, अमीर–गरीब, अथवा किसी भी धर्म, सम्प्रदान को मानने वाले लोग हो, किसी भी देश में रहने वाले लोग हों, सभी के लिए विश्व–बन्धुत्व एवं समस्त विश्व के लिए कल्याणपरक कामना, समस्त विश्व के लिए सुख–शान्ति–समृद्धि एवं कल्याण की भावना से ओत–प्रोत होने के कारण आज समस्त विश्व की संस्कृतियाँ वहाँ के बुद्धिजीवी इसका अनुकरण कर रहे हैं। इसका प्रमुख कारण यह नहीं कि भारन ने भी कभी किसी सम्प्रदाय विशेष अथवा किसी धर्म का अनुकरण किया होगा क्योंकि यहाँ पर पैदा हुए राम–कृष्ण, परमहंस जैसे महापुरूषों ने भारतीय धर्मशास्त्रों के अनुसार इसकी नींव को स्थापित किया है, जिसके कारण आज भी पग–पग पर धर्मशास्त्र की बात की जाती है। इसी के फलस्वरूप ज्योतिष शास्त्र भी कार्य करता है। ज्योतिष कुण्डली मिलान की बात प्रमुखता से इसके लिए करता है कि आने वाला जो प्राणी है इस घर में क्या वह यहाँ के परिवार के साथ मूल–जोल रख सकता है, उसके आने के उपरान्त इस परिवार मे सुख–शान्ति, एवं भाग्य की अभिवृद्धि होगी अथवा उसकी गति रूक जायेगी क्योंकि मानव के अन्दर सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों ही विचारधारायें विद्यमान रहती है। जब व्यक्ति को यह दृग्गोचर होता है कि अमुक व्यक्ति के प्रवेश मात्र से लाभ की स्थिति दिखाई दे रही है तो वह सकारात्मक के पथ पर चलता है लेकिन यदि इसके विपरीत यदि होता है

तो नकारात्मक प्रभावी होरक व्यक्ति शारीरिक एवं मानसिक रूप से व्यथित होकर रूग्ण की श्रेणी में चला जाता है। अतः वर एवं कन्या के जन्मांग चक्रों में शुभव एवं अशुभ ग्रह योगों की सामंजस्यता होगी तो आगामी जीवन सुखमय तथा आनन्दमय होगा। यदि ग्रहों में परस्पर शत्रुता एवं एक की कुण्डली में शुभ ग्रहों की आधिक्यता एवं दूसरे की कुण्डली में अरिष्टकारक ग्रह बैठे हुए हो ता`परस्पर शत्रुता एवं संघर्षमय जीवन के साथ–साथ एक दूसरे के प्रति घातक सिद्ध हो सकते हैं। अतः जन्मकुण्डली में मिलान के समय अरिष्ट योगों से सम्बन्धित विशेष रूप से विचार किया जाता है। क्योंकि यदि वर अथवा कन्या दोनों की कुण्डली में जन्मलग्न से, चन्द्रलग्न से, एवं शुक्र जहाँ बैठा है वहाँ से प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम एवं द्वादश भाव मे मंगल ग्रह की स्थिति हो तो जातक मांगलिक योग से प्रभावित होता है। यदि स्थिति दोनों कुण्डलियों में न होकर किसी एक कुण्डली में हो तो स्थिति भयावह एवं कष्टप्रद हो जाया करती है। अर्थात् लड़के के जन्मांग में हो तो लड़की के लिए घातक और यदि लड़की के जन्मांग में यह स्थिति हो तो लड़के के लिए घात हो जाया करती है। यथा मुहूर्त–संग्रह–दर्पण के अनुसार–

लग्ने व्यये च पाताले जामित्रे चाष्टमे कुजे।
कन्या भर्तृविनाशाय भर्ताकन्याविनाशप्रदः।।

–अभ्यास प्रश्न–

लघु उत्तरीय प्रश्न–

(1) मंगल योग का विचार किस भाव से होता हैं?
(2) 1,4,6,8,12 भावों का नाम लिखें?
(3) मांगलिक योग किस–किस ग्रह से देखा जाता है?
(4) मांगलिक योग का विचार चलित कुण्डली से होता है या नहीं?
(5) मंगल ग्रह के साथ राहु हो तो मांगलिक दोष होता है या नहीं?
(6) वर–कन्या की कुण्डली में परस्पर राशिमैत्री हो, गणैक्य हो, 27 गुण या अधिक हो तो मांगलिक दोष विचारणीय है या नहीं?
(7) लग्न से मंगल योग कब बनता हैं?
(8) चन्द्र से मंगल योग कब बनता हैं?
(9) शुक्र से मंगल योग कब बनता हैं?
(10) सूर्य से मंगल योग कब बनता हैं?

2.3.2 मंगल दोष अपवाद।

यदि लड़की की जन्म कुण्डली में प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम एवं द्वादश घरों में से उन्हीं घरों में शनि, मंगल, सूर्य अथवा राहु में से कोई एक ग्रह हो तो भौमदोष भंग हो जाता है। इसी प्रकार से लड़के की जन्म कुण्डली में यहीं स्थिति हो और लड़की की कुण्डली में उन्हीं घरों में उपर्युक्त चारों ग्रहों में से किसी एक ग्रह की स्थिति हो तो मंगल

दोष भंग हो जाता है। क्योंकि लोहा–लोहे को काटने वाला सिद्धान्त यहाँ पर लागू होता है। यदि हम उपर्युक्त ग्रहों के विषय में चर्चा करें कि ये ग्रह एक दूसरे के लिए किस प्रकार दोष को काटने के लिए सहायक सिद्ध हो सकते है। इसका कारण है कि इन ग्रहों की प्रकृति गुण दोष आदि यथा–

शनि–यदि हम शनि ग्रह की चर्चा करें तो वराहमिहिर शनि के विषय में कहते हैं कि शनि धीरे–धीरे चलने वाला, आलसी प्रवृति वाला, कपिला वर्ण वाली गाय के समान आँखों वाला, सिकुड़ा हुआ शरीर से युक्त, लम्बे शरीर को धारण किये हुए स्थूल देहधारी, मैले–कुचैले वस्त्रों को धारण करने वाला, अपनी दृष्टि मात्र से प्रताड़ित करने वाला ग्रह है। यथा–

''मन्दोऽलसः कपिलदृक कृशदीर्घ गात्रः,
स्थूलद्विजः परूषरोमकचोऽनिलात्मा''।

मंगल एवं कारक भावों में शनि का फल– प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम, द्वादश

प्रथम भाव–लग्नगत शनि रहने से जातक साधारणतः किञ्चित दुबला, व्रण, चर्मरोग (खुजली) और वातारोग से पीड़ित, कफ प्रकृति, बाल्यावस्था में प्रायः रूग्ण, सर्वदा चिन्तित, कामी, मूर्ख, दरिद्र, मलिन, स्पष्टवक्ता तथा राजा से पीड़ित होता है।

यदि शनि धनु, मीन, मकर अथवा तुला राशि का हो तो जातक अंग का सुडौल, विद्वान, ग्रामाधिपति और राजा के सदृश होता है। स्वगृही अथवा उच्च होने से उपर्युक्त फलों के अतिरिक्त दृढ़जानु, उच्च विचार वाला, राजा, नगरों का शासक और पिता के धर्म को भोगने वाला होता है। यदि शनि चतुर्थेश अथवा दशमेश हो तो बड़ा भाग्यवान् होता है, और उसे प्रबल राजयोग होता है। शनि यदि चन्द्रमा से दृष्ट हो तो जातक भिक्षुक होता है। पर यदि शुभग्रह से दृष्ट हो तो जातक भिक्षुक नहीं होता है। लग्नस्थ शनि होने से पंचक वर्ष में जातक को दुख भोगना पड़ता है।

चतुर्थभाव–चतुर्थभावगत रहने से जातक स्वभाव का खोटा, आलसी, कलही, मलिन, प्रकृति, कंजूस, शासक द्वारा पीड़ित और पूर्वार्जित जमीन्दारी की हानि करने वाला होता है। ऐसे जातक की माता को विपत्ति की आशंका होती है और कभी–कभी दो माताएँ होती है। यदि शनि उच्च अथवा स्वगृही हो तो उपर्युक्त दोष नहीं होता है अर्थात् जातक धनी, सुखी और वाहन आदि से युक्त होता है। इसी प्रकार यदि शनि लग्नेश होकर चतुर्थस्थ हो तो उसकी माता दीर्घायु होती है और जातक सुखी होता है। यदि अष्टमेश शनि के साथ हो तो माता को अरिष्ट और जातक को शारीरिक कष्ट होता है। चतुर्थस्थ शनि रहने से जातक वात–पित्त प्रकोप से दुर्बल रहता है। उसे काले अन्न (तिल इत्यादि) से बड़ा प्रेम और आठवें वर्ष में उसके भाई की हानि का योग होता है।

सप्तमभाव–सप्तमभावगत रहने से जातक कपटी, अंगहीन अथवा रोग से दुर्बल, नीच कार्य में जी लगाने वाला, ठग और कर्ण रोगी होता है। ऐसे जातक को मनुष्यों से कम मिलाप रहता है और वह स्त्रियों से आदर नहीं पाता है। स्त्री एवं घर के झंझट से चिन्तित रहता

है। कभी–कभी गामी–वैश्या भी होता है। इसकी स्त्री की मृत्यु होती है और दो विवाह का योग होता है। यदि शनि, शुक्र के साथ हो तो स्त्री व्यभिचारिणी होती है। शनि स्वगृही अथवा उच्च हो तो स्त्री से भोग करने वाला होता है। यदि मंगल के साथ हो तो पुरूष–जननेन्द्रिय का चुम्बन करने वाला होता है। यदि शनि शुक्रं के साथ हो तो स्त्री–जननेन्द्रिय का चुम्बन करने वाली होती है और पुरूष परस्त्रीगामी होता है।

अष्टमभाव–अष्टमभावगत रहने से जातक नीच–वृत्ति (नौकरी) असन्तुष्ट, आलसी, दुर्बल, रूधिर विकारी, अतः चर्म रोग से पीड़ित, धनहीन, थोड़ी सन्तान वाला और शूद्रा गामी होता है तथा उसे हृदय रोग, खांसी एवं हैजा आदि का भय रहता है। ऐसे जातक की मृत्यु प्रायः विदेश में होती है। यदि शनि के साथ शुक्र हो तो जातक व्यभिचारी और भ्रमणशील होता है। यदि राहु के साथ मंगल हो तो रोगी सम्भव तथा गुप्त रोग से पीड़ित होता है। राहु के साथ शनि हो तो अस्त्र, अग्नि, विष, लकड़ी और पत्थर आदि से भय होता है। यदि शनि के साथ राहु और सूर्य हो तो सतत निराश चित्त, अपत्त्यवान्, प्रेम विहीन, पितृ–पीड़िक, भ्रातृहीन, पत्नी और उसके सम्बन्धी की मानहानि करने वाला, असदुपाय से धनोपार्जन करने वाला, कुपुत्रवान्, कंजूस तथा बवासीर, क्षय अथवा दमा आदि रोग से पीड़ित होता है। यदि शनि उच्च अथवा स्वगृही हो तो जातक दीर्घायु होता है और प्रायः 75 वर्ष की आयु होती है। अष्टमस्थान का स्वामी यदि नीच अथवा शत्रु राशिगत हो तो अल्पायु होता है। अष्टमस्थ शनि होने से 25वें वर्ष में अरिष्ट होता है।

द्वादशभाव–द्वादशभाव रहने से जातक दयाहीन, धनहीन, आलसी, कुसंगी, नीच कर्म निरत और खर्चीला स्वभाव का होता है, और अमित व्ययी एवं नीच अनुचर विशिष्ट और प्रवास प्रिय होता है। कभी–कभी अंगहीन भी होता है। शनि यदि शुभग्रह युत हो तो जातक किसी आकस्मिक घटना से अथवा राजकोष से नेत्र हीन होता है। व्यापार से हानि उठाता है और नाना प्रकार के कार्यों में निरत रहता है। और यदि शुभग्रह के साथ शनि हो तो नेत्र अच्छे होते है। परन्तु दृष्ट कार्यों में व्यय अधिक और धनहीन होता है द्वादश शनि होने से पैंतालिसवें वर्ष में स्त्री को पीड़ा होती है।

सूर्य–मंगली योग कारक ग्रहों के विषय में हमें सर्वप्रथम उनके स्वरूप के विषय मे जानना होगा कि भिन्न–भिन्न भावों में योग मंगली कारक ग्रह क्या फल देते है। सूर्य को क्रूर ग्रह एवं ग्रहों में राजा कहा गया है। अतः सूर्य अपनी क्रूरता के चलते किस प्रकार से मंगल दोष को भंग कर सकता है। प्रथम सर्व हमें सूर्य की प्रकृति गुण, दोष, धर्म के विषय में ज्ञान अवगत करना होगा। वराहमिहिरानुसार सूर्य का स्वरूप इस प्रकार से हैं।

''मधुपिंगलहक्चतुरस्रतनुः पित्रप्रकृतिस्सवितात्पकचः''।

अर्थात् शहद के समान हल्के पीले रंग की आँखों वाले एवं पित्त प्रकृति वाले, कम बालों वाले सूर्य भगवान हैं। सूर्य का मंगल योग कारक भावों में स्थिति होने पर क्या फल रहेगा इस प्रकार से हैं। यथा–

प्रथमभाव–यदि लग्न में हो तो जातक प्रायः रूप में विचित्र, आँखों से रोगी, लाल अथवा

गुलाबी नेत्र वाला, कण्ठ व गुदा में ब्रण अथवा तिलयुक्त शूर–वीर, क्षमा–शील, घृणा–रहित, कुशाग्रबुद्धि, उदारप्रकृति, साहसी, आत्मसम्मानी, परन्तु निर्दयी, क्रोधी और सनकी होता है। वात–पित्त प्रकोप से पीड़ित, आकार में लम्बा, कर्कस, गर्म शरीर वाला तथा थोड़े केश वाला होता है। ऐसे जातक को अपनी बाल्यावस्था में अनेक पीड़ायें भोगनी पड़ती है और शिर में चोट लगने की सम्भावना रहती है। 15 वर्ष की अवस्था में अंग में पीड़ा और तीसरे वर्ष में ज्वर अवश्य होता है। यदि सूर्य के साथ पापग्रह हो, नीच का हो अथवा शत्रुगृही हो तो ये अनिष्ट–फल होते हैं। शुभग्रह की दृष्टि से दृष्टफल नहीं होते।

मेष राशि में सूर्य के रहने से जातक नेत्र–रोगी परन्तु धनवान् और कीर्तिवान् होता है। परन्तु ऐसा सूर्य यदि बलवानग्रह से दृष्ट हो तो जातक विद्वान होता है। तुला में सूर्य के रहने से नेत्र में फूली अथवा तिल और वह निर्धन तथ मान रहित होता है। परन्तु शुभदृष्ट रहने से अनिष्ट फल नहीं होता। मकर अथवा सिंह में रहने से रतौंधी एवं हृदय रोग से पीड़ित होता है। सिंह अथवा सिंह के नवाँश में रहने से जातक किसी स्थान का मालिक होता है और शुभदृष्ट अथवा युत रहने से निरोग होता है। कर्क राशि में रहने से नेत्र में फूली तथा शरीर रोग परन्तु ज्ञानी होता है।

चतुर्थभाव–चतुर्थभावगत रहने से जातक दुबला, विकृत–अवयव एवं अंगहीन होताह है। मानसिक–चिन्ता–युक्त, अकारण विवाद–प्रिय, आत्मीय जनों से घृणा करने वाला, घमण्डी, कपटी, संग्राम में निश्चल, बहुस्त्री वाला, प्रतिष्ठित, विख्यात, तथा सुख, धन, यान आदि रहित, पिता के धन को खर्च करने वाला, अथवा पितृ धनापहारी तथा भ्रमणशील होता है। उस के बन्धु बान्धव और वाहनादि के नाश का भी भय होता है। 14वें वर्ष में विरोध और 22वें वर्ष में विशेष उन्नति होती है। 32वें वर्ष में जातक सर्वकार्य योग्य होता है।

चतुर्थस्थान के स्वामी, बली ग्रहों से युक्त अथवा केन्द्र वा त्रिकोणगत हो अथवा सूर्य स्वगृही (सिंह राशि का) हो तो जातक को वाहनादि का सुख होता है। यदि चतुर्थस्थान में पापग्रह की दृष्टि हो, तो नीच प्रकार के वाहन की प्राप्ति होती है।

सप्तमभाव–सप्तमभावगत रहने से, जातक शरीर का दुबला, मझोले कद का, भूरे–रंग के केश और नेत्र से युक्त, शील रहित, चंचल, पापी, भय–युत, स्त्री सहवास तथा सुख भोगने में आसक्त, स्त्रियों से विरोध करने वाला तथा स्त्रियों से अनादर पाने वाला, परस्त्री प्रेमी एवं परगृह भोजी होता है। ऐसे जातक की प्रायः दो स्त्रियाँ होती है। विवाह में विलम्ब होता है। जातक धनहीन, राजकोप से दुखी तथा कदन्न भोजी होता है। चौदहवें अथवा चौतीसवें वर्ष में स्त्री का नाश और 25वें वर्ष में परदेश यात्रा होती है।

यदि सिंह राशि गत सूर्य बली हो तो एक स्त्री होती है। यदि सूर्य पर शत्रु ग्रह की दृष्टि हो अथवा सूर्य शत्रुग्रह के साथ अथवा पापग्रह से युत हो तो जातक को बहुत सी स्त्रियाँ होती है।

अष्टमभाव–अष्टमभावगत रहने से जातक शरीर से दुबला, क्षुद्र अर्थात् छोटे–छोटे नेत्रों का और रूग्ण होता है। निर्बुद्धि, क्रोधी, कार्य्य–समय, बुद्धि–विवेचनाहीन, अल्प सन्तान वाला,

नेत्र–रोग परन्तु उदार प्रकृति का और दीर्घ जीवी होता है। उसे धन की कमी रहती है और गौ–भैंस आदि पशु का नाश हो जाता है। उसे शत्रु बहुत होते हैं। दशमवर्ष में शिर में व्रणादि होते हैं और चौदहवें अथवा 34वें वर्ष में स्त्री का नाश होता है। सूर्य के साथ यदि शुभग्रह हो तो शिर में व्रण नहीं होता है।

यदि अष्टमस्थान का स्वामी बलीग्रह के साथ हो तो इच्छा के अनुसार उसे खेती की प्राप्ति होती है। यदि सूर्य्य उच्च अथवा स्वगृही हो तो जीवी दीर्घ होता है।

द्वादशभाव–द्वादशभाव गत रहने से जातक प्रलम्ब–अंग–विशिष्ट, बहु व्ययी, (खर्चा) पिता से विरोध करने वाला अर्थात् पिता से मलोमालिन्य रखने वाला, विरूद्ध–बुद्धि, पापी, पतित एवं चोर होता है। धन की हानि करने वाला, प्रदेश में रहने वाला, पर स्त्री गामी, नेत्र रोगी, एवं दरिद्र और लोक विरोधी होता है। ऐसे जातक के 36वें वर्ष में गुल्म रोग और 38वें वर्ष में अर्थ की हानि होती है।

यदि द्वादशभाव का स्वामी बलवान् ग्रह से युक्त हो तो देवताओं की सिद्धि प्राप्त करने वाला और पलंग आदि का उसे सुख होता है। यदि सूर्य्य के साथ पापग्रह बैठा हो तो दुष्टस्थान में खर्च करने वाला होता है। उसे शय्या अच्छी नहीं होती है। यदि सूर्य्य के साथ षष्ठस्थान का स्वामी बैठा हो तो कुष्टरोग का भय होता है। परन्तु सूर्य्य शुभग्रह से दृष्ट अथवा युक्त हो तो कुष्ट भय नहीं होता है।

मंगल–मंगल ग्रहों में सेनापति है। समस्त सेना का आधिपत्य होने के कारण इस ग्रह का स्वरूप कुछ इस प्रकार से है। यथा– वृहज्जातक में– टेढ़ी दृष्टि वाला, पित्त प्रकृति वाला, जवानी से भरपूर, उदार प्रकृति वाला, चंचल, सिकुड़ा हुआ है।

''कुरदृकतरूणमुर्तीरूदारः पैत्तिकस्सुचपलः कृशमध्यः''।

मंगल ग्रह का प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम एवं द्वादश भावों में स्थिति गत फल इस प्रकार रहेगा।

प्रथम भाव–लग्नगत मंगल रहने से जातक साहसी उग्र, सफर करने वाला, मतिभ्रम, चोर प्रकृतिवाला, रक्त वर्ण और बड़ी नाभि वाला होता है। ऐसा जातक तेजस्वी, बली, क्रोधी, मूर्ख, चंचल और धनवान् होता है। जातक के पिता की मृत्यु असामयिक होती है और उसे राजा से मृत्यु की आशंका होती है। ऐसे जातक के शरीर में व्रणादि रोग, विशेष कर शिर, कण्ठ, गुदा आदि में होते हैं तथा शिर में व्रणादि के चिन्ह हो जाते हैं। उसे कण्डू, खुजली और गुदा आदि के रोग होते हैं। शरीर में लोहा और पत्थर इत्यादि से चोट लगती हैं। बचपन में रक्त–पीड़ा तथा वातरक्त से पीड़ित होता है।

ऐसे जातक को 5वें वर्ष में अरिष्ट होता है। यदि मंगल मकर, मेष अथवा वृश्चिक का हो तो जातक निरोग, शरीर से पुष्ट, राजा से सम्मानित, यशस्वी और दीर्घायु होता है। यदि मंगल के साथ पाप अथवा शत्रुग्रह बैठा हो तो अल्पायु होता है और उसे कम सन्तान होती है। वह दुर्मुख एवं वात–शूलादि से पीड़ित होता है। मकर राशि गत मंगल होने से जातक विद्वान होता है। यदि मंगल के साथ पापग्रह हो अथवा मंगल पापग्रह से दृष्ट हो

तो नेत्र–रोगी होता है।

चतुर्थभाव–मंगल चतुर्थभाव में रहने से जातक परदेशवासी, शरीर से निर्बल, रोगी, बन्धुहीन, सुख रहित, पीड़ित और वाहन से कष्ट पाने वाला होता है। जातक के पिता को भय और माता रूग्ण होती है। वह पृथ्वी से जीविका निर्वाह करने वाला और उसके घर में कलह होता है। यदि मंगल शुभग्रह से युत हो तो जातक रोग रहित, दूसरे घर में रहने वाला और पुराने घर में वास करने वाला होता है। भाई तथा कुटुम्बियों से उसे वैर होता है और स्वदेश का त्याग करता है। उसे स्त्रीहन्ता योग होता है।

चतुर्थस्थ मंगल रहने से आठवें वर्ष में पिता को अरिष्ट, माता को रोग और भाई को हानि होती है।

सप्तमभाव–मंगल सप्तमभाव में रहने से जातक दुबला, निर्धन, रोगी, व्यर्थ चिन्तित, स्त्री पक्ष से चिन्तित, शत्रु से पीड़ित और स्त्री से अनादर पाने वाला होता है। यदि मंगल पापग्रह की राशि में हो तो जातक की स्त्री का नाश होता है। यदि मंगल शुभग्रह के साथ हो तो जातक के जीवित रहते ही स्त्री की मृत्यु होती है। यदि मंगल के साथ शनि बैठा हो तो जातक निन्दित कर्म करने वाला और यदि केतु बैठा हो तो रजस्वला स्त्री से भोग करने वाला होता है। यदि मंगल के साथ कोई शत्रुग्रह बैठा हो तो जातक की स्त्रियाँ मर जाती है। परन्तु यदि शुभग्रह दृष्ट हो तो ऐसा फल नहीं होता है। मंगल यदि उच्च अथवा स्वगृही हो तो उसकी स्त्री चपला अथवा सुन्दरी अथवा दुष्ट चित्ता और जातक को एक स्त्री होती है। यदि पापग्रह से युक्त हो तो दो स्त्रियाँ और जातक के कमर में दर्द होता है। मंगल के सप्तमस्थ होने से 37वें वर्ष में स्त्री का नाश होता है।

अष्टमभाव–मंगल अष्टमभाव में रहने से जातक, नेत्र रोगी, रक्त पीड़ित, दुर्बल, पित्त प्रकृति, और वात शूलादि रोग से पीड़ित रहता है एवं शस्त्र और अग्नि से उसे भय होता है। ऐसा जातक नीच कर्म करने वाला, व्याकुल चित्त का, निदक, दुर्बद्धि, सज्जनों की निदा करने वाला, कुल से घृणित होता है और अल्प सन्तान वाला होता है। यदि मंगल शुभग्रह से युत हो तो रोगरहित और दीर्घजीवि होता है। यदि पापग्रह से युत हो तो वात, क्षय और मलमूत्रादिरोगों से अधिक पीड़ित होता है। अष्टमस्थान का स्वामी शुभग्रहों से युक्त हो तो आयु अच्छी होती है। अष्टमस्थान में मंगल के रहने से 25वें वर्ष में मृत्यु का भय होता है।

द्वादशभाव–मंगल द्वादशभाव में होने से जातक शरीर का विमल, क्रोधी, कामी, अंगहीन, बन्धु वर्गों से वैर करने वाला, धर्म–दूषित क्रियाओं का करने वाला, पतित, मित्र द्रोही और खर्चीला स्वभाव वाला होता है। ऐसे जातक को वायु जनित विकार से पीड़ा होती है। वह नेत्र पीड़ा होती है और उसे बन्धन से भय होता है।

यदि मंगल के साथ पापग्रह बैठा हो तो पाखण्डी होता है। यदि केतु के साथ हो तो जातक का घर अग्नि स`जल जाता है और स्त्री की भी मृत्यु होती है। पर यदि शुभग्रह से युत हो तो स्त्री बच जाती है।

यदि मंगल द्वादशभाव हो तो 45वें वर्ष में जातक की स्त्री को पीड़ा होती है।

राहु–राहु छाया ग्रह है। छाया अंधकार की द्योतक होती है। अंधकार का अर्थ है अज्ञान, अज्ञानी, राक्षस होता है। अतः मंगली रोग कारक राहु यदि मांगलिक योग बनाता हो तो ऐसा व्यक्ति अज्ञानी क्रूर एवं उष्णस्वभाव वाला होगा। राहु का विभिन्न भावों में स्थिति होने पर फल इस प्रकार से रहेगा।

प्रथमभाव–लग्नगत राहु से जातक साहसी, चतुर, रोगी, अधर्मी, मित्र विरोधी, विवाद में विजयी, स्वजनवंचक और सन्तान हीन होता है। इसकी स्त्री का गर्भपात भी होता है तथा उसके सिर में वेदना होती है। यदि राहु, मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या अथवा मकरराशिगत हो तो नौकरी से वैभववान्, भोगी, विलासी, और सहानुभूतिपूर्ण होता है। यदि राहु शुभदृष्ट हो तो जातक के मुख में कुछ चिन्ह होता है। लग्नस्थ राहु के होने से पंचक वर्ष में दुख होता है।

चतुर्थभाव–राहु चतुर्थभाव में रहने से जातक भ्रमण शील, मित्र, पुत्र एवं स्वजनादि सुख विहीन (अर्थात् आत्मीय पुरूषें से रहित) होता है। कभी–कभी उसे दो स्त्री और मातायें होती हैं और उसे आभूषण तथा भृत्यादि भी रहते हैं। यदि राहु मेष, वृष, अथवा कर्कगत हो तो बन्धुओं का सुख होता है। अन्यथा बन्धु पीड़ित होती है। यदि राहु के साथ पापग्रह हो तो माता को अवश्य दुख होता है। परन्तु यदि शुभ–युक्त अथवा शुभ–दृष्ट हो तो वैसा फल नहीं होता है। चतुर्थस्थ राहु होने से 8वें वर्ष में भाई की हानि होती है।

सप्तमभाव–राहु सप्तमभाव में रहने से जातक को जननेन्द्रिय रोग अथवा प्रमेह आदि रोग होता है, और उसे विधवा से सम्बन्ध होना सम्भव होता है। ऐसे जातक को दो विवाह होता है। पहली स्त्री रक्त जनित रोग (अर्थात् जिसमें रक्त आता हो) से पीड़ित होती है दूसरी स्त्री को यकृत रोग होता है अर्थात् रूग्ण होती है। ऐसे जातक की स्त्री कलहप्रिया, कोप–युक्ता, विवाद–शील, प्रचण्ड–रूपा और खर्चीली स्वभाव की होती है। उसे कभी–कभी स्त्री से मत–भेद भी हो जाया करता है। यदि राहु के साथ पापग्रह हो तो स्त्री कुटिला, पापिनी, दुशीला और गण्डमाला रोग–युक्ता होती है। परन्तु शुभग्रह युक्त रहने से उपर्युक्त दोष का निवारण होता है। और दो स्त्री का योग भी कम सम्भव होता है। जातक के सैंतीसवें वर्ष में उसकी स्त्री को कष्ट होता है।

अष्टमभाव–राहु अष्टमभाव में रहने से जातक झगड़ालू, पापी और गुदा, प्रमेह, अण्डवृद्धि अथवा, बवासीर आदि रोग से पीड़ित होता है। ऐसे जातक के बत्तीसवें वर्ष में जीवन की आशंका होती है और शुभग्रह–युत रहने से 25वें वर्ष में आशंका होती है। यदि अष्टमेश बलवान् ग्रहों से युत हो तो 60वें वर्ष में मृत्यु भय होता है।

द्वादशभाव–राहु द्वादशभाव में रहने से जातक नीच–कर्म–निरत, प्रपंची, कपटी, कुलघ्न, दम्भी, कंजूस, नेत्र रोगी, चर्मरोगी और प्रवासी होता है। ऐसे जातक के पैर में चोट लगने से पीड़ा होती है। और जातक की स्त्री–चिन्ता तथा थोड़ी सन्तान होती है। द्वादशस्थ राहु रहने से 45वें वर्ष में स्त्री को पीड़ा होती है।

(1) मंगल दोष से युक्त कन्या के साथ मांगलिक दोष युक्त वर का पाणिग्रहण संस्कार

करने पर मंगल का अनिष्ट दोष नहीं होता तथा पति एवं पत्नी के मध्य प्रेम–सद्भावना एवं दाम्पत्य सुख की अभिवृद्धि होती है। यथा–

कुजदोष वतीदेया कुजदोषवते किल।
नास्ति दोषो न चानिष्टं दम्पत्योः सुखवर्धनम्।

(2) यदि लड़की की जन्म कुण्डली में जिस स्थान पर मंगल स्थित (मांगलिक कारक) हो, और लड़के की कुण्डली में उसी स्थान पर शनि, मंगल, सूर्य, राहु आदि कोई पाप ग्रह हो, तो भौमदोष भंग हो जाता है। इसी प्रकार लड़के की कुण्डली में भौमदोष होने पर कन्या की कुण्डली में उसी भाव में कोई पापग्रह होने से भी भौम दोष नहीं रहता है।

शनि भौमोऽथवा कश्चित् पापो वा तादृशो भवेत्।
तेष्वेव भवनेष्वेव भौमदोष विनाश कृत्।। –फलित संग्रह अन्येऽपि–
भौमेन सदृशो भौमः पापो व तादृशो भवेत्।
विवाहः शुभदः प्रोक्तश्चिरायुः पुत्रपौत्रदः।।

अर्थात् एक की कुण्डली में मंगल दोष हो, तो दूसरे की कुण्डली में भी उन्हीं स्थानों में शनि आदि पाप ग्रह होने से मांगलिक दोष भंग होकर विवाह में शुभ होता है।

यामित्रे च सदा सौरि लग्ने वा हिवुके तथा।
अष्टमे द्वादशो चैव भौमदोष न विद्यते।।

(3) मेष राशि का लग्न में, वृश्चिक राशि का चौथे भाव में, मकर का साँतवें, कर्क राशि का आठवें, एवं धनु राशि का मंगल 12वें हो, तो मंगल दोष नहीं होता है।

यथोक्तम्– अजे लग्ने व्यये चापे पाताले वृश्चिके कुजे।
द्यूने मृगे कर्किचाष्टौ भौमदोषी न विद्यते।।

प्रकारान्तर से, मीन का मंगल 7वें भाव तथा कुम्भ राशि का मंगल अष्टम में हो, तो भौम दोष नहीं होता है।

''द्यूने मीने घटे चाष्टौ भौम दोषो न विद्यते''

(4) यदि द्वितीय भाव में चन्द्र–शुक्र का योग हो, या मंगल गुरू द्वारा दृष्ट हो, केन्द्र भावस्थ राहु हो, अथवा केन्द्र में राहु–मंगल का योग हो, तो मंगल दोष नहीं रहता–

न मंगली चन्द्र भृग द्वितीये, न मंगली पश्यति यस्य जीवा।
न मंगली केन्द्रगते च राहुः, न मंगली मंगल–राहु योगे।।

(5) बलान्वित गुरू वा शुक्र लग्न में हो, तो वक्री, नीचस्थ, अस्तंगत अथवा शत्रुक्षेत्री मंगल उपरोक्त दुष्ट स्थानों में होने पर भी भौम दोष नहीं होता है।

सबले गुरौ भृगौ वा लग्ने द्यूनेऽथवा भौमे।
वक्रे नीचारि गृहस्थे वाऽस्तेऽपि न कुज दोषः।।

(6) इसी भांति केन्द्र व त्रिकोण में यदि शुभ ग्रह हों, तथा 3,6,11वें भावों में पापग्रह हों, तथा सप्तमेश ग्रह सप्तम में ही हो, तो मंगल दोष नहीं होता है।

''केन्द्र कोणे शुभादये च त्रिषडायेऽप्यसद्ग्रहाः।

तदा भौमस्य दोषो न मदने मदपस्तथा।।''

(7) यद्यपि 1,2,4,7,8,11 और 12वें भावों में स्थित मंगल वर–वधू के वैवाहिक जीवन में विघटन उत्पन्न करता है, परन्तु मंगल अपने घर (1,8) का हो, उच्चस्थ (मकर) का किंवा मित्र क्षेत्री मंगल दोष कारक नहीं होता है।

तनु धनु सुख मदनायुर्लाभ व्ययगः कुजस्तु दाम्पत्यम्।
विघट्यति तद् गृहेशो न विघटयति तुंगमित्रगेहेवा।।

(8) यदि वर–कन्या की कुण्डलियों में परस्पर राशिमैत्री हो, गणैक्य हो, 27 गुण या अधिक मिलान होता हो, तो भी भौम दोष अविचारणीय है।

राशिमैत्रं यदा यानि गणैक्यं वा यदा भवेत्।
अथवा गुण बाहुल्ये भौम दोषो न विद्यते।।

विवेचन–उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि मुहूर्त्त संग्रह दर्पण में दिए गए मांगलिक सम्बन्धी उपरोक्त श्लोक (''लग्ने व्यये पाताले–'') के परिहारस्वरूप कुछ अर्वाचीन ग्रन्थों में उपलब्ध होते हैं, जिनमें परस्पर विरोध वाक्यता भी मिलती है।

उल्लेखनीय है कि प्राचीन सैद्धान्तिक एवं प्रतिष्ठित मुहूत्त ग्रन्थों जैसे–विवाह वृन्दावन, मुहूर्त्त मार्तण्ड, सारावली, मुहूर्त्त चिंतामणि, ज्योतिः निबन्ध आदि में मांगलिक सम्बन्धी उपर्युक्त श्लोक एवं तत्सम्बन्ध विभिन्न परिहार वाक्यों का स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता है।

वर–कन्या की कुण्डली में मांगलिक दोष एवं उसके परिहार का निर्णय अत्यन्त सावधानीपूर्वक करना चाहिए। केवल 1,4,7,8 आदि भावों में मंगल को देखकर दाम्पत्य जीवन के सुख–दुख का निर्णय कर देना ठीक नहीं। मांगलिक वाले स्थानों (भावों) में मंगल के अतिरिक्त कोई अन्य क्रूर ग्रह भी 1,2,7 एवं 12वें स्थानों में हो, तो वह भी परिवारिक एवं वैवाहिक जीवन के लिए अनिष्टकारी होता है। यथा–

लग्ने क्रूरा व्यये क्रूरा धने क्रूराः कुजस्तथा।
सप्तमे भवने क्रूराः परिवार क्षयंकरा।।

–अभ्यास प्रश्न–

सत्य/असत्य प्रश्नों के उत्तर दीजिए–

1. मंगली योग का विचार 2,4 भाव से होता है।
2. चन्द्र से मंगली का विचार किया जाता है।
3. शनि से मंगली दोष भंग होता है।
4. 27 गुण से अधिक होने पर मांगलिक दोष विचारणीय नहीं है।
5. वर एवं कन्या की जन्म कुण्डली दोनों में मंगल हो तो दोष होता है।

2.3.3 मांगलिक योग एवं मांगलिक दोष परिहार।

मंगल अथवा मांगलिक दोष का निर्णय कुण्डली विशेष में सभी ग्रहों के पारस्परिक अनुशीलन के पश्चात् ही करना चाहिए। सभी लग्न कुण्डलियों में मांगलिक दोष का प्रभाव

एक जैसा नहीं होता। इनमें कोई सन्देह नहीं कि कुछ लग्न कुण्डलियों में मंगल अथवा मांगलिक दोष का अशुभ एवं अनिष्ट प्रभाव वर–कन्या के वैवाहिक जीवन पर पड़ता है, परन्तु यदि किसी कुण्डली में मंगल अन्य ग्रहों के सहचर्य से योगकारक हो, उच्चस्थ या स्वराशिगत हो अथवा गुरू आदि शुभ ग्रह की दृष्टि से प्रभावित हो, तो मंगल अशुभ की अपेक्षा शुभ प्रभाव कारक होगा। जैसे– मकर, मेष, वृश्चिक, सिंह, धनु और मीन राशि के मंगल को शुभ माना जाता है। तथा र्क एवं सिंह लग्नों में मंगल केन्द्र त्रिकोणपति होने से मंगल अशुभ न होकर योगकारक माना जाएगा–

''सर्वे त्रिकोणनेतारो ग्रहा शुभफलप्रदाः।
इसी भान्ति स्वाच्चस्थिसतिः शुभफलं प्रकरोति पूर्णम्।
नीचर्क्षगस्तु विपलं रिपु मन्दिरेऽल्पम्।।
भाव सर्वे शुभपतियुता वीक्षितः वा शुभेशै–

अतएव वर–कन्या की कुण्डलियों का मिलान करते समय उनके सुखी एवं सम्पन्न दाम्पत्य जीवन के लिए केवल मंगल या मांगलिक पर ही अत्यधिक बल न देते हुए मेलापक सम्बन्धी अन्य तत्वों का भी सर्वांग रूप से विवेचन करना चाहिए। जिनमें कुछ मुख्य तत्व निम्नलिखित हैं–

(1) चलित भाव कुण्डली–जो ग्रह भाव मध्य होते हैं, वह भाव सम्बन्धी पूर्ण फल प्रकट करते हैं, जो ग्रह भाव सन्धि में होते हैं, वह शून्य फल दिखाते हैं। तदनुसार वर–कन्या की कुण्डलियों का मिलान करते समय दोनों की कुण्डलियों के ग्रह स्पष्ट, स्पष्ट भाव एवं चलित भाव कुण्डली बनी होनी चाहिए, तभी मंगल अथवा मांगलिक दोष की वास्तविक स्थिति का पता चल पाएगा। यदि दोनों की कुण्डलियों में मंगल सन्धिगत होगा, तो मांगलिक दोष भंग माना जाएगा।

(2) सप्तम भाव में सप्तमेश या शुभ एवं योगकारक ग्रहों की स्थिति अथवा मंगल या सप्तम भाव पर गुरू, शुक्र की दृष्टि अथवा सप्तमेश ग्रह की स्वगृही दृष्टि होने से मांगलिक दोष क्षीण होगा।

(3) सप्तमेश ग्रह उच्चस्थ या स्व–मित्रादि राशिगत होकर केन्द्र त्रिकोणादि भावों में स्थित हो तो विवाह में मंगल का दोष निष्प्रभावी होगा।

(4) इसके विपरीत सप्तमेश त्रिक में हो, पापग्रह युक्त व पाप दृष्ट, नीच राशिगत अथवा अस्तंगत हो तो विवाह का पूर्ण सुख नहीं होता–

दुःस्थे कामपतौ तु पाप ग्रहगे पापेक्षिते–तद्युते।
तज्जाया भवनस्य मध्यमफलं सर्व शुभं चान्यथा।।

(5) इसके अतिरिक्त लग्नेश, कुटुम्बेश (द्वितीयेश), पंचमेश, अष्टमेश, सप्तमेश एवं चन्द्र, शुक्र, गुरू, मंगलादि ग्रहों के बलाबल का विचार करना भी नितान्त आवश्यक है।

(6) अष्टकूट नक्षत्र राशि मिलान पर यदि वर–कन्या में परस्पर राशिमैत्री उपलब्ध हो गुणाधिक्य (27 या अधिक) गुण मिलते हों तो भी मांगलिक दोष अविचारणीय होगा।

इस प्रकार वर–कन्या की कुण्डली में मंगल के अतिरिक्त कुण्डलियों में अन्य सभी ग्रहों के शुभाशुभत्व का सम्यक् विचार करते हुए विद्वान ज्योतिषी को मेलापक सम्बन्धी अपना अन्तिम निर्णय देना चाहिए।

–अभ्यास प्रश्न–

रिक्त स्थानों की पूर्त्ति करें–

1. चतुर्थ भाव से.....का विचार किया जाता है।
2. शुक्र से.....मंगल हो तो मांगलिक योग होता है।
3. अष्टमभाव.....भाव है।
4. राहु.....भावों में हो तो मांगलिक योग होता है।
5. लड़का एवं लड़की के 1,4,7,8,12 भावों में.....हो तो दोष नहीं होता है।

2.4 सारांश–

इस ईकाई में आपने ग्रहों के सेनापति मंगल ग्रह के विषय में अध्ययन किया होगा। ग्रह किस प्रका से भूमण्डल को प्रभावित करते हैं। तथा प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, एवं द्वादश भाव से किन–बिन्दुओं पर विचार किया जाता है। मंगल की स्थिति उपर्युक्त भावों में कष्टप्रद होती है। यहाँ तक कि उपर्युक्त स्थानों में मंगल होने पर यदि जीवनसाथी के जन्मांग चक्र में मंगल की उपस्थिति तद्तद् भावों में नहीं हो तो मृत्यु हो सकती है। दूसरा यह आवश्यक नहीं है कि मंगल के होने पर ही आप मांगलिक कहलायेंगे अपितु शनि ग्रह अथवा राहु, केतु या कोई पापी ग्रह उन पाँचों भावों में बैठा हुआ हो तो वह भी कष्टप्रद अथवा मृत्यु को देने वाला होता है। एवमेव भारतीय ज्योतिष शास्त्र में इसका समाधान भी हैं किन–किन ग्रहों की स्थिति के कारण भौम दोष भंग होता है। इन सभी पहलुओं का आपने इस ईकाई के माध्यम से अध्ययन किया। अतः आप मांगलिक दोष एवं उसके परिहार के विषय में ज्ञान प्राप्त कर चूकें होंगे।

2.5 पारिभाषिक शब्दावली–

भचक्र – राशिचक्र, नक्षत्रचक्र
राशि –ढेर, अनेकतारों का ग्रह।
अप्रत्यक्षाणि – जो दिखाई न दे।
चन्द्राऽर्कौ – सूर्य एवं चन्द्रमा।
साक्षिणौ – साक्षी, गवाह।
आयुषः – आयु।
व्ययस्थान – बारहवां भाव।
पाताल – चतुर्थभाव।
जामित्र – पत्नीभाव।

भतृ – पतिदेव।
मन्दः – धीरे–धीरे चलने वाला।
कपिलदृक – कपिलवर्ण के समान आँख वाला।
कृश – सिकुड़ा।
दीर्घ – लम्बा।
गात्र – शरीर।
परूषरोम – मोटे केश वाला।
पैत्तिक – पित्त प्रकृति वाला।
कृशमध्य – बीच से सिकुड़ा हुआ।
हिवुक – चतुर्थभाव।
अज – मेष राशि।
चाप – धनुराशि।
भृगु – शुक्र।
वक्रे – वक्री ग्रह।
अस्त – सप्तमभाव।
केन्द्र – 1,4,7,10 भाव।
त्रिषडाये – तृतीय, षष्ठ, एकादशभाव।
गणैक्यं – गणों की एकता।
द्यून – सप्तमभाव।

2.6 –अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

लघु उत्तरीय प्रश्नों की उत्तरमाला–

1. 1,4,7,8,12 भावों से होता है।
2. प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम, द्वादश
3. मंगल, शनि, राहु, केतु।
4. नहीं।
5. होता है।
6. विचारणीय है।
7. जब लग्न से मंगल 1,4,7,8, या 12 भाव में हो।
8. जब 1,4,7,8,12 भाव में मंगल या पापी ग्रह हो।
9. शुक्र से 1,4,7,8,12 भाव में मंगल या पापी ग्रह हो।
10. सूर्य से 1,4,7,8,12 भाव में मंगल या पापी ग्रह हो।

सत्य/असत्य प्रश्नों के उत्तर–

1. असत्य। 2. सत्य। 3. सत्य। 4. असत्य। 5. असत्य।

रिक्त स्थानों के प्रश्नों के उत्तर–

1. मांगलिक योग। 2. प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम, द्वादश। 3. आयु। 4. 1,4,7,8,12

5. मंगल या शनि।

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

1. फलदीपिका, व्याख्याकार– गोपेश कुमारओझा, (1981) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

2. कर्मठगुरूः, मुकुन्दबल्लभ रचित, (1982) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

3. क्यों (धर्म दिग्दर्शन पूर्वार्थ), स्वामि करपात्री जी महाराज रचित, (2067) माधव विद्या भवन श्रीधान 150, पुरानी गुप्ता कालोनी दिल्ली–9

4. क्यों (धर्म दिग्दर्शन उत्तरार्ध)।

5. ताजिक–नीलकण्ठी, पं. सीताराम शर्माकृत, (1992) चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी।

6. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द शास्त्री रचित, (2008) भारतीय ज्ञानपीठ 18 इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड नई दिल्ली 110003

7. संस्कार प्रकाश, डा. भवानी शंकर त्रिवेदी कृत, (1986) श्री लालबहादुरशास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ शहीद जीतसिंह मार्ग नई दिल्ली 110016

8. ज्योतिष–रत्नाकर, देवकीनन्दन सिंह, (1983) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

9. भारतीय ज्योतिष विज्ञान, डा. सुरकान्त झा कृत, 2006, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी के0 37/118 गोपाल मन्दिर लेन वाराणसी।

10. सन्तान सुख सर्वांग चिन्तन, मृदुलात्रिवेदी कृत, (1990) 24 महानगर विस्तार ई0–40 कारपोरेशन क्वार्टर के सामने पीली कालोनी लखनऊ 226006

11. मुहूर्त चिन्तामणि– गोविन्द दैवज्ञ विरचित (2005) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38 यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।

12. वृहद्पाराशर होराशास्त्र पं. पद्मनाभ शर्मा (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38 यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।

13. वृहद्जातकम (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।

2.2.8 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. संस्कार प्रकाश, डा. भवानी शंकर त्रिवेदी कृत, (1986) श्री लालबहादुरशास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ शहीद जीतसिंह मार्ग नई–दिल्ली 110016

2. मुहूर्त चिन्तामणि– दैवज्ञ विरचित (2005) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38 यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।

3. फलदीपिका, व्याख्याकार– गोपेश कुमार ओझा, (1981) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

4. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द शास्त्री रचित, (2008) भारतीय ज्ञानपीठ 18 इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नई दिल्ली 110003

5. वृहद्पाराशर होराशास्त्र पं. पद्मनाभ शर्मा (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38 यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न–

(1) मांगलिक योग पर प्रकाश डालिए?
(2) मांगलिक योग कब बनता है?
(3) शुक्र से मांगलिक योग स्पष्ट करें?
(4) चन्द्र लग्न से मांगलिक विचार स्पष्ट करें?
(5) भाव पर स्थित मंगल के साथ पापीग्रह स्थित हो तो मांगलिक योग होता है या नहीं? इस पर प्रकाश डाले?
(6) लग्न से मांगलिक योग का वर्णन करें?
(7) पापग्रह मंगल दोष को किस प्रकार भंग करते है? इस पर सुविस्तृत प्रकाश डालें?
(8) अमंगली का मंगली के साथ विवाह सम्भव है या नहीं? यदि नही तो क्यों? स्पष्ट करें?
(9) सप्तम एवं अष्टम भाव के परिप्रेक्ष्य में मंगल दोष घातक कैसे है? इसे सिद्ध करते हुए विशद विवेचन करें?
(10) व्यय भाव में मंगल कैसे दोषप्रद है? इसकी विशद व्याख्या करें?

इकाई – 3 लग्न, चन्द्र एवं शुक्र से मांगलिक मिलान

इकाई की रूपरेखा–

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 मुख्य भाग खण्ड एक
    3.3.1 उपखण्ड एक – मंगल का विचार लग्न, चन्द्र, शुक्र से क्यों?
    3.3.2 उपखण्ड दो – द्वादश भावों में लग्नेश का फल।
    3.3.3 उपखण्ड तीन – चन्द्र लग्न से मंगल का विचार।
    3.3.4 उपखण्ड चार – लग्न, शुक्र से क्यों?
3.4 सारांश
3.5 पारिभाषिक शब्दावली
3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.7 सन्दर्भ ग्रंथों की सूची
3.8 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना–

इस इकाई में आपको प्रस्तावित करने जा रहे है कि लग्न, चन्द्र, एवं शुक्र से मांगलिक विचार, पिछली ईकाइयों में आपने मांगलिक योग क्या है? कैसे बनता है? मांगलिक किस–किस प्रकार से घातक होता है? यह जानकारी प्राप्त की होगी।

पाठकगण इस ईकाई के द्वारा सूक्ष्म रूप से चन्द्र, लग्न एवं शुक्र लग्न के विषय में सूक्ष्म रूप से जान सकेंगे। पिछली ईकाई में आप मांगलिक योग एवं मेलापक के विषय में अध्ययन करते आ रहे हैं, उनमें आपने केवल मात्र पढ़ा होगा कि लग्न से प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम और द्वादश भाव में मंगल हो तो जातक मांगलिक होता है और शास्त्रकारों ने उसे पत्नीनाशक योग एवं यही योग यदि स्त्री की कुण्डली में हो तो उसे पतिहन्ता का नाम दिया है।

प्रायः लोग कहते है कि 30 वर्ष के उपरान्त मंगल विचारणीय नहीं, परन्तु क्यों? क्या तीस वर्ष के उपरान्त जन्म पत्री से मंगल कहीं भाग जायेगा, अथवा मंगल के प्राकृतिक स्वरूप में परिवर्तन हो जायेगा। हमारे यहाँ पर व्यवहार में चर्चा होती है कि आंशिक रूप से जातक मांगलिक है। इस प्रकार के अनसुलझे प्रश्नों के विषय में आप इस ईकाई के माध्यम से ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

1. इस ईकाई का प्रमुख उद्देश्य हैं कि आंशिक रूप से मांगलिक विचार करना चाहिए। इस प्रकार के अनसुलझे सभी प्रकार के प्रश्नों के उत्तर आपको अध्ययन करने के लिए मिलेंगे।
2. चन्द्र लग्न से मांगलिक का विचार करना क्यों? शुक्र लग्न से मंगली का विचार क्यों? चन्द्रमा नौ ग्रहों में सबसे तीव्रगतिमान ग्रह है। मानव के शरीर में सबसे तीव्रगति से कार्य करने वाला मन है। मन का प्रतिनिधित्व चन्द्रमा करता है।
3. क्यों इस पंचभूतात्मक शरीर का सीधा सम्बन्ध ब्रह्मण्ड से है? गीता में भी कहा गया है, कि ''यत् पिण्डे तत् ब्रह्मण्डे'' अर्थात् जो हमारे पिण्ड रूपी शरीर में है वही इस ब्रह्मण्ड में भी दृग्गोचर होता है। अतः चन्द्रलग्न से मंगल का विचार इसलिए किया जाता है, क्योंकि इस पंचभूतात्मक शरीर में तन और म नही अहम् बिन्दु है।
4. शुक्र ग्रह भौतिकता का प्रतीक है, भौतिक सुखों के लिए व्यक्ति क्या से क्या नहीं कर गुजरता, इन सभी बिन्दुओं को उद्देश्य मान कर ईकाई में पाठकगणों को जानकारी करवाने का प्रयत्न किया गया है।

3.3 उपखण्ड एक – मंगल का विचार लग्न, चन्द्र, शुक्र से क्यों?

पीछे भी इस विषय में हम लिख चुके हैं कि व्यक्ति अपने शरीर को सब कुछ मानता है जबकि यह भी जानते हैं कि यह नश्वर है लेकिन फिर भी व्यक्ति इसके पीछे भागता है। इसको सजना, संवरना, इसका बाह्य आकर्षण के प्रति लगाव होना स्वाभाविक है। अतः इसी उद्देश्य को लेकर मंगल का विचार लग्न को ध्यान में रखकर किया जाता है।

ताकि इसके ऊपर कोई खरोंच दाग धब्बा न लग जाये। क्योंकि शरीर है तभी रोग–शोक, आधि–व्याधि, धन–दौलत, वाहन, मकानादि समस्त भौतिक सुखों का ाोग तो व्यक्ति शारीरिक आनन्द के लिए भोगता है। यदि शरीर ही नहीं रहेगा तो उक्त समस्त भौतिक सुखों का भोग किस प्रकार से प्राप्त कर सकेगा। मानव जब इस धरती पर अवतरित होता है तो माता–पिता का उद्देश्य यह नहीं होता कि हमारा जातक इस संसार में आकार सन्यासी बने उनका उद्देश्य होता है। वंशवृद्धि ताकि लुप्तपिण्डोद्क क्रिया न हो, अतः इस उद्देश्य को लेकर समस्त विश्व सन्तानोत्पत्ति के लिए प्रयासरत रहता है।

चन्द्रमा लग्न में हो तो जातक बलवान्, ऐश्वर्यशाली, सुखी, व्यवसायी, गानवाद्यप्रिय एवं स्थूल शरीर, चतुर्थ स्थान में हो तो दानी, मानी, सुखी, उदार, रोग रहित, रागद्वेषवर्जित, कृषक, विवाह के पश्चात् भाग्योदयी, जलजीवी एवं बुद्धिमान्, साँतवें स्थान में हो तो सभ्य, धैर्यवान्, नेता, विचारक, प्रवासी, जलयात्रा करने वाला, अभिमानी, व्यापारी, वकील, कीर्तिमान्, शीतल स्वभाववाला एवं स्फूर्तिवान्, आठवें भाव में हो तो विकारग्रस्त, प्रमेहरोगी, कामी, व्यापार से लाभवाला, वाचाल, स्वाभिमानी, बन्धन से दुखी होने वाला एवं ईष्यालु, बारहवें भाव में चन्द्रमा हो तो नेत्ररोगी, चंचल, कफरोगी, क्रोधी, एकान्तप्रिय, चिन्तनशील, मृदुभाषी एवं अधिक व्यय करने वाला होता है।

मंगल – लग्न में मंगल हो तो जातक क्रूर, साहसी, चपल, विचार रहित, महत्वकांक्षी, गुप्तरोगी, लौह धातु एवं व्रणजन्य कष्ट से युक्त एवं व्यवसायहानि, द्वितीय स्थान में हो तो कटुभाषी, धनहीन, निर्बुद्धि, पशुपालक, कुटुम्ब क्लेशवाला, चोर से भक्ति, धर्मप्रेमी, नेत्र–कर्णरोगी तथा कटु–तिक्तरसप्रिय, तृतीय भाव में हो तो प्रसिद्ध, शूरवीर, धैर्यवान्, साहसी, सर्वगुणी, बन्धुहीन, बलवान् प्रदीप्त जठराग्निवाला, भ्रातृकष्टकारक एवं कटुभाषी, चतुर्थ में मंगल हो तो वाहन सुखी, सन्ततिवान्, मातृसुखहीन, प्रवासी, अग्निभययुक्त, अल्पमृत्यु या अपमृत्यु प्राप्त करने वाला, कृषक, बन्धुविरोधी एवं लाभयुक्त, पाँचवें भाव में हो तो उग्रबुद्धि, कपटी, व्यसनी, रोगी, उदररोगी, कृशशरीरी, गुप्तांगरोगी, चंचल, बुद्धिमान् एवं सन्तति–क्लेशयुक्त, छठे भाव में हो तो प्रबल जठराग्नि, बलवान्, धैर्यशील, कुलवन्त, प्रचझड शक्ति, शत्रुहन्ता, ऋणी, पुलिस अफसर, दाद रोगी, क्रोधी, व्रण और रक्तविकारयुक्त एवं अधिक व्यय करने वाला, सातवें स्थान में हो तो स्त्री–दुखी, वातरोगी, राजभीरू, शीघ्र कोपी, कटुभाषी, धूर्त, मूर्ख, निर्धन, घातकी, धननाशक एवं ईष्यालु, आठवें भाव में हो तो व्याधिग्रस्त, व्यसनी, मद्यपायी, कठोरभाषी, उन्मत, नेत्ररोगी, शस्त्रचोर, अग्निभीरू, संकोची, रक्तविकारयुक्त एवं धनचिन्तायुक्त, नौवें भाव में हो तो द्वेषी, अभिमानी, क्रोधी, नेता, अधिकारी, ईष्यालु, अल्प लाभ करने वाला, यशस्त्री, असन्तुष्ट एवं भ्रातृविरोधी, दसवें भाव में हो तो धनवान्, कुलदीपक, सुखी, यशस्त्री, उत्तम–वाहनों से सुखी, स्वाभिमानी एवं सन्तति कष्टवाला, ग्यारहवें भाव में हो तो कटुभाषी, दम्भी, झगड़ालू, क्रोधी, लाभ करने वाला, साहसी, प्रवासी, न्यायवान् एवं धैर्यवान् और बारहवें भाव में मंगल हो तो नेत्ररोगी, स्त्रीनाशक, उग्र, ऋणी, झगड़ालू, मूर्ख व्ययशील एवं नीच प्रकृति का पापी होता है।

शुक्र लग्न में हो तो जातक दीर्घायु, सुन्दर देही, ऐश्वर्यवान्, सुखी, मधुरभाषी, प्रवासी, विद्वान्, भोगी, विलासी, कामी एवं राजप्रिय, द्वितीय भाव में हो तो धनवान्, मिष्टान्नभोजी, यशस्त्री, लोकप्रिय, जौहरी, सुखी, समयज्ञ, कुटुम्बयुक्त, कवि, दीर्घजीवी, साहसी एवं भाग्यवान्, तृतीय भाव में हो तो सुखी, धनी, कृपण, आलसी, चित्रकार, पराक्रमी, विद्वान्, भाग्यवान् एवं पर्यटनशील, चतुर्थभाव में हो तो सुन्दर, बलवान्, परोपकारी, आस्तिक, सुखी, व्यवहारदक्ष, पुत्रवान्, दीर्घायु, सातवें भाव में हो तो स्त्री से सुखी, उदार, लोकप्रिय, धनिक, चिन्तित एवं भाग्यवान् बारहवें भाव में शुक्र हो तो न्यायशील, आलसी, पतित, धातुविकारी, स्थूल, परस्त्रीरत, बहुभोजी, धनवान्, मितव्ययी एवं शत्रुनाशक होता है। शुक्र ग्रह भौतिक सुखों का प्रदाता है। आज मानव आधुनिक चकाचौंध का जीवन जीना चाहता है। क्योंकि आज व्यक्ति शारीरिक एवं मानसिक दोनों रूप से निठठला हो चुका है, वह शरीर से थोड़ा सा भी परिश्रम नहीं करना चाहता है इसलिए वह पैदल न चलकर गाड़ी की चाह रखता है, सामान्य जीवन न जीकर पंखे और एसी में सोना चाहता है। आज मानव की प्रकृति बन चूकी है कि वह नौकर, चाकर, गाड़ी बंगला आदि रखने का आदि हो चूका है। आज व्यक्ति अध्यात्मिकता को छोड़कर भौतिकता में ज्यादा लिप्त हो चूका है। यह स्थिति सामान्य गृहस्थीयों के ही साथ नहीं अपितु बड़े–बड़े मठों में, आश्रमों में भी दृग्गोचर होती है। जहाँ भौतिक सुखों का नामोनिशान नहीं होना चाहिए था क्योंकि इन सभी का निर्माण प्राचीन काल में ईश्वर प्राप्ति के लिए हुआ था न कि मौज–मस्ती एवं आनन्द के लिए, दूसरी ओर यदि हम तनिक ध्यान दे ंतो शुक्र भृगुपुत्र है जो कि दैत्यों के गुरू हुए औ दैत्यों का प्रमुख कार्य तो यही हुआ करता था कि मौज–मस्ती एवं आनन्द के लिए, दूसरी ओर यदि हम तनिक ध्यान दे ंतो शुक्र भृगुपुत्र है जो कि दैत्यों के गुरू हुए और दैत्यों का प्रमुख कार्य तो यहीं हुआ करता था कि मौज–मस्ती, आनन्द एवं उत्साह के लिए छीना–झपटी, चोरी, झूठ, उगना, वंचना, अपहरण करना, यहीं स्थिति आज परिवार में देखी जा सकती है कि यदि पत्नी के कहने से पति भौतिक सुखों की पूर्ति नहीं करता है तो परिवार में क्लेश, लड़ाई, झगड़ा एवं तरह–तरह के विवादों में घिर कर दुखी होता है और यदि पूर्ति करता है तो यह संभव नहीं कि वह अपनी मेहनत, ईमानदारी, सत्य एवं धर्मानुकूल में ये सभी इन भौतिक सुखों को प्राप्त कर सकें इसलिए शुक्र लग्न से प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम एवं द्वादश भावस्थ हो तो उसे मांगलिक कहा जाता है और चूंकि मंगल और शुक्र का आपसी सम्बन्ध भी अनुकूल नहीं है इसलिए भी भौतिकता में अल्पता आये इन सभी बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए शुक्र ग्रह से विचार किया जाता है और करना भी चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

अतिलघुत्तर प्रश्न–

1. शरीर का विचार कौन से भाव से किया जाता है?
2. चन्द्रमा लग्न में क्या फल देता है?

3. कौन से भाव का मंगल शूरवीर, धैर्यवान् बनाता है?
4. जलयात्रा कौन से भाव में रहकर चन्द्रमा करवाता है?
5. लग्न में शुक्र का फल क्या है?

3.3.2 उपखण्ड दो – द्वादश भावों में लग्नेश का फल।

लग्नेश लग्न में हो तो जातक नीरोग, दीर्घायु, बलवान्, जमींदार, कृषक और परिश्रमी, द्वितीय में हो तो धनवान्, लब्धप्रतिष्ठ, दीर्घजीवी, स्थूल, सत्कर्मनिरत, नायक, नेता और कृतज्ञ, तृतीय भाव में हो तो सद्बन्धुयुत, उत्तम मित्रवान्, धार्मिक, दानी, शूर, बलवान्, समाज में आदर पाने वाला और साहसी, चौथे भाव में हो तो राजप्रिय, दीर्घजीवी, माता–पिता की भक्ति करने वाला, अल्पभोजी, पिता से धन पाने वाला, पुरूषार्थी और कार्यरत, पाचवें भाव में हो तो सुन्दर पुत्रवाला, त्यागी, लब्धप्रतिष्ठ, धनिक, विनीत, विद्वान, दीर्घायु और कर्तव्यनिष्ठ, छठे भाव में हो तो बलवान्, कृपण, धनवान्, शत्रुनाशक, नीरोग और सत्कार्यरत, सातवें भाव में हो तो तेजस्वी, शीलवान् व सुशीला, भाग्यवान्, आठवें भाव में हो तो कृपण, धन–संग्रहकर्ता, दीर्घजीवी, लग्नेश यदि क्रूर हो तो कटुवक्ता, क्षीण–शरीरी तथा सौम्य ग्रह हो तो पुष्ट देहवाला और नीरोग, नौवें भाव में हो तो पुण्यवान्, पराक्रमी, तेजस्वी, स्वाभिमानी, सुशील, विनीत, धार्मिक व्रती और लब्धप्रतिष्ठ, दसवें भाव में हो तो विद्वान् सुशील, गुरूजन–सेवा में रत, राज्य से लाभ प्राप्त करने वाला और समाल–प्रसिद्ध, ग्यारहवें भाव में हो तो श्रेष्ठ, आजीविका वाला, सुखी, प्रसिद्ध, तेजस्वी, बली, परिश्रमी और साधारण धनी, एवं बारहवें भाव में हो तो कठोर प्रकृति, व्यर्थ बकवास करने वाला, प्रसन्नचित्त, धोखेबाज, प्रवासी, रोगी और अविश्वासी होता है।

अभ्यास प्रश्न

लघुत्तर प्रश्न–

1. तृतीय भाव में लग्नेश का क्या फल है?
2. पंचम भाव में लग्नेश हो तो क्या करवाता है?
3. षष्ठ भावस्थ लग्नेश के विषय में बतायें?
4. अष्टमभाव में लग्नेश हो तो क्या फल देगा?
5. लग्नेश द्वादश भाव में हो तो क्या फल होगा?

3.3.3 उपखण्ड तीन – चन्द्र लग्न से मंगल का विचार।

सातों ग्रहों की अपनी–अपनी गतियाँ है, कोई शीघ्रगति है तो कोई अतिशीघ्र, मन्दगति है तो अतिमन्द, वक्रगति है तो अतिवक्र, कोई एक समगति से चलता, तो कोई ऋज्वि नामक गति से आकाश में भ्रमण करता है। इस प्रकार से ग्रहों की आठ प्रकार की गतियों का उल्लेख रावण के श्वसुर मयासुर ने सूर्यसिद्धान्त में किया है।

वक्रानुवक्रा कुटिला मन्दा मन्दतरा समा।
तथा शीघ्रतरा शीघ्रा ग्रहणामष्टधा गतिः।।

तत्रातिशीघ्रा शीघ्राख्या मन्दा मन्दतरा समा।
ऋज्वीति पंचधाज्ञेया या वक्रा सानुवक्रगा।।

उपर्युक्त आठों गतियों में चन्द्रमा ग्रह सभी ग्रहों में सबसे तेज चलने वाला ग्रह है। आपने देखा हगा कि प्रतिमाह संक्रान्ति आती है जिसे सूर्य संक्रान्ति के नाम से जाना जाता है और संक्रान्ति का तात्पर्य है कि एक राशि के भोगकाल को भोगने के उपरान्त अग्रिम राशि में प्रवेश करना। क्योंकि एक राशि का मान 30 अंश है और उसी राशि को पार करने के लिए तेरह माह लग जाते है, और शनि तीस माह और चन्द्रमा को उसी राशि को भोगने के सवा दो दिन का समय लगता है। अतः सबसे शीघ्रगति ग्रह चन्द्रमा हुआ। चन्द्रमा ग्रहों में मन का प्रतिनिधित्व करता है। और शरीर के भीतर सबसे (सैंस्टीवी) नाजुक अंग है तो वह मन क्योंकि मन के द्वारा ही हम सुख–दुख, गर्मी–सर्दी, लाभ–हानि का अनुमान लगा सकते हैं। यथा–

मनोऽनुकूलं सुखम् मनः प्रतिकूलम् दुखम्।

इसलिए व्यक्ति का मन यदि ठीक रहेगा तो व्यक्ति समस्त कार्यो को एवं गतिविधयों को ठीक से कर पायेगा क्योंकि वराहमिहिराचार्य ने वुहज्जातक में मन को ''हिमगु'' कहा है अर्थात् चन्द्रमा के ऊपर बर्फ के पहाड़ होने का संकेत है कि चन्द्रमा शीतलता को देने वाला ग्रह है।

यदि किसी की जन्मपत्री में चन्द्रमा की स्थिति ठीक नहीं हो तो इसका प्रत्यक्ष उदाहरण आप अमावस्या के दिन अथवा उसके आसपास या पूर्णमासी के आसपास इस प्रकार के व्यक्ति प्रायः अत्यंत दुखी एवं कष्टप्रद जीवन जीते हैं। और दूसरा सबसे बड़ा उदाहरण आप अमावस्या या पूर्णमासी के दिन समुद्र में ज्वार भाटा को देख कर अनुमान लगा सकते है जिसमें चन्द्र ग्रह समुद्र की दूरी एवं समीपता के कारण खिंचवा होने से लहरों का उठना।

ठीक इसी प्रकार से चन्द्रमा सब ग्रहों में सबसे शीघ्र गति होने के कारण कवियों की कहावत को सार्थक सिद्ध करता है कि ''जहाँ न पहुँचे रवि वहाँ पहुँचे कवि'' अर्थात् यह सम्भव ही नहीं है कि भूमण्डल पर कोई ऐसा स्थान हो जहाँ सूर्य की किरणें न पड़ती हो लेकिन कहने का तात्पर्य यह है कि भले ही सूर्य की किरणें वहाँ हो परन्तु उससे पहलने कहीं मन दस्तक दे देता है। अतः चन्द्रमा ग्रह से मंगल के विचार का प्रमुख उद्देश्य यहीं है।

अभ्यास प्रश्न

सत्य/असत्य

1. ग्रहों की पाँच प्रकार की गतियाँ है। सत्य/असत्य
2. आठ प्रकार की गतियों ग्रहों की होती है। सत्य/असत्य
3. शीघ्रतरा गति आठ गतियों में नहीं आती। सत्य/असत्य
4. चन्द्रमा ग्रहों में शरीर का प्रतिनिधित्व करना है। सत्य/असत्य

5. 96 एक राशि का मान 30 अंश होता है। सत्य/असत्य

3.3.4 उपखण्ड चार – लग्न, शुक्र चन्द्र से मांगलिक विचार।

लग्न–ज्योतिष शास्त्र द्वादश भावों में लग्न को सर्वाधिक महत्व देता है। क्योंकि लग्न शरीर का प्रतिनिधित्व करता है। शरीर यदि स्वस्थ है तो व्यक्ति सर्वसमर्थ है, अन्यथा वह पंचभूतों से निर्मित जीता जागता पृथ्वी पर भारतरूप है। यही लग्न में स्थित राशि स्वामी की है। यदि दोनों लग्न व लग्नेश जन्मांग चक्र में छः, आठ, बारह से कहीं अन्यत्र हों और उसके साथ लग्नेश भी इन्हीं उपर्युक्त भावों से कहीं अन्यत्र स्थित हो और पापकर्तरी योग में न रहते हुए हो तो व्यक्ति जीवन पर्यन्त शारीरिक व मानसिक रूप से व्यथित नहीं हो सकता और इस प्रकार से उस व्यक्ति विशेष की जीवन नैया बहुत ही सुखमय, आनन्दपूर्वक एवं सर्वसम्पतियों से युक्त होता हुआ सर्वगुण सम्पन्न होगा। चूंकि हमें लग्न से प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम भावों में मंगल का विचार करना है क्योंकि इन्हीं भावों की स्थिति मांगलिक योग बनाती है, जिसे मांगलिक कहा जाता है। अतः सर्वप्रथम भिन्न–भिन्न भावों में लग्नेश स्थिति होने पर क्या फल रहेगा। यथा–

प्रथम भाव–लग्न में मंगल स्थिति होने पर जातक का स्वभाव किस प्रकार से प्रभावित करेगा। यथा–

प्रथमभाव में मंगल की स्थिति–

प्रथम भाव जन्मांग चक्र में अहम स्थान रखता है, क्योंकि प्रथमभाव का प्रमुख विषय है शरीर। अतः शरीर स्वास्थ होगा तो मन भी ठीक कार्य करेगा और जीवन की गाड़ी प्रवाह रूप में अनवरत धारा में बहती हुयी चली रहेगी। क्योंकि कहा भी गया है कि ''शरीमाद्य खलु धर्मसाधनम्'' धर्म की साधना के लिए रक्षा नहीं कर सकते तो आप धार्मिक भी नहीं हो सकते।

मेषराशिस्थ चन्द्रफल विचार

जिसके जन्म समय में चन्द्रमा मेष राशि का हो, तो वह पुरूष सोने की जैसी वर्णवाला, स्थित धनयुक्त, भाई इत्यादि से रहित, साहसी, मानशाली, कामातुर, जानु भाग में कमजोर, कुनखी, अल्प शरीरस्थ केश वाला, चंचल, मानधन से युक्त, कमल सदृश, हाथ–पैर वाला, पुत्रादि से विस्तृत, वर्त्तुलाकार नेत्र वाला, स्नेहयुक्त, जल से डरपोक, व्रण द्वारा विकृत शिरा वाला तथा स्त्रिजित होता है।

वृषराशिस्थ चन्द्रफल विचार

जिसके जन्म समय चन्द्रमा वृषराशि का हो, तो वह पुरूष सुगठित, विशाल छाती वाला, अत्यन्त दानी, सघन तथा कुटिल केश से युक्त, कामी, यशस्त्री, रमणीय, कन्या सन्तान वाला, वृष के समान नेत्रवाला, हंसलीला का प्रचारक, मध्य तथा अन्त अवस्था में ऐश्वर्य युक्त, मोटे कटि–चरण–स्कन्ध–जानु–मुख तथा जंघा से युक्त, पाश्रर्व–मुख तथा पृष्ठ में चिन्ह वाला, शुभ गतियुक्त तथा शान्तिशील होता है।

मिथुनराशिस्थ चन्द्रफल विचार

जिसके जन्म समय में चन्द्रमा मिथुनराशि का हो, वह पुरूष उन्नत नासिका तथा श्यामनेत्र वाला, सुरतविधि व कला–काव्य का ज्ञाता, ऐश्वर्यभोगी, हाथ में मस्त्य का चिंहवाला, विषयसुख में लीन, बुद्धिमान्, शिरालु, सुन्दर, सौभाग्य तथा हास्य और प्रियवचन से युक्त, स्त्रीजित, विस्तृत शरीर वाला, नपुंसकों से मित्रता करने वाला तथा मातृयुग्म से प्रपोषित होता है।

कर्क राशिस्थ चन्द्रफल विचार

जिसके जन्म समय में चन्द्रमा कर्क राशि का हो, वह पुरूष सौभाग्य, धैर्य, गृह, मित्र, भ्रमण, ज्योतिष ज्ञान तथा शील से युक्त; कामी, कृतज्ञ, राजमन्त्री, प्रामाणिक प्रवासी, उन्मान युक्त, सुन्दर केश युक्त, भवन, बगीचा तथा सुन्दर वापी इत्यादि बनाने में रूचि रखने वाला होता है।

सिंह राशिस्थ चन्द्रफल विचार

जिसके जन्म समय सिंह राशि में चन्द्रमा स्थित हों, तो वह पुरूष मोटे हड्डी वाला, अल्प रोम वाला, मोटा गला तथा मुखवाला, ह्रस्व तथा पिंगल नेत्र युग्म वाला, स्त्री द्वेषी, क्षुधा, तृष्णा, उदर और दाँत के रोग से पीड़ित, मांसभक्षक, दाता, तीक्ष्ण, अल्प पुत्र युक्त, वन तथा नगर में रहने वाला, माता का वशी, सुन्दर वक्षस्थलयुक्त, भयंकर, कार्य में आलसी तथा सबसे गम्भीर दृष्टिवाला होता है।

कन्या राशिस्थ चन्द्रफल विचार

जिसके जन्म समय चन्द्रमा कन्या राशि में हों, वह पुरूष स्त्री के क्रीड़ा में आसक्त, लम्बे बाहुओं से युक्त, सुन्दर शरीर तथा रमणीय दाँत, आँख व कणों से युक्त, विद्वान्, आचार्य, धर्मिष्ठ, प्रियभाषी, सत्यशौच प्रधान, धीर, बलवान्, दयावान्, परदेश में रत, शान्ति तथा सौभाग्य का भोगी, प्रायः कन्या सन्तान वाला और विशेष कामासक्त होता है।

तुला राशिस्थ चन्द्रफल विचार

जिसके जन्म समय तुला राशि में चन्द्रमा हो, वह पुरूष उन्नत नासिकायुक्त, विस्तृत आँख वाला, कृशित मुख व शरीरयुक्त और बहुत स्त्रियों वाला, बैल, गाय तथा भूमि से युक्त, पवित्र, वृष के समान वृषण वाला, पराक्रमी, कार्यकर्ता, देवता–ब्राह्मणों का भक्त, अत्यन्त विभवयुक्त, स्त्री से पराजित, हीन देह, धान्य लेने की बुद्धि वाला तथा बन्धु वर्गों का उपकारी होता है।

वृश्चिक राशिस्थ चन्द्रफल विचार

जिसके जन्म समय में चन्द्रमा वृश्चिक राशि का हो, वह पुरूष लोभी, वर्त्तुलाकार उरू तथा जंघायुक्त, कठिन, तनु, नास्तिक, क्रूर, चेष्टा वाला, चोर, बाल्यावस्था में रोगी ओष्ठ और नख से हीन, सुन्दर नेत्र युक्त, कार्य में उद्यत, दक्ष, परयुवति में रत, बन्धुरहित, प्रमत्त, चण्ड, राजा द्वारा नष्ट धन वाला तथा बृहत् उदर और शिरायुक्त होता है।

धनु राशिस्थ चन्द्रफल विचार

जिसके जन्म समय में चन्द्रमा धनु राशि का हो, तो वह पुरूष कुबड़ा, वर्त्तुलाकार

नेत्र वाला, स्थूल हृदय व कटि से युक्त, मोटे बाहुओं से युक्त, वक्ता, दीर्घस्कन्ध व कण्ठयुक्त, जल तट पर निवास करने वाला, शिल्पज्ञ, गूढ़ गूह्रा वाला, शूर, हड्डीसारवाला, प्रख्यात, अत्यन्त बलयुक्त, स्थूल कण्ठ ओष्ट तथा घोण वाला, भाईयों में प्रेम रखने वाला, कृतज्ञ, मिले हुए चरणयुक्त और बुद्धिमान् होता है।

मकर राशिस्थ विचार

जिसके जन्म समय मकर राशिगत चन्द्रमा हो वह पुरूष गीतज्ञ, शीत से भयभीत, मोटी–मोटी शिराओं से युक्त, सत्य, धर्म का सेवक, विद्वान्, विख्यात्, अल्पक्रोधी, मन में भययुक्त, घृणारहित, निर्लज्ज, सुन्दर नेत्र या शरीर वाला, कृश शरीर वाला, श्रेष्ठ स्त्रियों में लीन, सत्कवि, वर्त्तुलाकार जंघायुक्त, मन्दोत्साहयुक्त, अत्यन्त लोभी तथा लम्बे कण्ठ व कर्ण से युक्त होता है।

कुम्भ राशि चन्द्रफल विचार

जिसके जन्म समय चन्द्रमा कुम्भ राशि पर हो, तो वह पुरूष उच्ची नासिका से युक्त, रूक्ष देहवाला, मोटे–मोटे चरण और बाहुओं से युक्त, शठ, आलसी, वृहद् मुख व कटि से युक्त, शिल्प, विद्यायुक्त, दुःशील, दुःखतप्त और दरिद्र होता है।

मीन राशिस्थ चन्द्रफल विचार

जन्म समय में चन्द्रमा यदि मीन राशि पर हो, तो पुरूष शिल्प शास्त्र की निपुणता से बहुत–सा धनधान्य का अधिकारी, भलाई तथा जय करने में निपुण, शास्त्रज्ञ, सुन्दर देहवाला, गीतज्ञ, धर्मनिष्ठ, बहुत युवतियों में रत, सत्यवादी, राजसेवी, अल्पक्रोधी, बृहत् मस्तक वाला, सुख–खजाने व धन का भोगी, स्त्रीजित, सत्स्वभावयुक्त, समुद्र यात्रा में लीन और दानी होता है।

मेष राशिस्थ भौमफल विचार

यदि जन्म या प्रश्न के समय में मेष राशि का मंगल हो, तो पुरूष तेजस्वी, सत्यवादी, शूर, राजा अथवा रण में प्रतिष्ठित, साहसकर्म में लीन, सूनापुर–ग्राम–समूह का स्वामी, जल्दीबाजी से काम करने वाला, दानी तथा बहुत गौ–भेड़–बकरे इत्यादि से युक्त और विशेष धान्य संग्रह करने वाला, प्रचण्ड तथा बहुत–सी स्त्रियों में आसक्त होता है।

वृष राशिस्थ भौमफल विचार

वृष राशि का मंगल हो, तो पुरूष स्त्रियों का व्रत नष्ट करने वाला, बहुभाषी, अल्प धन व पुत्र से युक्त, द्रोही, वेष तथा खेल करने वाला, बहुत दुष्ट वचन बोलने वाला, संगीत में लीन, पापी, भाईयों का विरोधी, द्वेषी, बहुत जनों के पालन–पोषण में तत्पर, अविश्वासी, उद्धत तथा कुलनाशक होता है।

मिथुन राशिस्थ कुलफल विचार

जन्म समय में मंगल मिथुन राशि का हो, तो पुरूष सुन्दर, क्लेश को सहन करने वाला, बहुत विख्यात, काव्यविधि में निपुण, अनेक शिल्प व कलाओं में निपुण विशेष विदेश गमन में तत्पर, धर्मात्मा, बुद्धिमान्, भलाई के अनुकूल कार्य करने वाला, पुत्र से मित्रतायुक्त

तथा अनेक कार्यों में लीन होता है।

कर्क राशिस्थ कुजफल विचार

कर्क राशि का मंगल हो, तो पुरूष परगृह में निवास करने वाला, रोगपीड़ा में व्याकुल रहने वाला, खेती से धन वाला, बाल्य अवस्था में राज्य, भोजन व वस्त्र का इच्छुक, परगृह में भोजन करने वाला, जलाशय सम्बन्धी धन से युक्त, बार–बार वेदना से पीड़ित, कोमल तथा सभी जगह दीन की तरह रहने वाला होता है।

सिंह राशिस्थ भौमफल विचार

जन्म के समय में सिंह राशि का मंगल हो, तो पुरूष असहिष्णु, प्रचण्ड, शूर, दूसरे का धन व सन्तानों का संग्रह करने वाला, वन में निवास करने वाला, गौकुल व मांस की रूचि रखने वाला, पहली स्त्री के सुख से हीन, व्याघ–मृग तथा सर्पों का नाशकर्त्ता, पुत्र व धर्म से रहित कार्य में दक्ष, बलवान् तथा रूपवान् होता है।

कन्या राशिस्थ भौमफल विचार

कन्या राशि का मंगल हो, तो पुरूष सज्जनों का पूज्य, अत्यन्त धनी, रति व गीत के धन से युक्त, मृदु व प्रिय बोलने वाला, विविध व्यय वाला व अल्प ऐश्वर्ययुक्त, विद्वान्,, पार्श्ववर्तियों से विनीत, अहित कार्यों से अर्थार्जन में भीरु, वेद व स्मृति का ज्ञाता, धर्मवान्, सुन्दर व बहुत शिल्पज्ञ, स्नान व विलेपन में लीन तथा सुन्दर होता है।

तुला राशिस्थ भौमफल विचार

जन्म के समय में तुला राशि का मंगल हो, तो पुरूष मार्ग में निरत, पुण्यवान्, यथार्थ, वाक्य कहने वाला प्रवक्ता, सुन्दर, हीनांग, छोटा परिवार वाला, सङ्ग्राम की अभिलाषी, दूसरों का उपभोग करने वाला, स्त्री–गुरू व मित्रों का प्रिय, पहली स्त्री के सुख से हीन, मद्य विक्रय व वेश्या के यहाँ से प्राप्त धन का नाश करता है।

वृश्चिक राशिस्थ भौमफल विचार

वृश्चिक राशि का मंगल हो तो पुरूष व्यापार में वेद सदृश सत्य आचरण वाला तथा चोरों के समूह का स्वामी, कार्य में कुशल, युद्ध में उत्सुक, अत्यन्त पापी, बहुत अपराध करने वाला, शठों के साथ वैर करने वाला, द्रोही, वध, व अहितकर बुद्धि रखने वाला, परनिन्दक, भूमि, पुत्र व स्त्री का स्वामी और विष–अग्नि व शस्त्र के व्रण से सन्तप्त रहता है।

धनु राशिस्थ भौमफल विचार

जन्म के समय में धनुराशि का मंगल हो, तो पुरूष अत्यधिक घाव से कृशित शरीर वाला, निष्ठुर वाक्य बोलने वाला, शठ, पराधीन और रथ, गज व पद से भी अत्यन्त युद्ध करने वाला, परसैन्य में भी रथ से शर धारण करने वाला, अत्यन्त श्रम से सुख भोगने वाला, परस्पर क्रोध से सुख व धन का नाशकर्त्ता, गुरू में असक्त रहने वाला होता है।

मकर राशिस्थ भौमफल विचार

मंगल मकर राशि का हो, तो पुरूष धन्य, धनोपार्जन करने वाला, सुख व भोग से

युक्त, स्वस्थ, श्रेष्ठ मति, विख्यात, सेनापति अथवा राजा, सद्यः रण में विजयी, स्वबन्धु तथा स्वदेश में रहने वाला, स्वतन्त्र, रक्षा करने वाला, सुशील तथा बहुत उपचार में लीन रहने वाला होता है।

कुम्भ राशिस्थ कुजफल विचार

जन्म के समय में कुम्भ राशि का मंगल हो, तो पुरूष आश्रय तथा पवित्रता से रहित, वृद्धसदृश, मृत्यु के समय बहुत दुर्गति भोगने वाला, मात्सर्य, असूय (ईर्ष्या), (तथा ''असूया तु दोषोरोपो गुणेष्वपि'' इत्यमरः) मिथ्या वाग्दोष द्वारा धन को नष्ट करने वाला, रोमयुक्त शरीर वाला, विकृत, द्यूत (जुआ) आदि द्वारा धन नष्ट करने वाला, कुवेषधारी, दुःख से वृत्ति (जीविका) प्राप्त करने वाला, पान में रूचि रखने वाला तथा दुर्भग होता है।

मीन राशिस्थ कुजफल विचार

मीन राशि का मंगल हो, तो पुरूष रोगार्त्त, अल्प सन्तान वाला, परदेशी, स्वबन्धुओं से सन्तप्त, माया तथा ठगपन के दोष से सर्वस्व नाशकर्त्ता, विषादी, कुटिल, अत्यन्त तीक्ष्ण, शोकयुक्त, गुरू व ब्राह्मण का निदक, सदा हीन, इष्टवेत्ता तथा ज्ञानवान् और स्तुति प्रिय विख्यात होता है।

अभ्यास प्रश्न

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें–

1. चन्द्रमा को .....कहा गया है। (वायुतत्व, हिमगु, शीतोष्ण)
2. समुद्र में ज्वारभाटा.....को आता है। (अमावस्या, अष्टमी, द्वादशी)
3. चन्द्रमा.....ग्रह है। (मन्दगति, मध्यमगति, शीघ्रगति)
4. रावण के श्वसुर.....थे। (घसमासुर, मयासुर, भस्मासुर)
5. शनि एक राशि में.....माह में भ्रमण करता है। (30, 25, 40, 10)

मेष व वृष राशिस्थ शुक्र का क्रम से फल विचार

जन्म समय शुक्र यदि मेष राशि का हो, तो पुरूष रात्रि में रतौंधी (निशान्ध) रोग से युक्त, बहुदोषी, विरोधी, परांगनाचोर, वेश्या व वन–पर्वत में घूमने वाली स्त्री के कारण बन्धन प्राप्त करने वाला, क्षुद्र, कठोर, चोर–सेना–पुर तथा शूद्रों का स्वामी, अविश्वासी और धृष्ट होता है।

वृष राशि का शुक्र हो, तो बहुत स्त्री तथा रत्न से युक्त, खेती–कृषि युक्त, गन्ध–माला और वस्त्र से युक्त, गौ–बैल इत्यादि के द्वारा जीविका वाला, दानी, निज बन्धुओं का स्वामी, सुरूपवान्, सम्पन्न, अनेक विद्यायुक्त, बहुत देने वाला, प्राणियों का हितकारक, गुणों से प्रधान और परोपकारी होता है।

मिथुन व कर्क राशिस्थ शुक्र का क्रम से फल विचार

जन्म के समय शुक्र मिथुन राशि का हो, तो पुरूष विज्ञान व कलाशास्त्र में प्रसिद्ध, सुरूपवान्, कामी, हर प्रकार के लेख में निरत, काव्यकर्त्ता, सर्वप्रिय, सज्जन,

स्मृति–गीत–नृत्य विभव सम्पन्न तथा सुहृद्जनों से युक्त, देवता व ब्राह्मणों का भक्त तथ स्नेहयुक्त होता है।

कर्क राशि का शुक्र हो, तो रति तथा धर्म में लीन, बुद्धिमान्, बलवान्, मृदु, गुणवानों में भी प्रधान, मनोभिलषित सुख तथा धन से युक्त, दर्शनीय सुन्दर, नीतिज्ञ तथा स्त्री के भोग–विलास के प्रभाव से रोग पीड़ित और स्ववंशोत्पन्न दोष से सन्तप्त होता है।

सिंह व कन्या राशिस्थ शुक्र का क्रम से फल विचार

जन्म के समय शुक्र यदि सिंह राशि का हो, तो पुरूष युवतियों का भक्त, सुखी, धनवान्, प्रसन्न, अल्प सत्वयुक्त, बन्धुओं का प्रिय, विचित्र सुख, दुःखी, परोपकारी, देवता–ब्राह्मण व गुरूओं से सहमत भक्त तथा बहुत चिन्ताओं से युक्त होता है।

कन्या राशि का शुक्र हो, तो पुरूष अल्प चिन्तायुक्त, मृदु, निपुण, दूसरों की सेवा करने वाला, कलाविधि का ज्ञाता, स्त्री से सम्भाषण में मधुर, विनीतजनों के निमित्त उपाय करने वाला, स्त्री तथा दुष्टरति में विनीत, सुख व भोग से रहित, तीर्थ और सभा में पण्डित होता है।

तुला व वृश्चिक राशिस्थ शुक्र का क्रम से फल विचार

जन्म के समय शुक्र तुला राशि का हो, तो पुरूष परिश्रम से धन पैदा करने वाला, शूर, विचित्र माला तथा वस्त्र को धारण करने वाला, विदेशवासी, नैपुणता में कुशल, दुष्कर कार्य में भी चंचल, समर्थ, रूचिर तथा पुण्यवान्, देवता और ब्राह्मण के पूजा से यश प्राप्त करने वाला, चतुर और सुभग होता है।

वृश्चिक राशि का शुक्र हो, तो पुरूष झगड़ालू, पापी, धर्मरहित, बहुत बोलने वाला, भाइयों से विरक्त, धन्य, शत्रुओं से युक्त, पापी, आर्य, कुलटा का द्वेषी, वध में निपुण, बहुत ऋण से युक्त, दरिद्र, निन्दित शीलयुक्त तथा गुप्तरोग से पीड़ित होता है।

धनु व मकर राशिस्थ शुक्र का क्रम से फल विचार

जन्म के समय धनु राशि का शुक्र हो, तो पुरूष सद्धर्म–कर्म तथा धन से उत्पन्न फलों से युक्त, जगत्प्रिय, कान्त, श्रेष्ठ, कुल योग्य शब्द से युक्त, विद्वान्, गायों का पालन करने वाला, अलंकरण की इच्छा करने वाला, श्रेष्ठ धन व स्त्री से युक्त, सुभग, राजमन्त्री, चतुर, मोटा, उच्च शरीर से युक्त, सज्जनों तथा समूह का पूज्य होता है।

मकर राशि का शुक्रं हो, तो पुरूष व्यय और भय से सन्तप्त, दुर्बल शरीर युक्त, वृद्धांगना से सक्त, हृदय सम्बन्धित रोग से युक्त, धन का लोभी, लोभवश, मिथ्यावादी तथा ठग, निपुण, क्लीब, चेष्टराहित, दूसरों के लिये चेष्टा करने वाला, दुःखी, मूर्ख और क्लेशयुक्त होता है।

कुम्भ व मीन राशिस्थ शुक्र का क्रम से फल विचार

जन्म के समय शुक्र कुम्भ रशि का हो, तो पुरूष उद्वेग रोग से तप्त, विफल कार्यों में भी सर्वदा आसक्त, दूसरों की स्त्री में सक्त, गुरू तथा पुत्रों से वैर करने वाला, स्नान–उपभोग–भूषण–वस्त्रादि से रहित और मलिन होता है।

मीन राशि का हो, तो पुरूष चतुरता, दान और गुण से युक्त, अत्यन्त धनी, शत्रुओं को नीचा करने वाला, लोक में प्रसिद्ध, श्रेष्ठ, विशिष्ट चेष्टायुक्त, राजा का प्रिय, वाणी तथा बुद्धि से युक्त, उदार, सज्जनों से विभव तथा प्राप्त करने, वचन का पक्का, कुलीन और ज्ञानवान् होता है।

अभ्यास प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर दीजिए–

1. मांगलिक योग होता है।
   (अ) लग्न भाव से (ब) षष्ठ भाव से
   (स) दशम भाव से (द) एकादश भाव से
2. लग्न से मांगलिक योग होता है।
   (अ) चतुर्थ भाव से (ब) पंचम भाव से
   (स) दशम भाव से (द) तृतीय भाव से
3. यत् पिण्डे तत् ब्रह्मण्डे उक्ति ली गई है।
   (अ) महाभारत से (ब) रामायण से
   (स) श्रीमद्भगवद्गीता से (द) सुखसागर से
4. मंगल का विचार होता है।
   (अ) लग्न चन्द्र एवं गुरू (ब) लग्न चन्द्र एवं बुध
   (स) लग्न चन्द्र शुक्र (द) उपर्युक्त कोई नहीं
5. हिमगु प्रसिद्ध नाम है।
   (अ) सूर्य ग्रह (ब) चन्द्र ग्रह
   (स) लग्न चन्द्र शुक्र (द) उपर्युक्त कोई नहीं

3.4 सारांश

इस ईकाई में आपने मांगलिक योग एवं मांगलिक परिहार किस प्रकार से होता है इसके विषय में अध्ययन किया। चन्द्रमा मानव के शरीर में प्रमुख स्थान रखता है। चन्द्रमा से मन का सीधा सम्बन्ध है। ''यत् पिण्डे तत् ब्रह्मण्डे'' अर्थात् इस पिण्ड रूपी शरीर में आपको समस्त ब्रह्मण्ड के दर्शन होंगे। क्योंकि यह शरीर पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश इन पाँच तत्वों से बना है।

यही पाँचों तत्व ब्रह्मण्ड के निर्माण में भी अहम योगदान रखते है। और हमारे शरीर में भी इन पाँचों में से किसी एक की कमी हो जाये तो व्यक्ति अस्वस्थ पड़ जाता है। उसी प्रकार से हमारा मन भी चन्द्रमा की गतिविधियों पर आधारित है। अतः इस ईकाई में आपने चन्द्रमा के विषय में अध्ययन किया होगा।

शुक्र ग्रह भौतिकता का प्रतीक आज समस्त मानव समाज भौतिक सुखों को पाने के लिए छटपटाता है। इन सभी विषयों में व्यक्ति के जीवन क्यों अल्पता या अधिकता प्राप्त

होती है। इन सभी रहस्यों के विषय में आपने इस ईकाई के माध्यम से ज्ञान प्राप्त किया।

3.5 पारिभाषिक शब्दावली

हिमगु – चन्द्रमा।
यत् पिण्डे तत् ब्रह्मण्डे – जो ब्रह्मण्ड में हैं, वहीं शरीर में है।
मृदुभाषी – मीठा बोलने वाला।
भृगुपुत्र – शुक्र।
लब्धप्रतिष्ठ –प्राप्त कर ली है प्रतिर्ष्णा।
सत्कर्मनिरत – शुभकार्य में रत।
शत्रुनाशक –शत्रुओं को मारने वाला।
कृपण –कंजूस।
अविश्वासी – विश्वासी पात्र नहीं है जो।
अनुवक्रा – अत्यधिक टेढ़ा–मेढ़ा।
वक्रा – टेढ़ा–मेढ़ा।
कुटिला – अनुवक्रा से भी अधिक टेढ़ा–मेढ़ा।
मन्दा – धीरे।
मन्दतरा – अत्यधिक धीरे।
ऋज्वी – धीरे और टेढ़ी–मेढ़ी गति।
शीघ्राख्या – अति तीव्र गति।
स्कन्ध – कंधा।
पिंगल –शहद के समान नेत्र वाले।
कामासक्त – विषय वासना में लिप्त।
वर्त्तुलाकार – गोलाकार।

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर–

अतिलघुत्तर माला–

1. शरीर का विचार प्रथम भाव से किया जाता है।
2. चन्द्रमा लग्न में ऐश्वर्यशाली, भाग्यशाली बनाता है।
3. तृतीय भाव में हो तो धैर्यशाली बनाता है।
4. सप्तम भाव में।
5. दीर्घायु, ऐश्वर्यशाली, बलशाली बनाता है।

लघुत्तर प्रश्नोत्तर–

1. लग्नेश तृतीयभाव में हो तो सद्बन्धुयुक्त, मित्रवान्, धार्मिक, दानी, शूर, बलवान बनाता है।

2. सुन्दर पुत्रवान्, त्यागी, धनिक, विनीत एवं दीर्घायु बनाता है।
3. कृपण, धनवान्, शत्रुनाशक, नीरोगी एवं तेजस्वी होता है।
4. कृपण धनसंग्रहकर्त्ता, कटुवक्ता, क्षीण शरीर युक्त होता है।
5. कठोर प्रकृति एवं व्यर्थ में बकवारा करने वाला होता है।

सत्य/असत्य प्रश्नोत्तर–

1. असत्य। 2. सत्य। 3. असत्य। 4. असत्य। 5. सत्य।

रिक्त स्थान–

1. हिमगु। 2. अमावस्या। 3. शीघ्रगति 4. मयासुर। 5. 30 माह।

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर–

1. अ। 2. अ। 3. स। 4. स। 5. ब।

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

1. फलदीपिका, व्याख्याकार– गोपेश कुमार ओझा, (1981) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
2. कर्मठगुरूः, मुकुन्दबल्लभ रचित, (1982) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
3. क्यों (धर्म दिग्दर्शन पूर्वार्थ), स्वामि करपात्री जी महाराज रचित, (2067) माधव विद्या भवन श्रीधाम 150, पुरानी गुप्ता कालोनी दिल्ली–9
4. क्यों (धर्म दिग्दर्शन उत्तरार्ध)।
5. ताजिक–नीलकण्ठी, पं. सीताराम शर्माकृत, (1992) चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी।
6. भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द्र शास्त्री रचित, (2008) भारतीय ज्ञानपीठ 18 इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नई दिल्ली 110003
7. संस्कार प्रकाश, डा. भवानी शंकर त्रिवेदी कृत, (1986) श्री लालबहादुरशास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ शहीद जीतसिंह मार्ग नई दिल्ली 110016
8. ज्योतिष–रत्नाकर, देवकीनन्दन सिंह, (1983) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
9. भारतीय ज्योतिष विज्ञान, डा. सुरकान्त झा कृत, 2006, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी के0 37/118 गोपाल मन्दिर लेन वाराणसी।
10. सन्तान सुख सर्वांग चिन्तन, मृदुलात्रिवेदी कृत, (1990) 24 महानगर विस्तार ई0–40 कारपोरेशन क्वार्टर के सामने पीली कालोनी लखनऊ 226006
11. मुहूर्त चिन्तामणि– गोविन्द दैवज्ञ विरचित (2005) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।
12. वृहद्पाराशर होराशास्त्र पं. पद्मनाभ शर्मा (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।
13. वृहद्जातकम (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।

3.8 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. संस्कार प्रकाश, डा. भवानी शंकर त्रिवेदी कृत, (1986) श्री लालबहादुरशास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ शहीद जीतसिंह मार्ग नई दिल्ली 110016

2. मुहूर्त चिन्तामण– गोविन्द दैवज्ञ विरचित (2005) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।

3. फलदीपिका, व्याख्याकार– गोपेश कुमार ओझा, (1981) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

4. भारतीय ज्योतिष नेमिचन्द शास्त्री रचित, (2008) भारतीय ज्ञानपीठ 18 इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड नई दिल्ली 110003

5. वृहद्पाराशर होराशास्त्र पं. पद्मनाभ शर्मा (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न–

1. द्वादश भावों में लग्नेश की भूमिका पर एक निबन्ध लिखें?
2. मंगलिक योग क्यों वैवाहिक जीवन में घातक है बतायें?
3. लग्न–शुक्र एवं चन्द्रमा से मंगल विचार क्यों आवश्यक हैं?
4. चन्द्रग्रह के द्वारा मानव जीवन किस प्रकार से प्रभावित होता हैं? लघु निबन्ध लिखकर स्पष्ट करें।
5. दाम्पत्य सम्बन्ध में कौन–कौन से ग्रह कारक हैं? स्पष्ट करें?

इकाई – 4 विवाह मेलापक व स्वास्थ्य–धन–सन्तान एवं आयु विचार

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 मुख्य भाग खण्ड एक
    4.3.1 उपखण्ड एक – विवाह की आवश्यकता
    4.3.2 उपखण्ड दो – द्वादश भाव विचार
    4.3.3 उपखण्ड तीन – विलम्ब से सन्तान प्राप्तियोग
    4.3.4 उपखण्ड चार – आयुविचार
4.4 सारांश
4.5 पारिभाषिक शब्दावली
4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.7 सन्दर्भ ग्रंथों की सूची
4.8 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

भगवान के द्वारा इस सृजित सृष्टि में अनन्तानन्त योनियों से इतस्ततः परिभ्रमण करता हुआ जीव इस धराधाम पर धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष (पुरूषार्थ–चतुष्टय) की प्राप्ति के लिए उद्यत रहता है। परन्तु इस चकाचौंधी दिन रूपी काल ने आधिभौतिकता से भरी हुई रजोमय–तमोमय संवलित मानसिक विचार तनिक भी स्थिरता नहीं देते अपितु सदा सर्वदा चंचलायमान रखते है। मन की गति को अबाधित कहा गया है, जिसको बाँधा नहीं जा सकता है। संसार पांचभौतिक कलेवररूप से निर्मित वस्तुओं का पालन–संरक्षण–संवर्धन, संहार सम्भव है, परन्तु जिसको भगवान ने बनाया, उसको हम कुछ नहीं कर सकते। अतः चंचलायमान को स्थित करने के लिए आध्यात्मिक शास्त्र (वेद–पुराण–उपनिषदों में यत्र–तत्र चर्चा मिलती है।

शुक्लयजुर्वेद के 32वें अध्याय में भी ''तन्मेमनः शिवसंकल्पमस्तु'' वह मेरा आर्यमन कल्याणमय बनें। उसी मन व शरीर को सत्वगुण प्रधान बनाने के लिए यत्र–तत्र यम नियम आसन प्राणायाम्–प्रत्याहार–धारण–ध्यान–समाधि–अष्टांग योग का अवलम्बन कर तथा संस्का रसम्पन जीव सुखी रह सकता है। संस्कार का अर्थ है पवित्र करना अर्थात् ''संस्क्रियते इति संस्कारः, सम् उपसर्गपूर्वकडुकृञ् करणे''। धातु से धञ् प्रत्यय करने पर संस्कार शब्द निष्पन्न होता है। मनु जी ने 16 संस्कारों का उल्लेख किया है। उन 16 संस्कारों में अन्यतम संस्कार विवाह संस्कार है। इस संस्कार को पाणिग्रहण संस्कार विवाह संस्कार भी कहते है। मनु जी ने कहा है–

ब्राह्मे दैवस्तथा चार्षः प्राजापत्यस्तथाऽसुरः।
गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधमः।।

आठ प्रकार के विवाह का उल्लेख स्वयं आचार्य मनु ने बतलाया है। जिसमें आदि के 4 विवाह (ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य) उत्तम तथा तदतिरिक्त अधम बतलाए हैं।

4.2 उद्देश्य–

1. प्रथम उद्देश्य है कि इस जीवन को संरक्षित–सवंर्धित–संपोषित करने के लिए आयुर्वेद में वात पित्त कफ तीनों का बहुत महत्व है, ठीक उसी प्रकार इस नश्वर शरीर के लिए भी स्वास्थ्य, धन, स्त्री, सन्तति, व आयु यदि ठीक है तो सब कुछ ठीक ही रहेगा। इसमें अतिशयोक्ति नहीं है।

2. द्वितीय उद्देश्य में पढ़ेंगे, कि कुण्डली में भाव 12 है, हमने उनमें से उन महत्वपूर्ण बिन्दुओं को आपने सामने रखा है, जो भाव भी इन बिन्दुओं के ऊपर ठिके हुए हैं। सर्वप्रथम स्वास्थ्य का संरक्षण करना ही होगा। केवल स्वास्थ्य ठीक मात्र होने से कार्य नहीं चलता, क्योंकि अर्थयुगी समय हैं, सर्वे गुणाः कांचनमाश्रयन्ति। तो फिर क्यों न अर्थ का चिन्तन किया जाए। अतः धन, स्वास्थ्य और आयु का विचार आवश्यक है।

3. तृतीय उद्देश्य में आप अध्ययन करेंगे कि पत्नी कैसी हो, पत्नी सुशीला हो, क्योंकि सर्वगुण सम्पन्न स्त्री ही कुलों को तार सकती है। अतः उसका संरक्षण किस प्रकार करना

चाहिए। तदनु सन्तति का विचार, सन्तति कैसी हो, हम दीर्घजीवी हो, दीर्घायु कैसे बनें, हम स्वस्थ कैसे रहें, हमारा तन एवं मन दोनों पुरूषार्थ चतुष्ट्य की ओर किस प्रकार से अग्रसर हो, यही इस ईकाई का प्रमुख उद्देश्य है।

4.3 विवाह की आवश्यकता

4.3.1

पुरातन काल से ही सर्वविदित है कि इस सृष्टि का सृजन युगल से प्रारम्भ हुआ, उससे पूर्व मानसिक सृष्टि थी, शास्त्र दृष्टि से विचार करें तो स्मृति का एक वचन उपस्थित होता है–

अनाश्रमी न तिष्ठेत क्षणमेकमपि द्विजः।
आश्रमादाश्रमं गच्छेदेष धर्मः सनातनः।।

अर्थात् आश्रम चार है (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ व सन्यास) बिना किसी एक आश्रम को अपनाए द्विज (द्वाज्यां जन्माभ्यां संस्काराभ्यां जायते, उत्पद्यते इति द्विजः) नहीं हो सकता है। यह हमारी परिपाटी रही है कि आश्रम से आश्रम में प्रवेश करना, यही आर्ष परम्परा है, तथा इसका यदि उल्लंघन करते है तो वहीं अनर्थ सिद्ध होता है। हमारे आचार्यों ने हमारी उम्र को लगभग 100 वर्ष की गणना की। उसके 4 भाग किये, एक अवस्था के लिए 25 वर्ष आए, 25–25 वर्ष चार भागों में बाँट दिए। अवस्थानुरूप जिस चीज की आवश्यकता होती है। ठीक वह भी उसी–उसी काल में प्राप्त होता जाएगा।

भौतिक युग से देखें तो विवाह केवल–भोग–विलास–आनन्द आदि के लिए लोग सम्पन्न करते हैं। जब संस्कार का मुहूर्त्त होता है, उस समय में गलियों में बैण्ड बजाते रहते हैं, मुहूर्त्त निकलने के बाद संस्कार सम्पन्न करने पर उनका स्वयं का जीवन में बैण्ड बज जाता है। अतः संस्कार ठीक मुहूर्त्त में ही करना चाहिए, नहीं तो उसका फल नहीं मिल पाता है। यही कारण है आज के लोगों की परेशानी का। ब्राह्मण विवाह से किया हुआ विवाह जीवन में आनन्द, सुख–शान्ति व परमपद को प्राप्त कराने में सहायक होता है। पुराकाल में भी इसी विधि से संस्कार को सम्पन्न कराते थे।

उस विवाह को सम्पन्न करने के लिए हमारा जीवन–सुख–समृद्धि–आनन्द में न्यूवता न आ पाये, इसके लिए विवाह मेलापक की पदे–पदे आवश्यकता पड़ती है। आज हम देखते है कि मनमाने ढंग से किया हुआ मेलापक क्षण भंगुर पतंगो की तरह होता है। जिस प्रकार पतंग का मालूम नहीं होता, उसी प्रकार बिना मुहूर्त्त के किया हुआ कर्म भी निष्फल माना जाता है। चूंकि हमारे यहाँ ऋणत्रय (देवऋण, पितृऋण, ऋषिऋण) से व्यक्ति मुक्त होता है। जब देवार्चन, पितरों को जल व ऋषि अर्पण करता है, तभी मुक्त हो पाता है। पितरों को तारने के लिए गार्हस्थ्य की आवश्यकता होती है। अतः विवाह करना आवश्यक होता है, क्योंकि पुआंम नरकात् त्रायते इति पुत्र। पुत्र वह है जो पुंआम नरक से जो रक्षा करता है वह पुत्र का अधिकार है।

सभी आश्रमों का मूलाधार है गार्हस्थ्य धर्म। बिना इस आश्रम को अपनाए धर्म में बाधक तत्व रहता है। तथा तीनों ऋणों से भी विमुक्त करता है।

भार्या त्रिवर्गकरणं शुभशील युक्ता, शीलं शुभं भवति लग्नवशेन तस्याः।
तस्माद्विवाहसमयः परिचिन्त्यते हि, तभिघ्नतामुपगताः सुतशीलधर्माः।।

अर्थात् सुन्दर स्वभाव (सदा पति के अनुकूल चलने वाली,

''सेवादासी रतौ वेश्या भोजने जननी समा।
विपत्तौ मतदात्री च सा जाया जगद्दुर्लभा।।''

सेवा करने में दासी की तरह, रति (कामुकता) में वेश्या की तरह, भोजन कराने में माता की तरह एवं विपत्ति में सदा सहायक रहने वाली, ऐसी जाया जगत में दुर्लभ होती हैं। ऐसी उपरोक्त गुणसम्पन्न स्त्री धर्म अर्थ–काम इन तीन वर्गों को देती हैं और पति को सहयोग देकर तीन ऋणों से विमुक्त कराती है। स्त्री की सुशीलता विवाहकालिक लग्न के अधीन है, अर्थात् शास्त्रविहित शुभमुहूर्त्त में विवाह होने से स्त्री का स्वभाव और आचरण पवित्र होता है। इसलिए विवाह का विचार किया जाता है, क्योंकि पुत्र, (सुसन्तति) शील (सुन्दर स्वभाव) और धर्म विवाहकालिक लग्न के अधीन होते हैं।

अतः सिद्ध हुआ कि शुभमुहूर्त्त में किया हुआ कार्य अनन्तगुणा फलदायी होता है। इसलिए कोई भी कर्म करें, परन्तु शास्त्रविहित शुभमुहूर्त्त में करें। विवाह को सम्पन्न करने के लिए उससे पूर्व मेलापक विचार किया जाता है, जिससे यह मालूम पड़ता है कि नव युगल को भावी जीवन में ऊँचाई, नीचाई, मान–सम्मान, यश–कीर्ति, नीरोजता–स्वास्थ्य आदि के विषय भी दोनों की कुण्डलियों के माध्यम से कर ली जाती है, नही ंतो परेशानी का सामना करना पड़ सकता है।

विवाह मेलापक में कई चीजें आती है। सर्वप्रथम अष्टकूट विचार, क्योंकि इन विचार से 36 गुणों से कितने गुण प्राप्त हुए हैं, उससे भी अपने जीवन की प्रतिशतता का ज्ञान पूर्व में ही हो जाता है।

–अभ्यास प्रश्न–

लघुत्तरीय प्रश्न–

1. संस्कार शब्द का क्या अर्थ है?
2. 'तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु' का अर्थ स्पष्ट करें।
3. विवाह कितने हैं?
4. विवाह शब्द का क्या अर्थ है?
5. प्रथम भाव से किन–किन विषयों का विचार करना चाहिए?

4.3.2 द्वादश भाव विचार

प्रथम भाव विचार

पहले से ही कहा गया है कि प्रथम भाव से शरीर की आकृति, रूप आदि का विचार किया जाता है। इस भाव में जिस प्रकार की राशि और ग्रह होंगे, जातक का शरीर

भी वैसा ही होगा। शरीर की स्थिति के सम्बन्ध में विचार करने के लिए ग्रह और राशियों के तत्व नीचे लिखे जाते हैं।

सूर्य	शुष्कग्रह	अग्नितत्व	सम (कद)
चन्द्र	जलग्रह	जलतत्व	दीर्घ (कद)
भौम	शुष्कग्रह	अग्नितत्व	ह्रस्व (कद)
बुध	जलग्रह	पृथ्वीतत्व	सम (कद)
गुरू	जलग्रह	तेजतत्व	मध्यम (कद)
शुक्र	जलग्रह	जलतत्व	ह्रस्व (कद)
शनि	शुष्कग्रह	वायुतत्व	दीर्घ (कद)

उक्त रशियों संज्ञायों से शारीरिक स्थिति ज्ञान करने के नियम

1. लग्न जल राशि हो व उसमें जलग्रह की स्थिति हो तो जातक का शरीर मोटा होता है।
2. लग्न और लग्नाधिपति जल राशिगत होने से शरीर खूब स्थूल होगा।
3. यदि लग्न अग्नि राशि हो और अग्नि ग्रह उसमें स्थित हो तो मनुष्य बली होता है, पर शरीर देखने में दुबला मालूम पड़ता है।
4. अग्नि या वायु राशि लग्न हो और लग्नाधिपति पृथ्वी राशिगत हो तो हड्डियाँ साधारणतया पुष्ट और मजबूत होती हैं और शरीर ठोस होता है।
5. यदि अग्नि या वायु राशि लग्न हो, लग्नाधिपति जल राशिगत हो तो शरीर स्थूल होता है।
6. यदि लग्न वायु राशि हो और उसमें वायुग्रह स्थित हो तो जातक दुबला, पर तीक्ष्ण बुद्धिवाला होता है।
7. यदि लग्न पृथ्वी राशि हो और उसमें पृथ्वी ग्रह स्थित हो तो मनुष्य नाटा होता है।
8. पृथ्वी राशि लग्न हो और लग्नाधिपति पृथ्वी राशिगत हो तो शरीर स्थूल और दृढ़ होता है।
9. पृथ्वी राशि लग्न हो और उसका अधिपति जल राशि में हो तो शरीर साधारणतया स्थूल होता है।

लग्न की राशि ह्रस्व, दीर्घ या सम जिस प्रकार की हो, उसी के अनुसार जातक के शरीर की ऊँचाई समझनी चाहिए। शरीर की आकृति निर्णय के लिए निम्न नियम है–

1. लग्न राशि कैसी है? 2. लग्न में ग्रह है तो कैसा है? 3. लग्नेश कैसा ग्रह है? और किस राशि में है? 4. लग्नेश के साथ कैसे ग्रह है? 5. लग्न पर किसकी दृष्टि है? 6. लग्नेश अष्टम या द्वादश भाव में तो नहीं है? 7. गुरू लग्न में है अथवा लग्न को देखता है। किस राशि में बृहस्पति की स्थिति है?

उन सात नियमों द्वारा विचार करने पर ज्ञात हो जायेगा कि जल, पृथ्वी, वायु तत्वों में किसकी विशेषता है। अन्त में अन्तिम निर्णय के लिए पहले वाले नौ नियमों का आश्रय लेकर निश्चय करना चाहिए। लग्नेश और लग्न राशि के स्वरूप के अनुसार जातक के रंग

रूप का निश्चय करना चाहिए। मेष लग्न में लालमिश्रित सफेद, वृष में पीलामिश्रित सफेद, मिथुन में गहरा लालमिश्रित सफेद, कर्क में नीला, सिंह में धूसर, कन्या में घनश्याम रंग, तुला में कृष्णवर्ण लाली लिए, वृश्चिक में बादामी, धन में पीत वर्ण, मकर में चितकबरा, कुम्भ में आकाश सदृश नीला और मीन में गौरववर्ण होता है।

सूर्य से रक्त–श्याम, चन्द्र से गौरवर्ण, मंगल से समवर्ण, बुध से दूर्वादल के समान श्यामल, गुरू से कांचन वर्ण, शुक्र से श्यामल शनि से कृष्ण, राहु से कृष्ण और केतु से धूम वर्ण का जातक को समझना चाहिए। लग्न तथा लग्नेश पर पापग्रह की दृष्टि होने से मनुष्य कुरूप होता है, बुध–शुक्र एक साथ कहीं भी हो तो गौरवर्ण न होते हुए भी सुंदर होता है। शुभग्रह युत या दृष्ट लग्न होने पर जातक सुन्दर होता है। रवि लग्न में हो तो आँखें सुन्दर नहीं होती, चन्द्रमा लग्न में हो तो गौरवर्ण होते हुए भी सुडौल नहीं होता। मंगल लग्न में हो तो शरीर सुन्दर होता है, पर चेहरे पर सुन्दरता में अन्तर डालने वाला कोई निशान होता है। बुध लग्न में हो तो चमकदान साँवला रंग होता है तथा कम या अधिक चेचक में ही वृद्ध बना देता है, बाल जल्द सफेद होते है। 45 वर्ष की उमं में ही दाँत गिर जाते हैं। मेदवृद्धि से पेट बड़ा हो जाता है। शुक्र लग्न में हो तो शरीर सुन्दर और आकर्षक होता है। शनि लग्न में हो तो मनुष्य के रूप में कमी होती है और राहु, केतु के लग्न में रहने से चेहरे पर काले दाग होते हैं।

शरीर रूप का विचार करते समय ग्रहों की दृष्टि का अवश्य आश्रय लेना चाहिए। लग्न में कुरूपता वाले क्रूर ग्रहों के रहने पर भी लग्न स्थान पर शुभ ग्रह की दृष्टि होने से जातक सुन्दर होता है। इसी प्रकार पापग्रहों की दृष्टि होने से जातक की सुन्दरता में कमी आती है।

द्वितीय भाव विचार

भाव का विचार द्वितीयेश, द्वितीय भाव की राशि और इस स्थान पर दृष्टि रखने वाले ग्रहों के सम्बन्ध से करना चाहिए। द्वितीयेश शुभ ग्रहों या द्वितीय भाव में शुभग्रह की राशि और उसमें शुभग्रह बैठा हो और शुभग्रहों की द्वितीय भाव पर दृष्टि हो तो व्यक्ति, धनी होता है। नीचे कुछ धनी योग दिये गये है:

1. भाग्येश और लाभेश का योग
2. भाग्येश और दशमेश का योग
3. भाग्येश और चतुर्थेश का योग
4. भाग्येश और पंचमेश का योग
5. भाग्येश और लग्नेश का योग
6. भाग्येश और धनेश का योग
7. दशमेश और लाभेश का योग
8. दशमेश और चतुर्थेश का योग
9. दशमेश और लग्नेश का योग

10. दशमेश और पंचमेश का योग
11. दशमेश और द्वितीयेश का योग
12. लाभेश और धनेष का योग
13. लाभेश और चतुर्थेश का योग
14. लाभेश और लग्नेश का योग
15. लाभेश और पंचमेश का योग
16. लग्नेश और धनेश का योग
17. लगनेश और चतुर्थेश का योग
18. लग्नेश और पंचमेश का योग
19. धनेश और चतुर्थेश का योग
20. धनेश और पंचमेश का योग
21. चतुर्थेश और पंचमेश का योग

उपर्युक्त 21 योग वाले ग्रह 2।4।5।7 भावों में हों तो पूर्ण फल, 8।12 भावों में आधा फल, छठे भाव में चतुर्थांश फल एवं अन्य स्थानों में निष्फल बताये गये हैं।

जमींदारी योग–चतुर्थेश दशम में और दशमेश चतुर्थ में हो। चतुर्थेश दूसरे या 11वें भाव में हो। चतुर्थ स्थान की राशि चर हो और उसका स्वामी भी चर राशि में हो। पंचमेश, लग्नेश, तृतीयेश, चतुर्थेश, षष्ठेश, सप्तमेश, नवमेश और द्वादशेश के साथ हो तो जमींदारी के साथ–साथ व्यापार भी करता है। चतुर्थेश, दशमेश और चन्द्रमा बलवान् हों और वे ग्रह परस्पर में मित्र हों तो जातक जमींदार होता है।

ससुराल से धन–प्राप्ति के योग–सप्तमेश और द्वितीयेश एक साथ हों और उन पर शुक्र की पूर्ण दृष्टि हो। चतुर्थेश सप्तमस्थ हो और शुक्र चतुर्थस्थ हो तथा इन दोनों में मित्रता हो। सप्तमेश और नवमेश आपस में सम्बद्ध हों तथा शुक्र के साथ हों। बलवान् धनेश, सप्तमेश शुक्र से युत हो।

अकस्मात् धन–प्राप्ति के साधनों का विचार पंचम भाव से किया जाता है। यदि पंचक स्थान में चन्द्रमा बैठा हो और शुक्र की उस पर दृष्टि हो तो लाटरी से धन मिलता है। यदि द्वितीयेश और चतुर्थेश शुभग्रह की राशि में शुभग्रहों सू युत या दृष्ट होकर बैठे हों तो भूमि में गड़ी हुई सम्पत्ति मिलती है। एकादशेश और द्वितीयेश चतुर्थ स्थान में हों और चतुर्थेश शुभग्रह की राशि में शुभग्रह से युत या दृष्ट हो तो जातक को अकस्मात् धन मिलता है। यदि लग्नेश द्वितीय स्थान में और द्वितीयेश ग्यारहवें स्थान में हो तथा एकादशेश लग्न में हो तो इस योग के होने से जात को भूगर्भ से सम्पत्ति मिलती है। लग्नेश शुभग्रह हो और धन स्थान में स्थित हो या धनेश आठवें स्थान में स्थित हो तो गड़ा हुआ धन मिलता है।

सुनफा–अनफा–दुर्धरा–केमद्रुम योग–सूर्य के अतिरिक्त अन्य ग्रह चन्द्रमा से द्वितीय और द्वादश भाव में स्थित हों तो सुनफा, अनफा और दुर्धरा योग होते हैं। ये तीनों योग न हों

तो केमद्रुम योग होता है। आशय यह है कि चन्द्रमा से द्वितीय सूर्य के अतिरिक्त अन्य ग्रहों हो तो सुनफा, द्वादशस्थ ग्रह हों तो अनफा और द्वितीय एवं द्वादशस्थ दोनों ही स्थानों में ग्रह हों तो दुर्धरा योग होता है। यदि चन्द्रमा से द्वितीय और द्वादशस्थ कोई ग्रह न हो तो केमद्रुम योग होता है।

पंचम भाव विचार

1. पंचम स्थान का स्वामी बुध, शुक्र से युत या दृष्ट हो, 2. पंचमेश शुभग्रहों से घिरा हो, 3. बुध उच्च हो, 4. बुध पंचम स्थान में हो, 5. पंचमेश जिस नवांश में हो उसका स्वामी केन्द्रगत हो और शुभग्रहों से दृष्ट हो तो जातक समझदार, बुद्धिमान् और विद्वान् होता है। पंचमेश जिस स्थान में हो उस स्थान के स्वामी पर शुभग्रह की दृष्टि हो अथवा दोनों तरफ शुभग्रह बैठे हों तो जातक सूक्ष्म बुद्धिवाला होता है। यदि लग्नेश नीच या पापयुक्त हो तो जातक की बुद्धि अच्छी नहीं होती है।

पंचम स्थान में शनि और राहु हों और शुभग्रहों की पंचम पर दृष्टि न हो, पंचमेश पर पापग्रहों की दृष्टि हो और बुध द्वादश स्थान में हो तो जातक की स्मरण शक्ति अच्छी नहीं होती है। पंचमेश शुभ युत या दृष्ट हो अथवा पंचम स्थान शुभ युत या दृष्ट हो अथवा दृष्ट हो और बृहस्पति से पंचम स्थान का स्वामी 1 ।4 ।5 ।7 ।9 ।10 स्थानों में हो तो स्मरण–शक्ति तीक्ष्ण होती है। गुरू 1 ।4 ।5 ।6 ।9 ।10 स्थानों में हो, बुध पंचम भाव में हो, पंचमेश बलवान् होकर 1 ।4 ।5 ।7 ।9 ।10 स्थान में हो तो जातक बुद्धिमान् होता है। पंचमेश 1 ।4 ।7 ।10 स्थानों में हो तो जातक की स्मरण शक्ति अत्यन्त प्रबल होती है।

6. दसवें भाव का स्वामी लग्न में या ग्यारहवें भाव का स्वामी ग्यारहवें भाव में हो तो जातक कवि होता है।

7. स्वगृही, बलवान्, मित्रगृही या उच्च राशि का पंचमेश 1 ।4 ।5 ।7 ।9 ।10 स्थानों में स्थित हो या पंचमेश दसवें या ग्यारहवें भाव में स्थित हो तो संस्कृतज्ञ विद्वान् होता है।

8. बुध–शुक्र का योग द्वितीय, तृतीय भाव में हो; बुध 1 ।4 ।5 ।7 ।9 ।10 स्थानामें में हो; कर्क राशि का गुरू धन स्थान में हो; गुरू 1 ।4 ।5 ।7 ।9 ।10 स्थानों में हो; धनेश, सूर्य या मंगल हो और वह गुरू या शुक्र से दृष्ट हो; गुरू स्वराशि के नवांश में हो एवं कारकांश कुण्डली में पाँचवें भाव में बुध या गुरू हो तो जातक फलित ज्योतिष का जानने वाला होता है।

9. कारकांश लग्न से द्वितीय, तृतीय और पंचम भाव में केतु और गुरू स्थित हो; धनस्थान में चन्द्र और मंगल का योग हो तथा बुध की दृष्टि हो; धनेश अपनी उच्च राशि में हो; गुरू लग्न और शनि आठवें भाव में हो; गुरू 1 ।4 ।5 ।7 ।9 ।10 स्थानों में, शुक्र अपनी उच्च राशि और बुध धनेश हो या धन भाव में गया हो; द्वितीय स्थान में शुभग्रह से दृष्ट मंगल हो एवं कारकांश कुण्डली में 4 ।5 स्थानों में बुध या गुरू हो तो जातक गणितज्ञ होता है। जिस व्यक्ति की जन्मकुण्डली में गणितज्ञ योग होता है वह ज्योतिषी, एकाउण्टेण्ट, इंजीनियर, ओवरसीयर, मुनीम, खंजाजी, रेवेन्यू अफसर एवं पैमाइश करने वाला होता है।

10. रवि से पंचम स्थान में मंगल, शुक्र, शनि और राहु इन चारों में से कोई भी दो या तीन

ग्रह स्थित हों, लग्न में चन्द्रमा स्थित हो, पंचम भाव और पंचमेश पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो जातक अंग्रेजी भाषा का जानकार होता है।

11. शनि से गुरू सातवें स्थान में हो या शनि गुरू से नवम, पंचम का सम्बन्ध हो या ये ग्रह मेष, तुला, मिथुन, कुम्भ और सिंह राशि के हों अथवा शनि–गुरू 1–7, 2–8, 3–9, 5–11 में हों तो जातक वकील, बैरिस्टर, प्रोफेसर एवं न्यायाधीश होता है।

12. कारकांश कुण्डली में पाँचवें भाव में पापग्रह से युत चन्द्र, गुरू स्थित हों तो जातक नवीन ग्रन्थ लिखने वाला होता है।

सन्तान विचार–सन्तान का विचार जन्मकुण्डली में पंचम स्थान और जन्मस्थ चन्द्रमा के पंचम स्थान से होता है। बृहस्पति सन्तानकारक ग्रह है।

1. पंचम भाव, पंचमाधिपति और बृहस्पति शुभग्रह द्वारा दृष्ट अथवा युत रहने से सन्तान योग होता है।

2. लग्नेश पाँचवें भाव में हो और बृहस्पति बलवान् हो तो सन्तान योग होता है।

3. बलवान् बृहस्पति लग्नेश द्वारा देखा जाता हो तो प्रबल सन्तान योग होता है।

4. सन्तान स्थान पर मंगल व शुक्र की 1पाद, द्विपाद या त्रिपाद दृष्टि आवश्यक है।

5. केन्द्रत्रिकोणाधिपति शुभग्रह हों और उनमें से पंचम में कोई ग्रह अवश्य हो तथा पंचमेश 6।8।12वें भाव में हो, पापयुक्त, अस्त एवं शत्रु राशिगत न हो तो सन्तान सुख होता है।

6. पंचम स्थान में बुध, कर्क और तुला में से कोई राशि हो; पंचम में शुक्र या चन्द्रमा स्थित हों अथवा इनकी दृष्टि पंचम पर हो तो बहुपुत्र योग होता है।

7. लग्न या चन्द्रमा से पंचम स्थान में शुभग्रह स्थित हो या पंचमेश से दृष्ट हो तो सन्तान योग होता है।

8. लग्नेश, पंचमेश एक साथ हों या परस्पर दृष्ट हों अथवा दोनों स्वगृही, मित्रगृही या उच्च के हों तो सन्तान योग होता है।

9. लग्नेश, पंचमेश शुभग्रह के साथ होकर केन्द्रगत हों और द्वितीयेश बली हो तो सन्तान योग होता है।

10. लग्नेश और नवमेश दोनों सप्तमस्थ हों अथवा द्वितीयेश लग्नस्थ हो तो सन्तान योग होता है।

11. पंचमेश के नवांश का स्वामी शुभग्रह से युत और दृष्ट हो तो सन्तान योग होता है। लग्नेश और पंचमेश 1।4।7।10 स्थानों में शुभग्रह से युत या दृष्ट हों तो सन्तान योग होता है।

12. पंचमेश और गुरू बलवान् हों तथा लग्नेश पंचम भाव में हो; सप्तमेश के नवांश के स्वामी, लग्नेश तथा धनेश और नवमेश इन तीनों से दृष्ट हो तो सन्तान–प्राप्ति का योग होता है।

13. पंचम भाव में 2।4।6।8।10।12 राशियाँ व इन्हीं राशियों के नवांश शनि, बुध, शुक्र या चन्द्रमा से युत हों तो कन्याएँ अधिक तथा पंचम भाव में 1।3।5।7।9।11 राशियाँ तथा इन

राशियों के नवांशाधिपति मंगल, शनि और शुक्र से दृष्ट हों तो पुत्र अधिक होते हैं।

14. पंचमेश धन में अथवा आठवें भाव में गया हो तो कन्याएँ अधिक होती हैं।

15. ग्यारहवें भाव में बुध, शुक्र या चन्द्रमा इन तीनों में से एक भी ग्रह गया हो तो कन्याएँ अधिक होती हैं।

16. बुध, चन्द्र और शुक्र इन तीनों में से एक भी ग्रह पाँचवें भाव में हो तो कन्याएँ अधिक होती हैं।

17. पंचम भाव में मेष, वृष और कर्क राशि में केतु गया हो तो संतान की प्राप्ति होती है।

सन्तान प्रतिबन्धक योग–

1. तृतीयेश और चन्द्रमा 1 ।4 ।6 ।8 ।10 ।12 स्थानों में हो तो सन्तान नहीं होती है।

2. सिंह राशि में गये हुए शनि, मंगल पंचम भाव में स्थित हों और पंचमेश छठे भाव में गया हो तो सन्तान नहीं होती है।

3. बुध और लग्नेश में दोनों लग्न के बिना अन्य केन्द्र स्थानों में हो तो सन्तान का अभाव होता है।

4. 5 ।8 ।12वें भाव में पापग्रह गये हो तो वंशविच्छेदक योग होता है। लग्न में चन्द्रमा, गुरू का योग हो तथा सातवें भाव में शनि या मंगल हो तो सन्तान का अभावसूचक योग होता है।

5. पाँचवें भाव में चन्द्रमा तथा 8 ।12वें भाव में सम्पूर्ण पापग्रह स्थित हों; सातवें भाव में बुध, शुक्र; चतुर्थ में पापग्रह और पंचम भाव में गुरू स्थित हों तो सन्तान–प्रतिबन्धक योग होता है।

6. लग्न में पापग्रह, चतुर्थ में चन्द्रमा, पंचम में लग्नेश स्थित हों और पंचमेश अल्प बली हो तो वंशविच्छेदक योग होता है।

7. सातवें भाव में शुक्र, दसवें भाव में चन्द्रमा और चतुर्थ भाव में तीन–चार पापग्रह स्थित हों तो संतान–प्रतिबन्धक योग होता है।

8. लग्न में मंगल, आठवें में शनि और पाँचवें भाव में सूर्य हो तो वंशनाशक योग होता है।

–अभ्यास प्रश्न–

लघुत्तरीय प्रश्न–

1. किसी एक धनाढ्य योग के विषय में बतायें?
2. जमींदारी योग का वर्णन करें।
3. सुनफा योग किसे कहते हैं?
4. दुरूधरा योग कैसे बनता हैं?
5. सन्तान प्रतिबन्धक योग कैसे बनता हैं?

4.3.3 विलम्ब से सन्तान–प्राप्ति योग

1. लग्नेश, पंचमेश और नवमेश ये तीनों ग्रह शुभग्रह से युत होकर 6 ।8 ।12वें भाव में गये हों तो विलम्ब से सन्तान होती है।
2. दशम भाव मे सभी शुभग्रह और पंचम भाव में सभी पापग्रह हों तो सन्तान–प्रतिबन्धक योग होता है, अतः विलम्ब से सन्तान होती है।
3. पापग्रह अथाव गुरू चतुर्थ या पंचम भाव में गया हो और अष्टम भाव में चन्द्रमा हो तो तीस वर्ष की आयु में सन्तान होती है।
4. पापग्रह की राशि लग्न में पापग्रह युक्त हो, सूर्य निर्बल हो और मंगल सम राशि–2 ।4 ।6 ।8 ।10 ।12 में स्थित हो तो तीस वर्ष की आयु के पश्चात् सन्तान होती है।
5. कर्क राशि में गया हुअ चन्द्रमा पापग्रह से युक्त व दृष्ट हो और सूर्य को शनि देखता हो तो 60वें वर्ष में पुत्र की प्राप्ति होती है। ग्यारहवें भाव में राहु हो तो वृद्धावस्था में पुत्र होता है।
6. पंचम में गुरू हो और पंचमेश शुक्र से युक्त हो तो 32 या 33 वर्ष की अवस्था में पुत्र होता है।
7. पंचमेश व गुरू 1 ।4 ।7 ।10 स्थानों में हो तो 36 वर्ष की अवस्था में सन्तान होती है।
8. नवम भाव में गुरू हो और गुरू से नौवें भाव में शुक्र लग्नेश से युत हो ता 40 वर्ष की अवस्था में पुत्र होता है।
9. राहु, रवि और मंगल ये तीनों पंचम भाव में हो तो सन्तान–प्रतिबन्धक योग होता है।
10. पंचमेश नीच राशि में हो, नवमेश लग्न में और बुध, केतु पंचम भाव में गये हो तो कष्ट से पुत्र की प्राप्ति होती है।

स्त्री की कुण्डली में निम्न योगों के होने से सन्तान का अभाव होता हैः

1. सूर्य लग्न में और शनि सप्तम में हो।
2. सूर्य और शनि सप्तम भाव में, चन्द्रमा दसवें भाव में स्थित हो तथा बृहस्पति से दोनों ग्रह अदृष्ट हो।
3. षष्ठेश, रवि और शनि ये तीनों ग्रह षष्ठ स्थान में हों और चन्द्रमा सप्तम स्थान में हो तथा बुध से अदृष्ट हो।
4. शनि, मंगल छठे और चौथे स्थान में हों।
5. 6 ।8 ।12 भावों के स्वामी पंचम भाव में हों या पंचमेश 3 ।8 ।12 भावों में हो, पंचमेश नीच या अस्तंगत हो तो सन्तान योग का अभाव पुरूष और स्त्री की कुण्डली में समझना चाहिए। 4 ।8 ।10 ।12 इन राशियों का बृहस्पति पंचम भाव में हो तो प्रायः सन्तान का अभाव समझना चाहिए। तृतीयेश 1 ।2 ।3 ।4 भावों में से किसी भाव में हो तथा शुभग्रह से युत और दृष्ट न हो तो सन्तान का अभाव समझना चाहिए। पंचमेश और द्वितीयेश निर्बल हों और पंचम स्थान पर पापग्रह की दृष्टि हो तो सन्तान का अभाव रहता है। लग्नेश, सप्तमेश, पंचमेश

और गुरू निर्बल हो तो सन्तान का अभाव रहता है। पंचम स्थान में पापग्रह हो और पंचमेश नीच हो तथा शुभग्रहों से अदृष्ट हो; बृहस्पति दो पापग्रहो के बीच में हो एवं पंचमेश जिस राशि में हो उससे 6।8।12 भावों में पापग्रहों के रहने से सन्तान का अभाव होता है।

सन्तान–संख्या विचार–

1. पंचम में जितने ग्रह हों और इस स्थान पर जितने ग्रहों की दृष्टि हो उतनी संख्या सन्तान की समझनी चाहिए। पुरूषग्रहों के योग और दृष्टि से पुत्र और स्त्री ग्रहों के योग और दृष्टि से कन्या–संख्या का अनुमान करना चाहिए।

2. तुला तथा वृष राशि का चन्द्रमा 4।9 भावों में गया हो तो एक पुत्र होता है। पंचम में राहु या केतु हो तो एक पुत्र होता है।

3. पंचम में सूर्य शुभग्रह से दृष्ट हो तो तीन पुत्र होते हैं। पंचम में विषम राशि का चन्द्र शुक्र के वर्ग में हो या चन्द्र शुक्र से युत हो तो बहुपुत्र होते हैं।

4. पंचमेश की किरण संख्या के समान सन्तान–संख्या जाननी चाहिए।

5. गुरू, चन्द्र और सूर्य इन तीनों ग्रहों के स्पष्ट राश्यादि जोड़ने पर जितनी राशि संख्या हो उतनी सन्तान जानना। पंचम भाव में या पंचमेश से शुक्र या चन्द्रमा जिस राशि में गये हो उस राशि पर्यन्त की संख्या के बीच में जितनी राशि संख्या हो उतनी सन्तान संख्या जाननी चाहिए। पंचम भाव से या पंचमेश से शुक्र या चन्द्रमा जिस राशि में स्थित हो उस राशि पर्यन्त की संख्या के बीच जितनी राशियाँ हों उतनी ही सन्तान–संख्या समझनी चाहिए।

6. पाँचवें भाव में गुरू हो, रवि स्वक्षेत्री हो, पंचमेश पंचम में हो तो पाँच सन्तानें होती हैं।

7. कुम्भ राशि का शनि पंचम भाव में गया हो तो 5 पुत्र होते हैं। मकर राशि में 6 अंश 40 कला के भीतर का शनि हो तो 3 पुत्र होते हैं। पंचम भाव में मंगल हो तो 3 पुत्र, गुरू हो तो 5 पुत्र, सूर्य, मंगल दोनों हो तो 5 पुत्र, सूर्य, गुरू हो तो 6 सन्तानें; मंगल, गुरू हो तो 8 सन्तानें एवं सूर्य, मंगल, गुरू ये तीनों हो तो 9 सन्तानें होती हैं। पंचम भाव में चन्द्रमा गया हो तो 3 कन्याएँ, शुक्र हो तो पाँच कन्याएँ और शनि गया हो तो 7 कन्याएँ होती हैं।

8. लग्न में राहु, 5वें में गुरू और 9वें में शनि राशि तो 6 पत्र; 9वें में शनि और नवमेश पंचम में हो तो 7 पुत्र; गुरू 4।9वें भाव में और धनेश 10वें भाव में तथा पंचमेश बलवान् हो, उच्च राशि में गया हुआ पंचमेश लग्नेश से युत हो और गुरू शुभग्रह से युत हो तो 10 पुत्र; द्वितीयेश और पंचमेश का योग पंचम भाव में हो तो 6 पुत्र; परमोच्च राशि का गुरू हो, द्वितीयेश राहु से युत हो और नवमेश 9वें भाव में गया हो तो 9 पुत्र एवं 5वें भाव में शनि हो तो दूसरा विवाह करने से सन्तान होती है।

9. कर्क राशि का चन्द्रमा पंचम भाव में गया हो तो अल्पसन्तान योग होता है। पंचमेश नीच का होकर 6।8।12वें भाव में स्थित हो व पापग्रह से युत हो तो काकवंध्या योग होता है; पंचमेश नीच का होकर शनि से युत हो तो भी काकवंध्या योग होता है।

पंचम भाव से विशेष विचार–

पंचम भाव से पुत्रों का, तृतीय भाव से भाइयों का, सप्तम से स्त्री का, चतुर्थ से दासियों का, द्वितीय से नौकरों एवं मित्रों का विचार करना चाहिए। इन सभी का संख्या जानने का विचार यह है कि उस–उस भाव पर शुभग्रहों का जो दृग्बल हो, उससे भाव की गत नवांश संख्या को गुणा करें और उसमें 200 से भाग देने पर लब्धि संख्या जाननी चाहिए।

पंचम, तृतीय, सप्तम, लग्न और चतुर्थ भाव की राशियों को छोड़कर अंशादि की कला बनायें, इसको शुभग्रह के दृष्टिबल से गुणा करें। गुणनफल में 60 का भाग दें। भागफल में पुनः 200 का भाग देने पर क्रमशः पुत्र, भाई, स्त्री, दास आदि की संख्या आती है।

स्पष्ट पंचमेश और लग्नेश का योग करने से जो राशि अंश हो, उनमें अथवा उनके त्रिकोण मे बृहस्पति के रहने से पुत्र–प्राप्ति होती है। स्पष्ट गुरू, चन्द्र और सूर्य के योग करने पर प्राप्त राशि में जितना नवांश गत हो उतने पुत्र होते हैं। अथवा पंचमेश, नवमेश, चतुर्थेश के स्पष्टैक्य राशि के नवांश संख्या तुल्य पुत्र जानने चाहिए। पंचम, नवम और चतुर्थ भाव में प्राप्त ग्रहों के योग राशि में गत नवांश संख्या तुल्य पुत्र जानने चाहिए।

बृहस्पति, चन्द्रमा और लग्न से पंचम स्थान पुत्र का है और उससे नवराशिवाला भी स्थान पुत्रदायक है। इन राशियों के स्वामी की दशा में पुत्र–प्राप्ति का फलादेश कहना चाहिए। पंचमेश और सप्तमेश को युक्त करने पर जो नक्षत्र हो उसकी स्पष्ट दशा तथा युक्त दृष्ट की दशा भुक्ति में पुत्र–प्राप्ति का फल करना चाहिए। पुत्र–भावेश, पुत्र–कारक, पुत्र–भावद्रष्टा और पुत्र–भावस्थ–ये चार ग्रह यदि 6।8।12 में स्थित हों या इन भावों के स्वामी हों और निर्बल हों तो उनकी दशा व अन्तर दशा में पुत्रनाश का फल करना चाहिए। यदि चारों ग्रह पूर्ण बली हों और शुभग्रह हों तो अपनी दशा व अन्तर दशा में पुत्र लाभ एवं पुत्रों की समृद्धि का फल कहना चाहिए।

जन्म काल में पुत्रभावेश, पुत्रकारक, पुत्रभावदर्शी और पुत्रभावस्थ–इन चारों ग्रह के स्पष्ट राश्यादि के योग करने पर जो राशि नवांश हो, उसमें गोचर का गुरू जाने पर पुत्र का जन्म और शनि क जाने पर पुत्र का मरण होता है।

बुद्धि विचार–

पंचमेश 6।8।12 में या अदृश्य राशि मे हो तो जातक का विशेषकर मन्दबुद्धि होता है। यदि पंचमेश बुध और गुरू से युक्त होकर केन्द्र 1।4।7।10 अथवा त्रिकोण–4।9 में स्थित हो तथा बलवान् हो तो जातक कुशाग्र बुद्धि होता है। यदि बृहस्पति अपने नवांश में अथवा शुभ षष्ठी–अंश में या शुभ ग्रह के नवांश में स्थित होकर शुभग्रह द्वारा दृष्ट हो तो जातक त्रिकालज्ञ होता है।

बुद्धि का विचार विशेषतः पंचमेश द्वारा करना चाहिए पर इसके साथ चतुर्थेश का सम्बन्ध भी देखना आवश्यक है। यदि चतुर्थेश पंचम भाव में स्थित हो और पंचमेश चतुर्थ भाव में स्थित हो तो जातक तीव्र बुद्धि वाला होता है। वह अपनी प्रतिभा द्वारा नयी–नयी

बातों का आविष्कार करता है। पंचमेश का षष्ठ भाव या षष्ठेश के साथ युक्त होना प्रतिभा का द्योतक है। जिस जातक का चतुर्थेश शुभग्रह के नवांश में स्थित रहता है वह जातक मेधावी होता है। यदि पंचमेश नीच और अस्तंगत होता है तो जातक क्रूर कार्य करने वाला, अभिमानी और मूर्ख होता है। पंचमेश गुरू के नवांश में स्थित हो तो जातक प्रतिभाशाली और प्रतिष्ठित होता है।

पंचमेश का द्वादश भावों में फल–

पंचमेश लग्न में हो तो जातक प्रसिद्ध पुत्रवाला, शास्त्रज्ञ, संगीत–विशारद, सुकर्मरत, विद्वान्, विचारक और चतुर; द्वितीय भाव में हो तो धनहीन, काव्यकला जानने वाला, कष्ट से भोजन प्राप्त करन ेवाला, आजीविका रहित और चालाक; तृतीय में हो तो मधुर–भाषी, प्रसिद्ध, पुत्रवान्, आश्रयदाता और नीतिज्ञ; चौथे में हो तो गुरूजनभक्त, माता–पिता की सेवा करने वाला, कुटुम्ब का संवर्द्धन करने वाला और सुन्दर सन्तान का पिता; पाँचवें भाव में हो तो श्रेष्ठ, सच्चरित्र पुत्रों का पिता, धनिक, लब्धप्रतिष्ठ, चतुर, विद्वान् और समाजमान्य; छठे भाव में हो तो पुत्रहीन, रोगी, धनहीन, शास्त्रप्रिय और दुखी; सातवें भाव में हो तो सुन्दरी, सुशीला, सन्तानवती, मधुरभाषीणी भार्या का पति; आठवें भाव में हो तो कठोर वचन बोलने वाला, मन्दभागी, स्थान के कष्ट से दुखी और कष्ट भोगने वाला; नौवें भाव में हो तो विद्वान्, संगीतप्रिय, राजमान्य, सुन्दर, रसिक और सुबोध; दसवें भाव में हो तो राजमान्य, सत्कर्मरत, माता के सुख से रहित और ऐश्वर्यवान्; ग्यारहवें भाव में हो तो पुत्रवान्, कलविद्, राजमान्य, सत्कर्मरत, गायक और धन–धान्य से परिपूर्ण एवं बारहवें भाव में हो तो पुत्रवान्, सुखी तथा क्रूर ग्रह पंचमेश हो तो सन्तान–रहित, दुखी और प्रवासी होता है।

–अभ्यास प्रश्न–

सत्य और असत्य प्रश्न–

1. पंचमभाव से विद्या का विचार किया जाता हैं। सत्य/असत्य
2. पुत्र का विचार पंचम भाव से करना चाहिए।
   सत्य/असत्य
3. भारतीय संस्कृति में पाँच आश्रमों का वर्णन मिलता हैं। सत्य/असत्य
4. प्रथम भाव से नौकरी, धन, एवं शत्रु का विचार होता हैं। सत्य/असत्य
5. विवाह चार प्रकार के होते हैं। सत्य/असत्य
6. आठ प्रकार के विवाहों का वर्णन मनुस्मृति में किया गया हैं। सत्य/असत्य

4.3.4 आयुविचार

यह प्रकरण बहुत ही जटिल एवं दुर्गम है। अतः दैवज्ञों ने अनेकानेक प्रकर से आयु–साधन–विधि बतलायी है। सचमुच आयु का निश्चय करना बहुत ही कठिन काम है। महर्षि पाराशर ने 'वृहत् होरा शास्त्र' के द्वितीय खंड में आयु गणना बतलाने के पूर्व लिखा है,––'आयुश्चलोक यात्राश्च, शास्त्रेऽस्मिंस्तत् प्रयोजनम्। निश्चेतुं तत्र शक्नोति वसिष्ठो वा बृहस्पतिः। किं पुनर्मनुजास्तत्र विशेषात्तुकलौयुगे।' भाव यह है कि आयु गणना और जीवन

संग्राम में घटने वाली घटनाओं को बृहस्पति देवाचार्य्य और वसिष्ठ जैसे देवर्षि तक ठीक–ठीक निश्चय नहीं कर सकते तो मनुष्यों की विशेषतः कलियुगी मनुष्यों की तो बात ही क्या।

महर्षि पाराशर के ऐसे कथन के पश्चात् लेखक के इस विषय पर कुछ विचार प्रकट करना मानों छोटे मुँह बड़ी बात होगी। आशा की जाती है कि ऐसे महत्वपूर्ण विषय पर यदि इस समय के विद्वान लोग अपना अपना विचार एवं अनुभव लेख द्वारा प्रगट करें तो इसका समुदाय फल आयु निश्चित करने में अवश्य ही उपयोगी होगा। यथा–

ये धर्मकर्मनिरता द्विजदेवभक्ता, ये पथ्यभोजन रता विजितेन्द्रयाश्च।
ये मानवा दधति सत्कुलशीलसीमास्तेषांपदं कथितमायुरूदारधीमिः।।
ये पापलुब्धाश्चौरा ये देवब्राह्मणनिन्दकाः।
वह्नाशिनश्च ये तेषमकालमरणं नृणाम्।।
धर्मे विकल्पबुद्धिनां दुःखीलानां च विद्विषाम्।
ब्राह्मणानां च देवानां परद्रव्यापहारिणाम्।।
भयंकराणां सर्वेषां मूर्खाणां पिशुनस्य च।
स्वधर्माचारहीनानां पापकर्मोप जीविनाम्।।
शास्त्रेष्वनियतानां च मूढ़ानामुपमृत्यवः।
अन्येषामुत्तमायुः स्यादिति शास्त्रविदो विदुः।।

पुनः भगवान मनु ने भृगु जी के यह प्रश्न पूछने पर द्विजातियों को अपने समय से पहले ही मृत्यु क्यों ग्रस लेती है, निम्नलिखित श्लोक में यों उत्तर दिया।

अनभ्यासेन वेदानामाचारस्य च वर्जनात्।
आलस्यादत्रदोष्तच्च मृत्युर्विप्राजि घांसति।।

इसका अभिप्रायः यह है कि जो मनुष्य ईश्वर–प्रेमी होता है, धार्मिक कार्यों में अर्थात् परोपकार, सत्य, दया, क्षमा, न्याय इत्यादि में निरत रहता है, एवं ईर्ष्या, परधनलिप्सा, इत्यादि कुकर्मों से बचा रहता है, अपनी इन्द्रियों को अपने वश में रखता है, भोजनादि का प्रबन्ध अच्छा रखता है अर्थात् खाद्य अखाद्य वस्तु पर दृष्टि रखते हुए मिताहारी होता है और पौष्टिम पदार्थ का सेवन करता है, अपने देश और कुल की मर्यादा का पालन करता है, स्वधर्मानुयायी होता है तथा रुग्न होने पर उचित औषधि एवं स्वास्थ्यविधि का पालन करता है वह ग्रहद्वारा दी हुई निश्चित आयु का पूर्णरूप से भोग करता है तथा वह मनुष्य भी अपनी पूर्णायु तक सुखापभोग करता है जो वेदाभ्यासी है और आलसी नहीं है।

प्रिय पाठक गण! आप ऐसी न समझ लें कि लेखक का रोदन करने की बीमारी हो गई है। क्या ये बाते सत्य नहीं हैं कि भारतवर्ष के निवासी अपने प्राचीन गौरवान्वित एवं आदर्श जीवन–प्रणाली को छोड़ कर पाश्चात्य सभ्यता और उसके आडम्बर के चकाचौंध में पड़ कर उसके पीछे वगटुट दौड़े जा रहे हैं? लिखने का अभिप्राय यह नहीं है कि पाश्चात्य सभी बातें बुरी हैं। धारणा यह है कि उनके गुणों का ग्रहण करना और उनकी कुरीतियों का

विषवत् त्याग करना भारतवासियों का परम धर्म है।

यद्यपि इस विषय पर निबन्ध नहीं रहा जाता कि सत्ययुगादि युगों की बातों को यदि एक ओर अलग छोड़ दिया जाय और कलियुग के आरम्भ पर ही यदि दृष्टिपात की जाय तो विचारनेत्रों की भित्ति पर अनेकनेक त्यागी परोपकारी, धैर्यवान्, एवं कला कौशल के ज्ञाताओं के अनेकानेक चित्र खिंच जायेंगे।

मेगास्थनीच में जो इस्वी सन् के 300 वर्ष पूर्व अर्थात् कलियुग के 2800 वर्ष बीतने पर भारतवर्ष में आया था तदानीन्तनीयभारत की बहुत प्रशंसा की थी। उसने लिखा है कि उस समय तक भारतवासियों को परधन–लोलुपता ने ग्रसित नहीं किया था। परस्त्रीगामी तो पाये ही नहीं जाते थे। भारतवासियों में परस्पर प्रेम का प्रवाह भी बहुत देखा जाता था। अर्थात् ''मातृवत परदारेषु, परद्रव्येषु लोष्ट्रवत्'' की लोकोक्ति (कहावत) बहुत उत्तम रीति से चरितार्थ हो रही थी।

यदि वर्तमान भारतवासियों का चरित्र लिखने का साहस किया जाय तो दुश्चरित्रता की एक घृणित गाथा ही बन जायेगी। यदि यह बात ठीक है तो क्या भारतवासियों की आयु निश्चय करना कठिन न होगा? अल्पायु होना जिसक प्रतिपादन मनुष्य गणना (अर्थात् सेनसस रिपोर्ट) भी करती हैं, मानों भारतवासियों की पैतृक सम्पत्ति हो गई है। लेखक की बुद्धि अनुसार आयु ठीक करने मे मुख्य बाधा ऊपर लिखी हुई बातें ही हैं।

आयु–विचार के सम्बन्ध में नाना प्रकार के मत प्रचलित हैं। प्राचीन ग्रंथों के अनुसार बत्तीस प्रकार से आयु विचार किया जा सकता है। इनमें से (1) अंशायु (2) पिण्डायु (3) नैसर्गआयु (4) जीवशर्मायु और (5) अष्टवर्गीय प्राचीन एवं प्रचलित और प्रधान रीतियाँ हैं। परन्तु इन सब रीतियों का विवरण इस छोटे से ग्रंथ में केवल कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव है। विश्वास है कि इन पाँच में से प्रथम चार रीतियों से आयु–गणना ठीक और उपयोगी तभी होगी जब हमारे भारतवर्ष के गणितज्ञ, राजा, महाराजा, सेठ, साहुकार एवं अन्यान्य धनी लोगों की सहानुभूति से ज्योतिष के गणित विभाग का पुनरुस्थान होगा। अयनांश का मतान्तर इतना बड़ा झंझट है कि ग्रह–स्फुट की अनुयायिक शुद्धि असम्भव सी प्रतीत होती है जो आयु निश्चय करने में लेखक के मतानुसार दूसरी बाधा है।

इन सब बातों पर ध्यान देते हुए इस 'तरंग' में योगानुसार आयुप्रमाण; महर्षि जैमिनि और पराशन मतानुसार आयु–निर्णय; ग्रहस्थित द्वारा अल्प, मध्य और दीर्घायु का निर्णय; मारकेश इत्यादि का विचार; अरिष्टकारी दशान्तर दशाओं का वर्णन; गोचर द्वारा अरिष्ट–समय का ज्ञान, अरिष्ट–मास दिन एवं लग्न एवं मृत्यु–स्थान जानने की विधि लिखी गयी है। तत्पश्चात्, रोग का मृत्यु से घनिष्ठ सम्बन्ध रहने के कारण, रोग के विषय में पहली बात यह दिखलायी गयी है कि ग्रह, राशि एवं भावादि द्वारा मनुष्य के अंग प्रत्यंग में भिन्न–भिन्न धातु–विकारों से रोग का होना सम्भव होता है। तदनन्तर मृत्युदायी रोगों का योग, अष्टम–स्थानस्थिति ग्रह द्वारा, अष्टम स्थान पर दृष्टि डालने वाले ग्रह द्वारा, लग्न–नवांश द्वारा एवं मान्दि अनुसार मृत्युकारी रोगों का योग लिखा गया है और अन्त में

अष्टवर्गी आयु का उल्लेख किया गया है।

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्, अभयं नक्तमभयं दिवानः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु। (अर्थववेद)

अभ्यास प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. प्रथम भाव से विचार किया जाता है।
   (अ) स्वास्थ्य (ब) धन
   (स) नौकरी (द) पत्नी
2. चतुर्थ से विचारणीय विषय है।
   (अ) जमीन, मकान (ब) पत्नी, पति
   (स) मृत्यु, आयु (द) व्यापार, रोजगार
3. दशमभाव से विचार करते हैं।
   (अ) माता–पिता (ब) बड़े भ्राता–पिता
   (स) पत्नी–पति (द) पिता–आकाश
4. कर्म का विचार किया जाता है।
   (अ) दशम–चतुर्थ (ब) चतुर्थ–अष्टम
   (स) केवल दशम (द) कोई नहीं।
5. आयु का विचार करते हैं।
   (अ) अष्टम–लग्न (ब) द्वितीय–द्वादश
   (स) प्रथम–सप्तम (द) केवल अष्टम

ग्रह–स्थिति के अनुसार अल्पायु योग।

बत्तीस वर्ष तक बहुमत से अल्पायु योग का प्रमाण कहा गया है।

(1) यदि शनि तुला के नवांश में हो और उस पर केवल बृहस्पति की दृष्टि हो तो ऐसा बालक पिता के अनुग्रह से वंचित होकर तेरह वर्ष तक जीता है।

(2) यदि शनि वक्री हो और राहु के साथ होकर द्वादश स्थान में हो तो जातक की आयु तेरह वर्ष की होती है।

(3) यदि शनि कन्या के नवांश में हो और बुध से दृष्ट हो तो यह चिड़चिड़ा स्वभाव का जातक 14 वर्ष त जीता है।

(4) यदि राहु, सूर्य, मंगल, बुध और शनि अष्टम स्थान में हो तो जातक की आयु 14 वर्ष की होती है।

(5) यदि शनि सिंह के नवांश में हो और राहु से दृष्ट हो तो ऐसे जातक को शस्त्रपीड़ा होती है और 15 वर्ष तक जीता है।

(6) यदि चं. चतुर्थस्थसूर्य षष्ठगत और केन्द्र ग्रह–शून्य हो तो जातक की आयु 15 वर्ष की होती है।

(7) यदि शनि कर्क के नवांश में हो और केतु से दृष्ट हो तो ऐसा जातक सर्प के काटने से 16वें वर्ष में मरता है।

(8) यदि षष्ठ और अष्टम स्थान में पापग्रह हों तथा शुभग्रह की दृष्टि से वंचित हों और लग्नेश तृतीय, षष्ठनवम अथवा द्वादश स्थान में हो तो भी 16 वर्ष की आयु होती है।

(9) यदि लग्न सिंह, वृश्चिक अथवा कुम्भ राशि का हो और उसमें पापदृष्ट राहु बैठा हो तथा बृहस्पति से दृष्ट वा युक्त न हो।

(10) यदि शनि मिथुन के नवांश में हो और उस पर लग्नेश की दृष्टि हो तो ऐसा जातक शूर और महाभोगी होता हुआ 17वें वर्ष की आयु में मरता है।

(11) यदि सूर्य वृश्चिक अथवा कुम्भ राशि में, शनि मेष राशि में और बृहस्पति मकर राशि में हो तो जातक विशूचिका (हैजा) की बीमारी से 17वें वर्ष में मरता है। ऊपरी योगों में 17 वर्ष की आयु होती है।

(12) यदि लग्नेश अष्टम में और अष्टमेश लग्न में हों तथा वे शुभग्रह न हों और मतान्तर से यदि लग्नेश अष्टम में और अष्टमेश लग्नेश की राशि में हो और दोनों पापग्रह हों तो 18 वर्ष की आयु होती है। पुनः मतान्तर से ऐसा भी पाया जाता है कि लग्नेश अष्टमस्थ और अष्टमेश लग्नस्थ हो और उन सबों के साथ शुभग्रह न हों अथवा लग्नेश और अष्टमेश द्वादशस्थ वा षष्ठस्थ हों और उसके साथ बृहस्पति न हो तो भी 18 वर्ष की आयु होती है।

(13) यदि लग्नेश और अष्टमेश साथ होकर छठे अथवा द्वादश स्थान में हों और उसके साथ वृ. न हो तो जातक की आयु 18 वर्ष की होती है।

(14) यदि लग्नेश और अष्टमेश शुभग्रह न हों और छठे अथवा द्वादश स्थान में वृ. न हो तो 18 वर्ष की आयु होती है।

(15) यदि लग्नेश अष्टम में और अष्टमेश लग्न में हो और उनके साथ कोई अन्य ग्रह न हो, अथवा लग्नेश और षष्ठेश षष्ठ वा द्वादश स्थान में हों पर वृ. से युक्त न हों तो 18 वर्ष की आयु होती है।

(16) यदि षष्ठस्थान में सूर्य और शनि एवं चन्द्रमा एकत्रित हों तो 19 वर्ष की आयु होती है। पाठान्तर से सूर्य का अष्टम स्थान में और चं. और श. का किसी स्थान में एकत्रित रहना पाया जाता है।

(17) यदि शु. बु. और श. अस्तगत हों और नीच मंगल उनके साथ हो और सूर्य मकर का हो तो जातक की आयु 19 वर्ष की होती है।

(18) यदि शनि, बृहस्पति के नवांश में हो और उस पर राहु की दृष्टि हो और लग्नेश पर शुभ ग्रह की दृष्टि न हो तो बालक शीघ्र ही मर जाता है। पर यदि लग्नेश उच्च हो तो 19 वर्ष की आयु होती है।

(19) चन्द्रमा षष्ठ, (अष्टम) वा द्वादश स्थान में हो और चन्द्रमा की तथा शुभग्रहों की दृष्टि केन्द्रगत पापग्रहों पर न पड़ती हो तो 20 वर्ष की आयु होती है।

(20) यदि शुभग्रह के साथ होकर लग्नेश लग्नस्थ हो और उस पर किसी ग्रह की दृष्टि

न पड़ती हो तथा अष्टमेश अष्टमगत, हो तो 20 वर्ष की आयु होती है।

(21) यदि क्षीण चन्द्रमा क्रूरग्रह के साथ अष्टम स्थान में बैठा हो और अष्टमेश केन्द्र में हो तथा लग्नेश निर्बल हो तो 20 वर्ष की आयु होती है।

(22) यदि शुभग्रह आपोक्लिम में हों और शनि चन्द्रमा के साथ षष्ठ अथवा अष्टम स्थान में हो (मतान्तर से शनि तथा राहु अष्टमस्थान में हो) तो 20 वर्ष की आयु होती है।

(23) यदि रवि और शनि केन्द्र में और मंगल लग्न में हो तो 20 वर्ष की आयु होती है।

(24) यदि लग्नेश अथवा चन्द्रलग्न पर शुभग्रह की दृष्टि न हो और लग्नेश के साथ सूर्य हो और केन्द्र में पाप हो तो 20 वर्ष की आयु होती है।

(25) यदि लग्न चर राशिगत हो और उसमें सूर्य और मंगल बैठे हों, बृहस्पति दशमस्थ हो तथा चन्द्रमा त्रिकोणस्थ हो तो 20 वर्ष की आयु होती है।

(26) यदि लग्नेश शुभग्रह के साथ लग्न में हो तथा किसी अन्य ग्रह से दृष्ट न हो एवं अष्टमेश अष्टम स्थान में हो तो 20 वर्ष की आयु होती है।

(27) यदि सभी शुभग्रह पापग्रह की राशि और नवांश में हों तो 20 वर्ष की आयु होती है।

(28) यदि क्षीण चन्द्रमा और पापग्रह अष्टम स्थान में हों, अष्टमेश केन्द्र में हो तथा लग्नेश बलहीन हो तो 20 वर्ष की आयु होती है।

(29) यदि दो पापग्रह द्वितीय, अष्टम अथवा द्वादश स्थान में हों पर ये दोनों राहु और चन्द्रमा न हो तो 20 वर्ष की आयु होती है।

(30) यदि केन्द्र में सू. और श. हों और लग्न में मं. हो तो इन योगों में 20 वर्ष की आयु होती है।

(31) यदि बृ. और सू. लग्न में वृश्चिक राशि का हो और अष्टमेश केन्द्रगत हो तो 22 वर्ष की आयु होती है।

(32) यदि चं. राहु के साथ सप्तम अथवा अष्टम स्थान में हो और बृहस्पति लग्नगत हो तो 22 वर्ष की आयु होती है।

(33) यदि लग्नेश और अष्टमेश से चं. घिरा हो अर्थात् चं. की एक ओर लग्नेश और दूसरी ओर अष्टमेश हो तथा बृहस्पति द्वादशस्थ हो तो 22 वर्ष की आयु होती है।

(34) यदि पापग्रह के साथ बृहस्पति लग्न में हो और चन्द्रमा से दृष्ट हो तथा अष्टम स्थान ग्रहशून्य हो तो 22 वर्ष की आयु होती है।

(35) यदि जन्मलग्न में बृहस्पति के साथ पापग्रह हो और बृहस्पति पर चं. की दृष्टि हो तथा अष्टम स्थान में कोई भी ग्रह हो तो ऐसे योग पर 22 वर्ष की आयु होती है।

(36) यदि अष्टमेश, द्वितीयेश और नवमेश एक साथ हों, लग्नेश अष्टमगत हो और उसके (लग्नेश के) साथ कोई पापग्रह हो अथवा लग्नेश पर पापग्रह की दृष्टि हो और शुभग्रह की दृष्टि न पड़ती हो तो 24 वर्ष की आयु होती है।

(37) यदि अष्टमेश नवमस्थान में और लग्नेश पापग्रह के साथ अष्टम स्थान में हो तो 24 वर्ष की आयु होती है।

(38) यदि शनि द्विस्वभाव राशिगत होकर लग्न में हो और द्वादशेश तथा अष्टमेश निर्बल हो तो 25 वर्ष की आयु होती है।

(39) यदि शनि शत्रुगृही होकर लग्न में हो और शुभग्रह आपोक्लिम में हो तो 26 वा 27 वर्ष की आयु होती है।

(40) यदि लग्नेश और अष्टमेश अष्टमगत हों और उनके साथ पापग्रह भी हों पर शुभग्रह न हों (मतान्तर से शुभग्रह का न रहना नहीं पाया जाता है) तो 27 वर्ष की आयु होती है।

(41) यदि बृहस्पति स्वगृही हो और अपने द्रेष्काण में हो तो भी 27 वर्ष की आयु होती है। यह जातकाभरण का मतह\ पर सिकी का मत है कि बृ. के स्वद्रेष्काणस्थ होने से ही योग लागू होता है।

(42) यदि अष्टमेश एवं चन्द्र लग्नेश (राशीश) से चं. घिरा हुआ हो और बृ. द्वादशस्थ हो तो 27 वा 30 वर्ष की आयु होती है।

(43) यदि पापग्रह लग्न, द्वितीय एवं अष्टम में हो और शुभग्रह पणफर और आपो क्लिम में हो तो 28 वर्ष की आयु होती है।

(44) यदि अष्टमेश पापग्रह हो और वह बृ. एवं किसी पापग्रह से दृष्ट हो और राशीश, लग्न से अष्टमगत हो (मतान्तर से लग्नेश का अष्टमगत होना पाया जाता है) तो 28 वर्ष की आयु होती है।

(45) यदि अष्टमेश, लग्न वा चं. से द्वादशस्थ हो वा केन्द्र में हो तो 28 वर्ष की आयु होती है। कहीं ऐसा भी लेख मिलता है कि लग्न अथवा चन्द्र–लग्न से अष्टमेश के द्वादश भाव में रहने से योग लागू होता है।

(46) यदि लग्न में निर्बल सू., चं. और राहु बैठा हो तो इन योगों में 28 वर्ष की आयु होती है।

(47)यदि सूर्य, चन्द्रमा एवं शनि अष्टम स्थान में हो तो 29 वर्ष की आयु होती है।

(48) यदि अष्टमेश केन्द्र में हो और लग्नेश बलहीन हो तो 30 वा 32 वर्ष की आयु होती है।

(49) यदि लग्नेश और अष्टमेश में से कोई एक अष्टमस्थ हो और दूसरा निर्बल हो तो 30 वा 32 वर्ष की आयु होती है।

(50) यदि श. अष्टमभाव की नवांश राशि में बैठा हो और कोई बली पापग्रह लग्न में हो और शुभग्रह पणफर और आपोक्लिम में हो तो 30 वा 32 वर्ष की आयु होती है।

(51) यदि पापग्रह के साथ होकर क्षीण वा निर्बल चं. द्वादश स्थान में हो और लग्नेश पापग्रह से दृष्ट हो तो 30 वा 32 वर्ष की आयु होती है।

(52) यदि पंचमस्थ चं. निर्बल शुभग्रह से दृष्ट और अष्टमेश केन्द्र में हो तो 30 वर्ष की आयु होती है।

(53) यदि चं. एवं लग्नेश आपोक्लिम में हो और दुर्बल अष्टमेश पापदृष्ट हो तो 30 वा 32 वर्ष की आयु होती है।

(54) यदि बु. अत्यन्त बली होकर केन्द्रवर्ती हो और अष्टमस्थान ग्रह–शून्य हो तो 30 वा 32 वर्ष की आयु होती हैं।

(55) यदि बलहीन लग्नेश एवं अष्टमेश केन्द्रवर्ती हो तो 30 वा 32 वर्ष की आयु होती हैं।

(56) यदि केन्द्र में कोई शुभग्रह न हो और अष्टमस्थान में शुभग्रह हो तो 30 वा 32 वर्ष की आयु होती हैं।

(57) यदि द्वितीय एवं द्वादशस्थानों में पापग्रह बैठे हों अर्थात् लग्न पाप ग्रहों से घिरा हुआ हो और सप्तम स्थान में राहु और बृ. हो तो 30 वा 32 वर्ष की आयु होती हैं।

(58) यदि बली शुभग्रह केन्द्र में हो और अष्टमस्थान में कोई शुभग्रह न हो परन्तु अष्टम स्थान में कोई ग्रह हो तो इन योगों में 30 वर्ष की आयु होती है।

(59) क्रूर ग्रहों से घिरा हुआ यदि सू. लग्नस्थ हो तो 31 वर्ष की आयु होती है।

32 वर्ष से लेकर 70 वर्ष तक मध्यायु कहलाता है।

(60) यदि लग्नेश और अष्मेश केन्द्रवर्ती हो पर किसी केन्द्र में कोई शुभग्रह न हो और अष्टमस्थान में कोई भी ग्रह हो तो 32 वर्ष की आयु होती है।

(61) यदि निर्बल लग्नेश और अष्टमेश केन्द्रवर्ती हो तो 32 वर्ष की आयु होती है।

(62) यदि सूर्य एवं चन्द्रमा साथ होकर केन्द्र में हों और अष्टमेश भी किसी केन्द्र में हो पुनः अष्टमस्थान में पापग्रह और लग्न में कोई ग्रह न हो तो 32 वर्ष की आयु होती है।

(63) यदि अष्टमेश लग्न में और लग्नेश निर्बल हो तो 32 वर्ष की आयु होती है।

(64) यदि चं. और लग्नेश पापग्रह से दृष्ट आपोक्लिम (3,6,9,12) में हो और यदि ये दोनों ग्रह निर्बल हो तो 32 वर्ष की आयु होती है।

(65) यदि अष्टमेश केन्द्रवर्ती हो अथवा अष्टम स्थान में पापग्रह हो और चं. क्षीण एवं लग्न भी दुर्बल हो और लग्न में भी पापग्रह हो तो 32 वर्ष की आयु होती है।

(66) यदि लग्न मेष अथवा वृश्चिक हो और उसमें चं. बैठा हो परन्तु केन्द्र ग्रह–रहित हो तो 33 वर्ष की आयु होती है।

(67) यदि पाप अष्टमेश, चं. के साथ केन्द्र वा त्रिकोण में हो और वह दशमस्थ–पापग्रह से दृष्ट हो तो 33 वर्ष की आयु होती है।

(68) यदि लग्न में श. और चं. हों एवं मं. कुम्भ राशिगत हो तो 32 वर्ष की आयु होती है।

(69) यदि बृ. और शु. केन्द्रवर्ती हों और लग्नेश किसी पापग्रह के साथ आपोक्लिम में हो पर जन्म संध्या समय का हो तो 36 वर्ष की आयु होती है। संध्या का जन्म मतान्तर से पाया जाता है। (संध्या, सूर्यास्त और सूर्योदय के 48 मिनट पूर्व और पर तक को कहते हैं।)

(70) यदि निर्बल एवं शत्रुगृही सूर्य लग्नस्थ हो और द्वितीय एवं द्वादश में पापग्रह हों और सूर्य शुभदृष्ट न हो तो 36 वर्ष की आयु होती है।

(71) यदि चं., मं. एवं मान्दि लग्न में हों और केन्द्र एवं अष्टम में शुभग्रह न हों तो इन योगों में 36 वर्ष की आयु होती है।

(72) यदि र. लग्न में पापग्रहों से घिरा हो और बृ. मिथुन राशि गत अष्टमस्थान में हो तो

37 वर्ष की आयु होती है। (वृश्चिक लग्न होने से लागू होगा)।

(73) यदि अष्टमेश, स्थिर राशि गत होता हुआ केन्द्रवर्ती हो और अष्टम स्थान पापदृष्ट हो तो 40 वर्ष की आयु होती है।

(74) यदि पूर्ण बली बु. केन्द्रवर्ती हो और अष्टमस्थान ग्रह–शून्य हो परन्तु शुभ दृष्ट हो तो 40 वर्ष की आयु होती है।

(75) यदि अष्टमस्थान का स्वामी लग्नवर्ती हो और अष्टम स्थान में कोई शुभग्रह न हो तो 40 वर्ष की आयु होती है।

(76) यदि स्वक्षेत्री शुभग्रह की दृष्टिम अष्टम स्थान पर पड़ती हो तो 10 वर्ष किम्बा 40 वर्ष की आयु होती है।

(77) शुभग्रह केन्द्र में हो और अष्टम स्थान में कोई शुभग्रह न हो एवं केन्द्रस्थ–ग्रह–शुभदृष्ट हो तो इन योगों में 40 वर्ष की आयु होती है।

(78) यदि अष्टमेश लग्न में मं. के साथ हो अथवा अष्टमेश स्थित राशिगत हो कर अष्टम अथवा द्वादश स्थान में हो और अष्टमेश लग्न में हो तो इन दो भिन्न योगों में 42 वर्ष की आयु होती है।

(79) यदि लग्न द्विस्वभाव राशि हो और बृ. केन्द्र और श. दशम में हो तो 44 वर्ष की आयु होती है।

(80) यदि श. और सू. मकर राशिगत होकर तृतीय वा षष्ठ स्थान में हो और अष्टमेश केन्द्र में हो तो 44 वर्ष की आयु होती है।

(81) यदि जन्म राशि अष्टमस्थान में किसी पापग्रह के साथ हो और लग्नेश किसी पापग्रह के साथ षष्ठ स्थान में हो और ये दोनों ग्रह सबल हो पर शुभग्रह से दृष्ट न हो तो 45 वर्ष की आयु होती है।

(82) यदि लग्नेश षष्ठ वा अष्टम में पापग्रह के साथ हो और शुभग्रह से दृष्ट न हो तो इन दो योग में 45 वर्ष की आयु होती है। (इन दो योगों की ग्रह–स्थिति ध्यान देने योग्य है।)

(83) यदि सभी पापग्रह केन्द्र में हों और चं. किसी पापग्रह के साथ हो तो 87 वर्ष की आयु होती है।

(84) यदि मकर लग्न हो और उसमें मं. हो और दशमस्थान में श. और बृ. तुला में हो तो जातक धनी एवं विद्वान् होता हुआ 48वें वर्ष में मृत्यु–ग्रस्त होता है।

(85) यदि जन्म लग्न मेष हो और शुभ दृष्ट पूर्ण चं. उसमें बैठा हो तो ऐसे योग में जातक धनाढय किम्बा राजा होता है। परन्तु यदि चं. पाप दृष्ट हो तो 48 वर्ष की आयु होती है।

(86) बुद्ध, चतुर्थ वा दशम स्थान में हो और चं., लग्न, अष्टम वा द्वादश में हो और बृ. और शु. एकत्रित हो (किसी स्थान में) तो 50 वर्ष की आयु होती हैं।

(87) शुभग्रह दशम वा चतुर्थ स्थान में मं., चं. द्वादश वा अष्टम स्थान में और लग्न में शुक्र एवं बृ. हो तो 50 वर्ष की आयु होती हैं।

(88) लग्नेश श. के नवांश में बैठा हो तो केवल इतना ही से इस योग में 50 वर्ष की

आयु होती है।

(89) यदि लग्न, द्वितीय एवं चतुर्थ, तीनों ही में शुभग्रह हों तो 51 वर्ष की आयु होती है।

(90) यदि श. अन्य ग्रहों के साथ लग्न में बैठा हो और चं. द्वादश अथवा अष्टम स्थान में हो तो जातक धर्मज्ञ एवं वेदान्ती होता है और उसकी आयु 52 वर्ष की होती है।

(91) यदि श. लग्न में, चं. अष्टम वा द्वादश में हो और अन्य ग्रह एकादश में हों तो 52 वर्ष की आयु होती है।

(92) यदि जन्म लग्न मीन हो एवं शु. और बृ. उच्च हो तो 55 वर्ष की आयु होती हैं।

(93) यदि कर्क लग्न में सू., चं. दशम स्थान में पाप युक्त और बृ. केन्द्र में हो तो 55 वर्ष की आयु होती हैं। (चं. के साथ पापग्रह का रहना मतान्तर से आवश्यक नहीं है।)

(94) द्वादशेश वा अष्टमेश यदि बलहीन हो तो ऐसे योगों में 55 वर्ष की आयु होती है।

(95) यदि धन लग्न हो और उसमें बृ. बैठा हो एवं राहु और मं. अष्टमस्थ हों तो 57 वर्ष की आयु होती है।

(96) यदि अष्टमेश सप्तम स्थान में हो और चं. पापग्रह के साथ हो तो 58 वर्ष की आयु होती हैं।

(97) यदि लग्नेश श. के नवांश में और लग्नेश के साथ चं. षष्ठ, अष्टम वा द्वादश भागवत हो तो इन योगों में 58 वर्ष की आयु होती है।

(98) यदि तृतीयेश बृ. के साथ लग्न में हो और किसी एक केन्द्र में पापग्रह कुम्भ राशिगत हो तो जातक ब्रह्मज्ञानी अथवा योगी होता है और सानन्द 60 वर्ष तक जीता है।

(99) यदि अष्टम स्थान में कोई पापग्रह हो, अष्टमेश लग्न में हो और लग्नेश द्वादश में हो तो जातक नीच प्रकृति का अपने परिवार में अपयश का भाजन होता हुआ 60 वर्ष तक जीता है।

(100) यदि लग्न में श. चतुर्थ में चं., सप्तम में मं. और दशम में र, हो एवं शु., बृ., अथवा इन केन्द्रों में से किसी में हो तो जातक राजा वा राजा तुल्य होता है।

(101) यदि र. अपने शत्रु के साथ एवं मंगल के साथ होकर लग्न में हो तो 60 वर्ष का आयु होती हैं।

(102) यदि शु. लग्न में, बु. और श. केन्द्र में और शेषग्रह तृतीय एवं एकादश में हो तो जातक धनी होता है और जातक की 60 वर्ष की आयु होती हैं।

(103) यदि चतुर्थ स्थान में कोई ग्रह हो और बृ. एवं शुक्र किसी केन्द्र में हों तो जातक उत्तम प्रकृति का मनुष्य होता है तो 60 वर्ष की आयु होती हैं।

(104) यदि लग्नेश से 6,8,12 में पापग्रह हो और अष्टमस्थान में कोई शुभग्रह न हो तो 60 वर्ष की आयु होती हैं।

(105) यदि बलवान् लग्नेश केन्द्रवर्ती हो और शुभ दृष्ट हो। अथवा बु.,बृ.,शु. स्वगृही हो, चं. उच्च हो और बली लग्नेश लग्नगत हो तो 60 वर्ष की आयु होती हैं।

(106) यदि चन्द्र स्वगृही हो अथवा लग्नवर्ती हो और सातवें स्थान में शुभग्रह हो तो 60 वर्ष की आयु होती हैं।

(107) यदि वृष राशि का चं. लग्न में हो और अन्य शुभग्रह स्वगृही हो तो 60 वर्ष की आयु होती हैं।

(108) यदि लग्नेश पापग्रह के साथ 6,8,12 में हो और अष्टम स्थान में कोई शुभग्रह न हो तो 60 वर्ष की आयु होती हैं।

(109) यदि चन्द्र राशि चं. के साथ अष्टमस्थान में लग्नेश के साथ हो और बृ. केन्द्र में न हो तो 60 वर्ष की आयु होती हैं।

(110) यदि लग्न कुम्भ हो, बृ. अष्टमस्थ और पापग्रह केन्द्र में हो तो 60 वर्ष की आयु होती हैं।

73 वर्ष से पूर्णायु होती है।

(111) यदि लग्नेश पापदृष्ट हो और चन्द्रमा शुभग्रह के नवांश में, किसी स्थान में बैठा हो एवं शुभग्रह बलवान हो तो 73 वर्ष की आयु होती है।

(112) यदि सभी शुभग्रह बलयुक्त–लग्न से षष्ठ पर्यन्त और सभी पापग्रह शेष स्थानों में हो तो जातक शुद्ध वृत्ति वाला सानन्द जीवन व्यतीत करता हुआ 88 वर्ष तक जीता है।

(113) यदि चन्द्रमा और बृ. केन्द्रवर्ती हों और शुभ हों और चं. और बृ. के अतिरिक्त कोई ग्रह स्वक्षेत्री न हो तो 80 वर्ष की आयु होती हैं।

(114) यदि शुभग्रह मूलत्रिकोण में, लग्नेश बली और बृ. उच्च हो तो 80 वर्ष की आयु होती है। परन्तु जातकाभरण में उच्च बृ. का लग्न में होना लिखा है।

(115) लग्नस्थ बृ. उच्च हो और शुभग्रह त्रिकोण में हो तो 80 वर्ष की आयु होती हैं।

(116) यदि बृ. उच्च, लग्नेश परमबली और शुभग्रह मूलत्रिकोण में हो तो 60 वर्ष की आयु होती हैं।

(117) यदि सभी ग्रह पाप–नवांश–गत होकर केन्द्रवर्ती हों तो इन योगों में 80 वर्ष की आयु होती है।

(118) यदि पंचम, नवम केन्द्र अथवा अष्टम में तीन ग्रह हों, अथवा यदि केन्द्र में पाँच ग्रह हों तो जातक धनी एवं सुचरित्र होता हुआ 100 वर्ष जीता है।

(119) लग्नेश वृ., केन्द्रवर्ती हो और केन्द्र एवं त्रिकोण पाप–ग्रह रहित हों तो जातक सुखमय जीवन व्यतीत करता हुआ 100 वर्ष तक जीता है।

(120) बृ. केन्द्रवर्ती, सू. और मं. लग्न में अथवा अष्टम में हो तो जातक मनुष्यों पर अधिकार रखता हुआ 100 वर्ष तक जीता है।

(121) यदि मीन का शुक्र लग्नस्थ हो और अष्टमस्थ चं. शुभदृष्ट हो और बृ. केन्द्र में हो तो 100 वर्ष की आयु होती हैं।

(122) लग्नेश अष्टमेश में, चं. दशम में और अन्य सब ग्रह नवम में बली हो तो 100 वर्ष की आयु होती हैं।

(123) यदि पापग्रह चतुर्थ और नवमस्थान में पूर्ण चन्द्र लग्न में शुभग्रह द्वितीय एवं द्वादश स्थान में हों और शुभग्रह बृ. के नवांश में अथवा समराशि के नवांश में हों तो सुखमयी 100 वर्ष की आयु होती है।

(124) यदि मिथुन लग्न हो और मं., मिथुन राशि में 15 अंश के पूर्व हो एवं बृ. और बु. मिथुन के 15 अंश के बाद हों पुनः शुक्र केन्द्रवर्ती हो तो जातक की सुखमयी आयु 100 वर्ष की होती है।

(125) यदि लग्न मकर के 15 अंश के बाद हो और मं. मकर में 16 अंश में हो, चं. लग्नस्थ हो एवं वृ. केन्द्रवर्ती हो तो 100 वर्ष से अधिक आयु होती है।

(126) यदि लग्न सिंह हो और चार ग्रह त्रिकोण में बैठे हो तो 100 वर्ष की आयु होती हैं।

(127) उच्च बृ. लग्नस्थ और शुक्र केन्द्रवर्ती हो तो 100 वर्ष की आयु होती हैं।

(128) लग्न एवं अष्टम ग्रह–शून्य हों और चं. तृतीयस्थ एवं स्वगृही हो और शेष ग्रह (सू., बु., शु., श., और मं.) नवमस्थ हो तो 100 वर्ष की आयु होती हैं।

(129) केन्द्र त्रिकोण एवं अष्टम स्थान पापग्रह–शून्य हो और लग्नेश एवं बृ. केन्द्र में हो तो जातक स्वस्थ एवं सुखी होता है और 100 वर्ष की आयु होती हैं।

(130) यदि स्वगृही क्रूरग्रह चं. के साथ हो कर लग्न, छठे वा अष्टम में बैठा हो और दशमस्थान में दो बली ग्रह बैठे हों तो इन योगों में 100 वर्ष की आयु होती है।

(131) यदि जन्म मीन राशि के अन्तिम नवांश में हो (अर्थात् लग्न मीन हो और लग्न का नवांश भी मीन हो) और केन्द्र में चार ग्रह बैठे हों अथवा लग्न सिंह हों और पंचम एवं नवम स्थान में चार ग्रह बैठे हों तो इन दो योगों में से किसी में जन्म होने से 108 वर्ष की आयु होती है।

(132) यदि वृष लग्न हो, तीन ग्रह उच्च हों और वृष कर्क में हों, अथवा मं. मकर में हो और वृष कर्क में हो एवं अन्य सब ग्रह केन्द्र में हों तो 108 की आयु होती है।

(133) यदि जन्म लग्न मीन के अन्तिम नवांश का हो, चं. वृष के पंचम त्रिशांश में हों और अन्य सब ग्रह उच्च हों तो 120 वर्ष 5 दिन की आयु होती है।

(134) यदि लग्न और चं. से अष्टम स्थान में कोई ग्रह न हो और वृ. एवं शुक्र बलवान हो तो 120 वर्ष की आयु होती हैं।

(135) यदि धनु लग्न के द्वितीय होरा में जन्म हो और बुध वृष राशि के 24 अंश में हो और अन्य ग्रह उच्चस्थ हों तो 120 वर्ष की आयु होती है।

'श्रीरणवीर ज्योतिष महा निबन्ध' नामक ग्रन्थ में वर्ष की आयु योग बहुत दिये हुए हैं। पुस्तकाकृति बढ़ने के भय से हवालाही देकर समाप्त किया जाता है। विद्वानों का कथन है कि योग–जनित–आयु वैसे ही मनुष्य के जीवन में ठीक घटित होता है जो धार्मिक एवं पवित्र आचार–विचार आहार आदि पर ध्यान देता हुआ जीवन व्यतीत करता है।

अभ्यास प्रश्न–

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें।

1. दीर्घायु योग होता..... है। (50 वर्ष के नीचे, 25 वर्ष से नीचे, 70 वर्ष से ऊपर, 100 वर्ष से नीचे)
2. अल्पायुयोग.....वर्षों का होता है। (50 वर्ष से नीचे, 25 वर्ष से नीचे, 70 वर्ष से ऊपर, 100 वर्ष से नीचे)
3. सूर्य.....ग्रह है। (शुष्क, जल, थल)
4. चन्द्रमा ग्रह.....है। (जल, पृथ्वी, तेज, वायु)
5. पंचमभाव.....विचार किया जाता है। (बुद्धि, विद्या, पत्नी–पति, शत्रु–मित्र)

4.4 सारांश–

जन्म जन्मान्तरों के संस्कारवशात् मानव योनि प्राप्त होकर वेद–पुराण–इतिहास द्वारा प्रतिपादित शास्त्र का अवलम्बा वर असार भवसागर से तरने का सुन्दर सुअवसर प्राप्त होता है। ''स्वस्थे शरीरे स्वस्थ मनः'' सर्वप्रथम स्वास्थ्य का विचार लग्न से किया जाता है। लग्न या लग्नेश का बली होना आवश्यक माना गया है। हमने ऊपर स्वास्थ्य के विषय में पर्याप्त दृष्टि डाली है। स्वास्थ्य ठीक रहने के बाद धन का विचार भी आवश्यक है।

उसका विचार द्वितीय भाव से किया जाता है, इसमें द्वितीय द्वितीयेश का बली होना ठीक माना गया है, धनेश यदि केन्द्र या त्रिकोण में हो तो श्रेष्ठ धनी योग माना गया है। ऊपर हम धनी योग के विषय में चर्चा स्पष्ट कर चुके है। तनु धन–सन्तति का विचार पंचमभाव से किया जाता है। विद्याध्ययन का विचार भी इसी भाव से किया जाता है। सन्तानकारक ग्रह बृहस्पति है।

सन्तति विचार प्रति योग/सन्तान संख्या विचार/विलम्ब से सन्तान प्राप्ति योग/ऊपर स्पष्ट किया है। सप्तम भाव से विवाह का विचार किया जाता है। इसमें विवाह समय विचार, विवाह–स्त्री संख्या विचार, प्रतिबंधक योगों पर चर्चा प्रस्तुत की है। आयु विचार अष्टमभाव से करते हैं। आयु में अल्पायु, मध्यायु व दीर्घायु का विचार प्रस्तुत किया है।

इस प्रकार इस ईकाई में हमने विवाह मेलापक व स्वास्थ्य, धन–सन्तान व आयु विचार पर यथाज्ञान–यथाकाल भाव व योगों का उल्लेख किया है।

4.5 पारिभाषिक शब्दावली–

पुरूषार्थ चतुष्ट्य –	धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष।
पांचभौतिक–	पृथ्वी–जल–तेज–वायु–आकाश।
शिवसंकल्पमस्तु–	मेरा मन कल्याण वाला हो।
ऋणत्रय –	देव–पितृ–ऋषि।
संरक्षित –	अच्छी प्रकार से रक्षा किया गया।
सवंर्धित –	अच्छी प्रकार से रखा गया।
संशोधित –	ठीक प्रकार से पोषित करना।

कांचन – कांच।
केमद्रुम – चन्द्रमा से बनने वाला योग का नाम।
सुनफा – चन्द्रमा से बनने वाला योग का नाम।
अनफा – चन्द्रमा से बनने वाला योग का नाम।
पंचमाधिनपति – पाँचवें धन का स्वामी।
प्रतिबन्धक – एक योग का नाम जो सन्तान के लिए प्रयुक्त किया जाता है।
त्रिकालज्ञ – भूत–भविष्य एवं वर्तमान तीनों कालों को जानने वाला।
परधनलिप्सा – दूसरे के धन में इच्छा रखने वाला।
परदारेषु – दूसरे के स्त्री के प्रति काम भावना रखने वाला।
लोष्ठवत् – मिट्टी के समान।
मारकेश – मृत्यु तुल्य कष्ट।
अपोक्लिम – 3,6,9,12 भावों के नाम।

4.6 अभ्यास प्रश्नों की उत्तरमाला–

अति लघुत्तरीय प्रश्न

1. संस्कार शब्द का अर्थ है जो पन्द्रह संस्कारों से संस्कारित किया गया है अर्थात् पवित्र किया गया है।
2. मेरा मन शिव संकल्प वाला हो, अर्थात् कल्याण कारक हो।
3. आठ प्रकार के विवाह हैं।
4. विशेष रूप से वहन करने की प्रक्रिया का नाम विवाह है।
5. प्रथम भाव से शरीर, वर्ण, आकृति, स्वास्थ्य आदि का विचार किया जाता है।

लघुत्तरीय प्रश्न

1. यदि भाग्येश दशम भाव में और दशमेश नवम भाव में हो तो जातक धनाढ्य होता है।
2. चौथे भाव का स्वामी दशम में और दशम भाव का स्वामी चतुर्थ भाव में हो तो जमींदारी योग बनता है।
3. सूर्य को छोड़कर चन्द्रमा से द्वितीय भाव में कोई ग्रह हो तो सुनफा योग होता है।
4. सूर्य को छोड़कर दूसरे और बारहवें घर मे कोई ग्रह हो तो दुरूधरा योग होता है।
5. तृतीयेश और चन्द्रमा 1 ।4 ।6 ।8 ।12 स्थानों में हो तो सन्तान नहीं होती।

रिक्त स्थानों की पूर्ति–

1. 70 वर्ष से ऊपर।
2. 25 वर्ष से नीचे।
3. शुष्क ग्रह।

4. जलचर।
5. बुद्धि, विद्या का विचार होता है।

सत्य/असत्य प्रश्नोत्तर–

1. सत्य 2. सत्य 3. असत्य 4. असत्य 5. असत्य 6. सत्य 7. सत्य

बहु विकल्पीय प्रश्नोत्तर–

1. अ 2. अ 3. द 4. स 5. द

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

1. फलदीपिका, व्याख्याकार– गोपेश कुमारओझा, (1981) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
2. कर्मठगुरूः, मुकुन्दबल्लभ रचित, (1982) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
3. क्यों (धर्म दिग्दर्शन पूर्वार्थ), स्वामी करपात्री जी महाराज रचित, (2067) माधव विद्या भवन श्रीधाम 150, पुरानी गुप्ता कालोनी दिल्ली–9
4. क्यों (धर्म दिग्दर्शन उत्तरार्ध)।
5. ताजिक–नीलकण्ठी, पं. सीताराम शर्माकृत, (1992) चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी।
6. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द शास्त्री रचित, (2008) भारतीय ज्ञानपीठ 18 इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड नई दिल्ली 110003
7. संस्कार प्रकाश, डा. भवानी शंकर त्रिवेदी कृत, (1986) श्री लालबहादुरशास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ शहीद जीतसिंह मार्ग नई दिल्ली 110016
8. ज्योतिष–रत्नाकर, देवकीनन्दन सिंह, (1983) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
9. भारतीय ज्योतिष विज्ञान, डा. सुरकान्त झा कृत, 2006, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी के0 37/118 गोपाल मन्दिर लेन वाराणसी।
10. सनतन सुख सर्वांग चिन्तन, मृदुलात्रिवेदी कृत, (1990) 24 महानगर विस्तान ई0–40 कारपोरेशन क्वार्टर के सामने पीली कालोनी लखनऊ 226006
11. मुहूर्त चिन्तामणि– गोविन्द दैवज्ञ विरचित (2005) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली
12. वृहद्पाराशर होराशास्त्र पं. पद्मनाभ शर्मा (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली
13. वृहद्जातकम् (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली।

4.8 सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री

1. मुहूर्त चिन्तामणि– गोविन्द दैवज्ञ विरचित (2005) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्लीं
2. फलदीपिका, व्याख्याकार– गोपेश कुमार ओझा, (1981) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

3. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द शास्त्री रचित, (2008) भारतीय ज्ञानपीठ 18 इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड नई दिल्ली 110003

4. वृहद्पाराशर होराशास्त्र पं. पद्मनाभ शर्मा (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवाहरनगर दिल्ली

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न–

1. विवाह मेलापक के विषय में सारगर्भित शास्त्रों के प्रमाण पुरस्सर विस्तृत व्याख्या करें।
2. अष्टमभाव से आयु विचार क्यों करे। स्पष्ट करते हुए निशब्द व्याख्या करें?
3. सन्तति विचार पर वृहद् निबन्ध लिखें।
4. धनी योग कैसे बनता है? उदाहरण देते हुए व्याख्या करें।
5. ज्योतिष दृष्टि से स्वास्थ्य भाव पर विशब्द व्याख्या करें।

इकाई – 5 दशा व गोचर से मेलापक

इकाई की रूपरेखा–

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 मुख्य भाग खण्ड एक
    5.3.1 उपखण्ड एक – दशा एवं उसकी उपयोगिता।
    5.3.2 उपखण्ड दो – गोचर का स्वरूप और उसका आधार।
    5.3.3 उपखण्ड तीन – सूर्यादि ग्रहों का गोचर में फल।
    5.3.4 उपखण्ड चार – शुक्र ग्रह द्वारा प्रदत्त गोचर फल।
5.4 सारांश
5.5 पारिभाषिक शब्दावली
5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.7 सन्दर्भ ग्रंथो की सूची
5.8 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
5.9 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

हम इस ईकाई के माध्यम से अध्ययन करेंगे कि व्यक्ति की वर्तमान स्थिति यदि राजतुल्य सुख–संसाधनों से युक्त होकर चल रही है तो इसक पीछे क्या कारण है। और दूसरे पक्ष में यदि व्यक्ति दुखी, रोगी, दर–दर भटकता हुआ नजर आता है तो उसका क्या कारण है? उपर्युक्त दोनों कारण व्यक्ति विशेष के जीवन की घटना चक्र को दर्शाते हैं। विश्व के बड़े–बड़े अर्थशास्त्री, राजनेता, समाजशास्त्री सम्पूर्ण मानव समाज एक समानता देखने का ढोल पीटते है, परन्तु आज तक यह अमीर–गरीब की जो खाई है, उसको पूरा नहीं कर सका। व्यक्ति अपने कर्मों के अनुसार सुख–दुख, आय–व्यय, राजतुल्य भोगों को भोगता है। ये सभी अनसुलझे प्रश्न हैं जिनका उत्तर ज्योतिष शास्त्र देता है। कई व्यक्ति ऐसे भी हैं जो इस संसार सर्वगुणसम्पन्न एवं सर्वसम्पत्तियों से युक्त होने पर भी दुखी नजर आते है तो इन सभी के विषय में आप क्या कह सकते है। ज्योतिष शास्त्र इसको कहता है कर्मामुबन्ध में किसी एक जन्म का वर्णन नहीं रहता अपितु इसमें व्यक्ति जन्म–जन्मान्तरों में किये गये शुभाशुभ कर्मों का कोश रहता है जिसको हम प्रारब्ध कहते है और उसी के फलस्वरूप हम जीवन में उपर्युक्त सभी विषयों का भोग करता है। इस ईकाई में हम इस चक्र में प्राप्त होने वाले विषयों को किस प्रकार से जान सकेंगे उसका एकमात्र साधन है दशा और दशायें अनेकों प्रकार की है जिसके विषय में हम ईकाई में अध्ययन करेंगे।

5.2 उद्देश्य

इस ईकाई का प्रमुख उद्देश्य है कि व्यक्ति अपने कर्मानुबन्ध के चक्कर में फस हुआ है और उसी के फलस्वरूप वह जीवन में उतार–चढ़ाव, सुख–दुख को प्राप्त करता है। कर्मानुबन्ध किसी एक जन्म की बात नहीं करता। यह जन्म–जन्मान्तरों में किये गये शुभाशुभ कर्मों की बात करता है। उसको ज्योतिष शास्त्र में प्रारब्ध कहा जाता है। प्रारब्ध का ज्ञान किस प्रकार से हो, गोचर की क्या अहम भूमिका है। दशा के द्वारा आप जन्म–जन्मान्तरों में किये गये कर्मों के द्वारा मिलने वाले शुभाशुभ फल के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। दशा ही एकमात्र साधन है जो आपको भूतकाल, भविष्यत् काल एवं वर्तमान स्थिति के विषय में अवगत करा सकती है। यही इस ईकाई का प्रमुख उद्देश्य है।

5.3 दशा व गोचर से मेलापक

5.3.1 दशा एवं उसकी उपयोगिता

गत–वर्तमान एवं भविष्य का शुभाशुभ जानने के लिए ऋषियों ने दशा का निर्माण किया है। दशायें अनेक प्रकार की होती है, अष्टोत्तरी, विंशोत्तरी, योगिनी आदि दशाओं का प्रचार विशेष रूप से है। वर्तमान समय में देश के पूर्वोत्तर प्रदेश तथा राजस्थान आदि प्रदेशों में विंशोत्तरी दशा का उपयोग ज्यादा होता है। सिंध पंजाबादि एवं पहाड़ी प्रदेशों में योगिनी दशा का प्रचलन ज्यादा है। तथा दक्षिण मध्य भारत गुजरात आदि प्रदेशों में अष्टोत्तरी दशा का व्यवहार में ज्यादा प्रयोग है। परन्तु शास्त्र इस विषय में कुछ इस प्रकार

कहता है–

''दशाप्यष्टोत्तरी शुक्ले कृष्णे विंशोत्तरी मता''

अर्थात् शुक्ल पक्ष में जन्म हो तो अष्टोत्तरी दशा एवं कृष्ण पक्ष में जन्म हो तो विंशोत्तरी दशा लेनी चाहिए।

पाराशर का मत दशा के विषय में कुछ इस प्रकार से है–

''दशा विंशोत्तरी चात्र ग्राह्या नाष्टोत्तरी मता''

नक्षत्र के अनुसार दशा विंशोत्तरी ही लेनी चाहिए, अष्टोत्तरी नहीं।

दशा के विषय में और भी कहा है, यथा–

''कृष्णपक्षे दिवाजातः शुक्लपक्षे यदा निशि।

विंशोत्तरी दशा प्रोक्ताऽन्यत्राप्यष्टोत्तरी स्मृता।।

कृष्ण पक्ष में तथा शुक्ल पक्ष में रात्रि में जन्म हों तो विंशोत्तरी दशा ग्रहण करनी चाहिए। यदि इसके विपरीत हो तो अष्टोत्तरी दशा ग्रहण करनी चाहिए।

दशा के विषय में और भी कहा गया है, यथा

''गुर्जरे कच्छसौराष्ट्रे पांचाले सिंधुपर्वते।

एतेष्वष्टोत्तरी श्रेष्टाऽन्यत्र विंशोत्तरी मता।।''

गुजरात, कच्छ, काठियावाड़, पांचाल तथा सिंधुपर्वत में अष्टोत्तरी दशा ग्रहण करनी चाहिए।

विशोत्तरी दशा 120 वर्ष की रहती है। इसमे सू., च., मं., रा., वृ, शनि, बुध, केतु, शुक्र इनकी क्रमशः दशा रहती है। इन्हीं वारों के क्रम में कृत्तिकादि 27 नक्षत्रों की तीन आवृत्ति हो जाने से एक–एक ग्रह के तीन–तीन नक्षत्र रहते हैं।

–अभ्यास प्रश्न–

अतिलघुत्तरीय प्रश्न–

1.	विंशोत्तरी दशा वर्ष कितने होते हैं?	120
2.	अष्टोत्तरी दशा वर्ष कितने होते हैं?	108
3.	36 वर्षों की कौन सी दशा होती हैं?	योगिनी
4.	ग्रहों की दशा क्रम क्या हैं?	आ. च. मं रा वृ श बु के शु
5.	प्रत्येक ग्रह की दशा में कितने नक्षत्र होते हैं।	तीन

5.3.2 गोचर का स्वरूप और उसका आधार

गोचर में गुरू और शनि का महत्व। गोचर अष्टक–वर्ग का एक भाग है? गोचर में फलादेश चन्द्र लग्न से क्यों किया जाता है। सूर्यादि ग्रहों का गोचर फल।

आकाशस्थ ग्रह अपने–अपने मार्ग और अपनी–अपनी गति से सदैव भ्रमण करते हुए एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश करते रहते हैं। जन्म समय में ये ग्रह जिस राशि में पाए जाते हैं वह राशि उनकी जन्मकालीन अवस्था कहलाती है जो कि जन्म कुण्डली का आधार है और जन्म समय के अनन्तर किसी भी समय वे अपनी गति से जिस राशि में भ्रमण करते

हुए दिखाई देते हैं। वहाँ उस राशि में उनकी स्थिति 'गोचर' अथवा संचार स्थिति कहलाती है। 'गो' शब्द संस्कृत भाषा की 'गम' धातु से बनता है और इसका अर्थ है 'चलने वाला'। आकाश में करोड़ो तारे है। वे सब स्थित प्रायः हैं। तारों से ग्रहों की पृथक्ता को दर्शाने के लिए उनका नाम 'गो' अर्थात् चलने वाला रखा गया। 'चर' शब्द का अर्थ भी चाल अथवा चलन है, तो 'गोचर' शब्द का अर्थ हुआ–ग्रहों का चलन, अर्थात् चलन एवं अस्थित अवस्था में ग्रह का परिवर्तन प्रभाव।

गोचर ग्रहों के प्रभाव उनकी राशि परिवर्तन के साथ–साथ बदलते रहते है। जातक पर चल रहे वर्तमान समय की शुभाशुभ जानकारी के लिए गोचर विचार सरल और उपयोगी साधन है। वर्ष की जानकारी गुरू और शनि से, मास की सूर्य से और प्रतिदिन की चन्द्र से की जा सकती है। वास्तविकता तो यह है कि गोचर का फल चाहे वह किसी भी ग्रह से सम्बन्धित हो उस ग्रह की अन्य प्रत्येक ग्रह से स्थिति के अनुकूल ही कहना चाहिए न कि केवल उस ग्रह की चन्द्रमा की स्थिति से। अष्टक वर्ग में यही उल्लेख किया गया है। इसी अष्टक वर्ग पद्धति में ही चन्द्रमा की स्थिति से अन्य ग्रहों से का फल लिखा जाएगा। इस सन्दर्भ को वृहद् जातक अध्याय 9 श्लोक 1 में स्पष्ट किया गया है कि चन्द्रमा से अमुक–अमुक भावों में सूर्य कब अच्छा फल करता है। अथवा अमुक–अमुक भावों में मंगल अच्छा फल करता है आदि–आदि। अष्टक वर्ग के ही एक भाग के विस्तृत वर्णन का नाम गोचर पद्धति है। इस पद्धति में जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है, ग्रहों की चन्द्र से किस भाव में स्थिति है इस बात पर फलों का निर्णय किया गया है। यह तो आप जानते ही हैं कि जन्म कुण्डली के ग्रहों का फल भी बिना चन्द्रकुण्डली के ग्रह स्थिति को देखें सत्य रूप से नहीं कहा जा सकता। चन्द्र का दरजा लग्न से कम नहीं है। ज्योतिष शास्त्र के पिता ने (बृहत्पाराशर होराशास्त्र अध्याय 12, श्लोक 11 में) कहा हैः

''एवं चन्द्राच्च विज्ञेयं फलं जातककोविदैः''

अर्थात् ज्योतिष शास्त्र के पण्डितों को लग्न की भांति चन्द्र लग्न से भी फलादेश कहना चाहिए।

गोचर में ग्रहों का विचार लग्न से किया जावे अथवा जन्म राशि से– यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। इस प्रश्न का उत्तर 'ज्योतिर्निबन्ध' का निम्नलिखित श्लोक कुछ हद तक उपस्थित रहता हैः

''विवाहे सर्वमाङ्.गल्ये यात्रादौ ग्रहगोचरे
जन्मराशेः प्रधानत्वं नाम राशिं न चिन्तयेत''

अर्थात् विवाह और अन्य मंगल कार्यों में, यात्रा आदि में, और ग्रहो के 'गोचर' विचार में जन्मराशि की प्रधानता है न कि नाम राशि की। दक्षिण भारत के प्रसिद्ध ज्योतिष ग्रन्थ 'फलदीपिका' में भी चन्द्र लग्न से अर्थात् जन्म राशि से गोचर विचार करने का निर्देश हैः

''सर्वेषु लग्नेष्वपि सत्सु

चन्द्रलग्नं प्रधानं खलु गोचरेषु।''

अर्थात् सब प्रकार की लग्नों (लग्न, सूर्य लग्न, चन्द्र लग्न) के होते हुए भी गोचर विचार में प्रधानता चन्द्र लग्न ही की है। वैसे भी चन्द्र लग्न की महानता का कुछ अन्दाजा आपको 'जातक पारिजात' के राजयोग अध्याय 7 के निम्नलिखित श्लोक 13 से भी हो जाएगा–

''नीचं गतो जन्मनि यो ग्रह स्पात्
तद् राशि नाथोऽपि तदुच्च नाथः
सचन्द्र लग्नाद् यदि केन्द्रवर्ती
राजा भवेद धार्मिक चक्रवर्ती।''

अर्थात् जन्म के समय जो ग्रह नीच राशि में स्थित हो, यदि उस नीच राशि का स्वामी अथवा उस ग्रह के उच्च स्थान का स्वामी चन्द्र लग्न से केन्द्र में हो तो वह जातक चक्रवर्ती राजा होता है। यहाँ केन्द्र स्थिति चन्द्र से कही है जिससे चन्द्र की लग्न रूप से महिमा व्यक्त है। देवकेरलकार ने भी पृष्ठ 300 पर श्लोक संख्या 3005 में लिखा है–

''चन्द्रलग्नं शरीरं स्यात् लग्नं स्यात् प्राण संज्ञकम्
ते उभे संपरीक्ष्यैव सर्व नाडी फलं स्मृतम्।''

अर्थात् चन्द्र लग्न शरीर है, लग्न प्राण है, इन दोनों का सम्यक् विचार करने के अनन्तर ही कुण्डली का फल कहना चाहिए।

आपको यह बात तो स्पष्ट हो गई होगी कि लग्न और चन्द्र लग्न दोनों का एक जैसा ही महत्व है। यही कारण है कि उत्तर भारत में यह प्रथा है कि छोटे से छोटे ब्योरे वाली ही कुण्डली क्यों न हो उसके साथ चन्द्रकुण्डली अवश्य बना दी जाती है।

यद्यपि लग्न और चन्द्र लग्न की महानता में विशेष अन्तर नहीं है, तो भी चन्द्र लग्न में लग्न की अपेक्षा कुछ विशेषता है, जिसकी ओर हम पाठकों का ध्यान आकर्षित करना चाहेंगे। वह इस प्रकार कि अष्टक वर्ग पद्धति में, जिसका कि गोचर एक अंग मात्र है, प्रत्येक ग्रह और लग्न मिलकर इस बात का मानों निर्णय करते हैं कि वे किसी ग्रह विशेष को कहाँ–कहाँ शुभता दे सकते है। उनके द्वारा शुभता प्रदान करने का यह कार्य पारस्परिक गुण–दोषों, शत्रुता–मित्रता, नैसर्गिक शुभता–अशुभता आदि ग्रह प्रदर्शित बातों पर ही निर्भर करता है। शत्रुत्व अथवा मित्रत्व का यह कार्य दो ग्रहों ही के बीच में शोभा पाता है न कि एक ग्रह और दूसरी लग्न के राशि के बीच में, विशेषतया इसलिए कि लग्न एक नहीं बारह है। ग्रहों के लिए यह कैसे सम्भव था कि वे अपना शुभ प्रभाव बारह लग्नो से विविध स्थानों पर एक साथ कमानुसार जतला ही देते है। अतः यह इच्छा रखते हुए भी कि ग्रहों का फल गोचर में लग्न से कहा जावे हम अष्टक वर्ग पद्धति में ऐसा नहीं कर सकते है। महर्षियों ने गोचर फल निर्णय के लिए एक ऐसी वस्तु को अर्थात् चन्द्र को चुना जो ग्रह होने के साथ–साथ लग्न रूप भी है। बस, इसलिए गोचर में जन्मकालीन चन्द्र को न कि लग्न को आधार माना गया है।

–अभ्यास प्रश्न–

लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. गोचर शब्द का क्या अर्थ हैं?
2. संस्कृत में ''गो'' शब्द का क्या अर्थ हैं?
3. कौन–कौन से कार्यों में गोचर का विचार करना चाहिए।
4. अष्टकवर्ग किसे कहते हैं?
5. सूर्य गोचरवश कौन–कौन से भावों में शुभ फल करता हैं?
6. चन्द्रमा कौन–कौन से भावों में शुभप्रद होता हैं?
7. शनि कौन–कौन से भावों में शुभप्रद होता हैं?

5.3.3 सूर्यादि ग्रहों का गोचर में फल–

सूर्य का गोचर में फल–

जन्म कुण्डली में चन्द्रमा जहाँ स्थित है वहाँ से तीसरे, छठे, दसवें और ग्यारहवें भाव पर सूर्य का जो प्रभाव है वह उन स्थानों में सूर्य के लिए बलप्रद तथा शुभताप्रद है। इसी बात को हम यूं भी कह सकते हैं कि जब सूर्य चन्द्रमा से तृतीय, छठे, दसवें और ग्यारहवें भाव में गोचर वश पहुंचता है तब शुभ फल करता है, शेष भावों में सूर्य का फल अशुभ माना गया है।

चन्द्र लग्न में जब गोचर का सूर्य जाता है तब धन का नाश होता है, व्यक्ति के मान–सम्मान में कमी आती है, स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता, रक्त भाराधिक्य, हृदय रोग, थकावट, उदर विकार, पेट के तथा नेत्र के रोगों से कष्ट उठाना पड़ता है। प्रत्येक कार्य विलम्ब से सम्पन्न होता है और समय पर भोजन नहीं मिलता, बिना किसी उद्देश्य के भ्रमण होता है, और व्यक्ति को अपने परिवार से अलग होना पड़ता है। सम्बन्धियों, मित्रों और सज्जनों से झगड़ा होने के कारण मानसिक व्यथा रहती है।

चन्द्र लग्न से द्वितीय स्थान में जब सूर्य जाता है तब दुष्ट और बुरे कर्म वाले लोगों से मुलाकात होती है। व्यक्ति का निज का स्वभाव भी धूर्तता तथा नीचता की ओर अग्रसर होता है। सिर और आँखों में पीड़ा रहती है। व्यापार और धन–सम्पत्ति की हानि का भय रहता है। मित्रों और सम्बन्धियों से झगड़ा होता है और व्यक्ति का पूरा महीना सुख–रहित व्यतीत होता है।

चन्द्र लग्न से तृतीय स्थान में जब सूर्य गोचर वश आता है तो रोगों से मुक्ति, सुख, चैन शुभफल मिलते हैं। सज्जनों एवं उच्च राज्याधिकारियों से मेल–मुलाकात होती है। पुत्रों तथा मित्रों से धन–लाभ तथा सम्मान होता है। शत्रुओं की सरलता से पराजय होती है तथा व्यक्ति लक्ष्मी और मान–प्रतिष्ठा प्राप्त करता है। इस अवधि में प्रायः पद की प्राप्ति होती है और व्यक्ति सबसे शुभ व्यवहार करता है।

चन्द्र से चतुर्थ स्थान में जब गोचर का सूर्य जाता है तब मानसिक और शारीरिक व्यथा रहती है, घरेलू झगड़ों के कारण सुखों में कमी आ जाती है, जमीन–जायदाद सम्बन्धी

अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं, अच्छी सुख सामग्री नहीं मिलती। यात्रा में असुविधायें होती हैं। लोग परेशान करते हैं, विवाहित सुख में भी अड़चन पड़ती है। मान–हानि की संभावना रहती है।

चन्द्र से पंचम भाव में गोचर का सूर्य जब जाता है तब मानसिक भ्रम खासतौर से उत्पन्न होता है। शारीरिक और मानसिक शक्ति में कमी आती है। धनहानि भी होती है। स्वयं और सन्तान का रोग उत्पन्न होता है। राज्याधिकारियों से वाद–विवाद बढ़ता है। यात्रा में दुर्घटनाएं होती है। धनहानि भी होती है। व्यक्ति दीनता का अनुभव करता है।

चन्द्र से छठे स्थान में सूर्य जब गोचर मे आता है तब कार्यसिद्धि और सुख की प्राप्ति होती है। अन्न–वस्त्र आदि का लाभ होता है। शत्रुओं पर विजय प्राप्त होती है। रोगों का नाश होता है। राज्यधिकारियों से लाभ रहता है। निज प्रताप में वृद्धि होती है। शोक–मोह आदि भावों का नाश होकर चित्त और शरीर स्वस्थ रहते हैं।

चन्द्र से सातवें स्थान में सूर्य के जाने से दाम्पत्य जीवन में वैमनस्य की उत्पत्ति होती है। स्त्री और पुत्र बीमार रहते हैं। कार्यों में असफलताएं प्राप्त होती हैं। व्यवसाय में बाधायें उत्पन्न होती हैं। कष्टकारी यात्राएं करनी पड़ती हैं। उदार पीड़ा, सिर पीड़ा आदि रोग होते हैं। धन और मानहानि के कारण व्यक्ति के मन को क्लेश रहता है।

चन्द्र से अष्टम भाव में सूर्य के जाने पर जातक को अपने बुरे कर्मों का फल मिलता है। शत्रुओं से झगड़ा होता है। शरीर में पीड़ा रहती है। बवासीर, अपच आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं। राज भय (जुर्माना, मुकदमा, गिरफ्तारी) होता है। स्त्री को भी कुछ कष्ट होता है। बहुत अधिक खर्च होता है। कभी–कभी ज्वर, रक्त भाराधिक्य के कारण मृत्यु भी हो सकती है। अपमान का विशेष भय रहता है।

चन्द्र से नवम स्थान में गोचरवश जब सूर्य जाता है तब क्रांति का क्षय, झूठा आरोप, बिना कारण धन और पुण्य की हानि, आय की कमी, रोग एवं अशान्ति उत्पन्न होते हैं। बड़ों से, मित्रों से तथा भाइयों से विरोध रहता है। अपमान का भय रहता है। डर उद्योग में असफलता मिलने के कारण व्यक्ति दीन बन जाता है।

चन्द्र से दशम भाव में सूर्य के जाने पर धन, स्वास्थ्य, मित्र आदि का सुख प्राप्त होता है। राज्याधिकारियों और प्रतिष्ठित लोगों से मित्रता बढ़ती है। सज्जनों द्वारा लाभ होता है। प्रत्येक कार्य में सफलता मिलती है। पदोन्नति का सुअवसर प्राप्त होता है। मान, गौरव तथा प्रताप बढ़ते हैं।

चन्द्र से एकादश भाव में सूर्य के जाने से हर प्रकार का लाभ, धनप्राप्ति, उत्तम भोजन, नवीन पद और बड़ों के अनुगह की प्राप्ति होती है। स्वास्थ्य अच्छा रहता है और आध्यात्मिक एवं मांगलिक कार्य होते रहते हैं। सात्विकता में वृद्धि होती है। राज्य की ओर से कृपा की प्राप्ति होती है। पदोन्नति का यह समय होता है, पितादि से लाभ रहता है।

चन्द्र से द्वादश भाव में गोचर में रवि के आ जाने से दूर देश का भ्रमण होता है। कार्य तथा पद की हानि होती है। व्यय अधिक रहता है। कई प्रकार की कठिनाईयाँ झेलती

पड़ती है। ज्वर आदि रोग उत्पन्न होते हैं। पेट में अधिक गड़बड़ रहती है। राज्य की ओर से विरोध होता है। आँखों में कष्ट की संभावना रहती है। मित्रों का व्यवहार भी शत्रुतापूर्ण हो जाता है। अपमान का भय रहता है।

चन्द्र गोचरफल

जन्म कुण्डली में चन्द्रमा जहाँ स्थित है वहाँ से प्रथम, तृतीय, छठे, सातवें, दसवें और ग्यारहवें भाव पर उसका जो प्रभाव है वह उन स्थानों पर चन्द्र के लिए बलप्रद तथा शुभ फलदायक है। दूसरे शब्दों में जब गोचर में चन्द्रमा जन्म चन्द्र राशि से उपरोक्त भावों में आता है तो शुभ फल करता है। शेष भागों में उसे अशुभ समझना चाहिए।

चन्द्र लग्न में ही गोचर वश जब चन्द्रमा आता है तब व्यक्ति सुख और आनन्द प्राप्त करता है। रोग–मुक्त रहता है। उत्तम भोजन, वस्त्र और शय्या सुख प्राप्त होता है। स्त्री सम्भोग का अवसर आता है। उपहारादि धन की प्राप्ति होती है।

चन्द्र लग्न से द्वितीय भाव में गोचर का चन्द्रमा मानसिक असन्तोष देता है। कुटुम्ब वालों से नहीं बनती। नेत्रों में पीड़ा का कोई रोग उत्पन्न होता है। अच्छा भोजन सुख प्राप्त नहीं होता है। कार्यों में असफलता मिलती है। पाप कर्मों में प्रवृत्ति बढ़ती है, विद्या में हानि उठानी पड़ती है।

चन्द्र से तृतीय भाव में चन्द्रमा के आने से धन की प्राप्ति होती है। वस्त्रादि का सुख मिलता है। स्वास्थ्य ठीक रहता है। शत्रुओं पर विजय प्राप्त होती है। मन प्रसन्न रहता है, प्रेमिकाओं से सहवास सुख प्राप्त होता है। बन्धुजनों से लाभ रहता है। जनता से प्रेम बढ़ता है। भाग्य में वृद्धि होती है।

चन्द्र से चतुर्थ स्थान में चन्द्रमा के आने से स्वजनों से झगड़ा होता है। छाती मे विकार होता है। वित्त में चंचलता रहती है। भोजन और नींद में बाधाएं उत्पन्न होती हैं और जल तथा स्त्री जाति से भय होता है। जनता से भी अपमान का भय रहता है। स्त्री–सुख में कमी आ जाती है।

चन्द्र से पंचम गोचर में चन्द्रमा के आ जाने पर यात्रा में कष्ट और दुर्घटना की संभावना रहती है। कार्य सफल नहीं होता। मन में अशान्ति रहती है। धन हानि होती है। पेट में जलोदर आदि रोग की सम्भावना रहती है। कामुकता में वृद्धि होती है। मन्त्रणा शक्ति का ह्रास होता है।

चन्द्र से छठे स्थान में गोचरवश चन्द्रमा के आ जाने पर धन लाभ होता है तथा जातक का स्वास्थ्य भी ठीक रहता है। यश और आनन्द की प्राप्ति होती है। महिलाओं से वार्तालाप का अवसर मिलता है। अपने घर मे सुखपूर्वक रहने का अवसर प्राप्त होता है। व्यय में अधिकता रहती है।

चन्द्र से सातवें स्थान में गोचरवश चन्द्र के आने पर धन लाभ होता है। जातक को पर्याप्त काम सुख मिलता है। छोटी परन्तु लाभदायक यात्राएँ होती हैं। वाणिज्य व्यवसाय में लाभ रहता है। उत्तम भोजन, क्षीर आदि पेय पदार्थ और शयन–सुख मिलता है। स्वास्थ्य

अच्छा रहता है वाहन और ख्यानि की प्राप्ति होती है। विशेषतया जबकि शुक्र भी गोचर में शुभ फल दे रहा हो।

चन्द्र से अष्टम भाव में चन्द्रमा के आने पर व्यक्ति के अपच, श्वास खांसी आदि छाती के रोग उत्पन्न होते हैं, झगड़ा–विवाद और मानसिक क्लेश रहता है। नियत समय पर अच्छा भोजन प्राप्त नहीं होता। अचानक महान् कष्ट में ग्रसित हो जाने की सम्भावना रहती है। धन का नाश होता है।

चन्द्र से नवम भाव में चन्द्रमा के जाने पर राज्य की ओर से परेशानी होती है और व्यवसाय में हानि उठानी पड़ती है। पुत्रों से मतभेद रहता है, बल्कि पुत्रों के स्वास्थ्य को भी हानि पहुंचती है। उदर की कोई शिकायत जैसे कालरा–प्लूरेसी आदि होती है। मनुष्य का भाग्य उसका साथ नहीं देता। शत्रु परेशान करते हैं। राज्य की ओर से परेशानी उठानी पड़ती है

चन्द्र से दशम स्थान में चन्द्र जाने पर अभीष्ट की सिद्धि होती है। सभी कार्य सरलता से पूर्ण हो जाते हैं। व्यक्ति का स्वास्थ्य अच्छा रहता है। राज्य की ओर से धन और सम्मान की प्राप्ति होती है। नौकरी में पदोन्नति होती है। उच्चाधिकारी प्रसन्न रहते हैं। उत्तम गृह–सुख मिलता है।

चन्द्र से ग्यारहवें चन्द्र के जाने पर मनुष्य की आय में वृद्धि होती है। व्यापार से पर्याप्त लाभ प्राप्त होता है। पुत्रादि से मिलाप होता है। उत्तम भोजन समयानुकूल प्राप्त होता है। मित्रों से हास–परिहास और स्त्री–सुख से समय व्यतीत होता है। मन महत्वाकांक्षा की ओर अग्रसर होता है। स्त्री वर्ग से लाभ रहता है और तरल पदार्थों से आय में वृद्धि होती है।

चन्द्र से द्वादश में चन्द्र के जाने से शारीरिक कष्ट होता है विशेषतया आँखों को रोग हो जाने का भय रहता है। धन और मान की हानि होती है। पुत्रादिकों का सहयोग प्राप्त नहीं होता। मानसिक चिन्ताएं बढ़ जाती हैं। व्यय अधिक होता है। वाराही संहिता में आया है किः ''अन्त्यगो वृषभ चरितान्दोषान् अन्ने करोति हि सव्ययान्'' अर्थात् द्वादश भाव में गोचर वश गया हुआ चन्द्र अधिक व्यय के साथ–साथ उन्मत बैल का सा व्यवहार भी करवाता है और शक्ति सम्बन्धित अनर्थ करवाता है।

विशेष–दूसरे, पांचवें तथा नवें स्थान में जो गोचर चन्द्र का फल लिखा है, वह अशुभ फल केवल 'क्षीण' चन्द्रमा के रहने से होता है। यदि उक्त भावों में पूर्ण चन्द्र गोचरवश आवे तो वह शुभफल ही करता है। सूर्य से 6 तिथि (72 अंश) आगे अथवा पीछे यदि चन्द्र स्थित हो तो वह 'क्षीण' संज्ञा वाला होता है।

मंगल गोचरफल

मंगल चन्द्र से गोचरवश तीसरे, छठे और ग्यारहवें भाव में शुभफल देता है। शेष भावों में इसका फल अशुभ समझा गया है।

चन्द्र लग्न में यदि गोचरवश मंगल हो तो उस समय कार्य सफल नहीं होते। व्यक्ति ज्वर, व्रण और रक्त विकार से कष्ट उठाता है। आग, जहर और हथियारों से हानि की सम्भावना होती है। बवासीर आदि रोगों से पीड़ित होना पड़ता है। स्त्री को भी ज्वर आदि से कष्ट होता है। दुर्जनों को कष्ट मिलाता है। यात्रा में दुर्घटनाएं होती है और भी कई उपद्रव होते हैं।

चन्द्र से द्वितीय भाव में यदि मंगल गोचर वश स्थित हो तो बल की हानि होती है, कार्यों में असफलता मिलता है। दुष्ट मनुष्यों तथा चोरों आदि से तथा अग्नि आदि से धन की हानि होती है। वह सदा कठोर वचनों का प्रयोग करता है। राज्य की ओर से दण्डित होने का भय रहता है। शरीर में पित्त के आधिक्य से कष्ट रहता है।

चन्द्र से तृतीय भाव में यदि मंगल गोचरवश स्थित हो तो जातक का साहस बढ़ता है तथा उसके शत्रु पराजित होते हैं। धातुओं में धन मिलता है। वैयक्तिक प्रभाव में वृद्धि होती है। राज्य कर्मचारियों की ओर से सहायता प्राप्त होती है। तर्कशक्ति बढ़ती है तथा धन की वृद्धि होती है।

चन्द्र से चतुर्थ भाव में यदि मंगल गोचरवश गया हो तो शत्रुओं की वृद्धि और स्वजनों का विरोध होता है। धन एवं वस्तुओं की कमी आ जाती है। जमीन–जायदाद की समस्याएं उत्पन्न होती रहती हैं। घरेलू जीवन का सुख कम मिलता है। ज्वर, वक्षस्थल के रोग तथा रक्त से उत्पन्न होने वाले रोगों से पीड़ा होती है। व्यक्ति के मान में कमी आती है। जनता अर्थात् सर्वसाधारण से भी प्रायः विरोध रहता है। माता को कष्ट मिलता है तथा मन में हिंसा तथा क्रूरता की वृद्धि जागृत होती है, मन भयभीत रहता है।

चन्द्र से पंचम में जब मंगल गोचरवश आता है तो धन और स्वास्थ्य का नाश होता है। सन्तान बीमार रहती है। यदि अन्य पाप प्रभाव भी हों तो सन्तान की मृत्यु तक की संभावना रहती है। मनपाप कर्मों की ओर अधिक प्रवृत्त होता है। उसके गौरव और प्रताप को विशेष धक्का लगता है। शत्रुओं से पीड़ा होती है।

चन्द्र से छठे जब मंगल गोचरवश आता है, तब धन, अन्न और तांबादि तथा स्वर्ण की प्राप्ति होती है। शत्रुओ पर सरलता से विजय प्राप्त होती है, शत्रुओं का नाश होता है। वैयक्तिक प्रभाव में वृद्धि होती है। यदि मंगल छठे भाव में उच्चादि राशि में स्थित हो तो स्वास्थ्य ठीक रहता है।

चन्द्र से सप्तम जब मंगल गोचरवश आता है तो स्वजनों को मानसिक एवं शारीरिक कष्ट होता है। भोजन–वस्त्र आदि में कमी आती है। अपनी स्त्री से कलह रहती है। स्त्री का स्वास्थ्य भी ठीक नहीं रहता। भाईयों से विवाद होता है और दुःख प्राप्त होता है। नेत्र विकार से पीड़ा होती है।

चन्द्र से अष्टम जब मंगल गोचरवश आता है तो जातक का परदेशवास होता है। कार्य की हानि होती है, पुरूषार्थ निष्फल जाता है। घाव और रोग से पीड़ा होती है। गुदा अथवा उसके समीप तथा नेत्र में रोग की उत्पत्ति होती है। आघात आदि से इस समय

मृत्यु भी सम्भव है। भाइयों से अनबन रहती है। पाप में प्रवृत्ति अधिक रहती है। जुआ आदि व्यसन घेरे रहते हैं। शत्रुओं से भय रहता है।

चन्द्र से नवम जब मंगल गोचरवश आता है तब मनुष्य अनादर पाता है। पट्ठों के दर्द से पीड़ित और 'सूखा' के रोग से पीड़ित हो सकता है। शरीर में निर्बलता रहती है। भाग्र में धक्का लगने के कारण धनाभाव का कष्ट उठाना पड़ता है। रोजगार में बाधा उत्पन्न होती है। ऑपरेशन आदि के बिगड़ने की संभावना रहती है। मनुष्य शत्रुओं से पराजित होता है। धर्म के विरूद्ध आचरण करता है तथा भाइयों से कष्ट होता है।

चन्द्र से दशम में मंगल जब गोचरवश आता है तब तामसिक पदार्थों का भोजन प्राप्त होता है। शरीर में आघात आदि द्वारा रोग की उत्पत्ति होती है। किसी कार्यवश घर से बाहर रहना पड़ता है। रोजगार में विघ्न बाधाएं आती हैं। चोरों का भय भी रहता है। परन्तु 'वाराही' के अनुसार दशम भाव में गोचरवश जाने वाला मंगल धन की प्राप्ति करवाता है। हमारे विचार में धन प्राप्ति का फल उत्तरार्द्ध अवधि में ही संभव मानना चाहिए।

चन्द्र से एकादश भाव में मंगल जब गोचरवश आ जाता है, तब जय, आरोग्य और धन–धान्य की प्राप्ति होती है। आय में आशातीत वृद्धि होती है। भूमि आदि के लाभ का यह उपयुक्त समय रहता है। मकान के किराये की आय में वृद्धि होती है। भाइयों की वृद्धि होती है तथा व्यक्ति को उनसे लाभ भी रहता है। कार्यों में सफलता मिलती है।

चन्द्र से द्वादश भाव में गोचरवश जब मंगल आता है तो धन का व्यय होता है, तथा घर से बाहर जाना पड़ता है। मनुष्य नेत्र रोग से पीड़ित होता है। भाइयों में अनबन रहती है। मान–हानि होती है। स्त्री को कष्ट होता है तथा उससे कलह होती है। पुत्रों को कष्ट की प्राप्ति होती है।

–अभ्यास प्रश्न–

बहुविकल्पीय प्रश्न

(1) विंशोत्तरी दशा में वर्ष होते हैं।

अ. 36 ब. 48

स. 120 द. 108

(2) सूर्य शुभ फल देता है।

अ. तीसरे घर में। ब. चतुर्थ घर में।

स. दूसरे घर में।द. पांचवें घर में।

(3) मंगल अशुभ होता है।

अ. तृतीय भाव ब. षष्ठ भाव

स. अष्टम भाव द. दशम भाव

(4) गोचर शब्द का अर्थ होता है।

अ. ग्रहों की चाल ब. गाय के चलने से

स. गाय के चरने से द. कुछ भी नहीं

(5) सूर्यादि ग्रह संख्या है।

अ. सात ब. आठ

स. नौ द. कोई नहीं।

5.3.4 शुक्र ग्रह द्वारा प्रदत्त गोचर फल

शुक्र गोचरफल

गोचर में शुक्र, चन्द्र लग्न से प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम, अष्टम, नवम, एकादश और द्वादश भाव में शुभ फल करता है। शेष भावों में इसका फल शुभ नहीं माना जाता।

शुक्र चन्द्र लग्न मे जब गोचर वश आवे तब सुख और धन की प्राप्ति तथा शत्रु का नाश होता है, परन्तु जातक कुछ दुराचार भी करता है। विवाह और सन्तान जन्म का अवसर आता है तथा विद्या अध्ययन में सफलता प्राप्त होती है। सब प्रकार के आमोद–प्रमोद और वैभव–विलास प्राप्त होते हैं। सत्यता की ओर झुकाव बढ़ता है। व्यापार में वृद्धि होती है। जलीय पदार्थों तथा सुगन्धित द्रव्यों तथा फेन्सी गुड्स आदि से आय होती है।

शुक्र चन्द्र लग्न से द्वितीय भाव में गोचरवश जब आता है तब धन की बार–बार प्राप्ति होती है। शरीर स्वस्थ रहता है। नवीन वस्त्र तथा आभूषण धारण करने का यह समय होता है। उत्तम स्त्री–सुख मिलता है। सन्तान प्राप्ति का भी यह समय है। राज्य की ओर से मान बढ़ता है, विद्या में उन्नति होती है। शरीर के सौन्दर्य में निखार आता है। गायन–वादन में रूचि बढ़ती है। शत्रुओं का नाश होता है।

शुक चन्द्र लग्न से तृतीय भाव गोचरवश जब आता है तब मित्रों की वृद्धि तथा शत्रुओं की पराजय होती है। धन की प्राप्ति होती है और जातक का साहस बढ़ता है। नौकरों का सुख मिलता है और मान–सम्मान में वृद्धि होती है, भाग्योदय होता है। राज्य की ओर से कृपा प्राप्त होती है। बहिन–भाइयों का सुख बढ़ता है। धर्म में रूचि बढ़ती है।

शुक्र चन्द्र लग्न से चतुर्थ भाव गोचरवश जब आता है तो मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं और धन की प्राप्ति होती है। वैभव–विलास की सामग्री, मोटर साइकिल, कार आदि की प्राप्ति होती है। सम्बन्धियों से सहायता प्राप्त होती है। जनता से सम्पर्क तथा प्रेम बढ़ता है। शरीर तथा मन में विशेष बल की अनुभूति होती है।

शुक्र चन्द्र लग्न से पांचवे भाव गोचरवश जब आता है तो पुत्रादिकों से प्रेम प्यार बढ़ता है। अन्न और धन की प्राप्ति होती है और उत्तम प्राकर का खाना–पीना रहता है। यश की वृद्धि होती है। शत्रुओं पर विजय प्राप्त होती है। पुत्रादि के जन्म का अवसर होता है। प्रेमी–प्रेमिका से सम्बन्ध पक्के रूप से स्थापित हो जाते हैं। मनुष्य विभागीय परीक्षाओं मे सफलता प्राप्त करता है। आमोद–प्रमोद के स्थानों, सिनेमा, क्लब आदि में अधिक आना–जाना रहता है।

शुक्र चन्द्र लग्न से छठे भाव गोचरवश आने से शत्रुओं की वृद्धि और विजय होती है और उनसे सन्धि करने पर विवश होना पड़ता है। साझेदारों से व्यापार सम्बन्धी झगड़ा होता है। यात्रादि से दुर्घटनाओं द्वारा हानि पहुंचती है। स्त्री विमुख हो जाती है।

शुक्र चन्द्र लग्न से सप्तम भाव गोचरवश आने से अपमानित होने का भय रहता है। बड़ें परिश्रम से आजिविका निर्वाह होता है। जननेन्द्रिय सम्बन्धी रोगों से जातक को कष्ट होता है। स्त्री से विवाद रहता है। स्त्री के रोगी रहने की सम्भावना रहती है। अन्य स्त्रियों से प्रेम आदि के कारण हानि और अपमान सहना पड़ता है। यात्राएं अधिक करी पड़ती हैं।

शुक्र चन्द्र लग्न से आठवें भाव में गोचरवश जब आता है तब धन की प्राप्ति होती है और सुखों में वृद्धि होती है। जातक के समस्त कष्ट दूर हो जाते हैं। विलास की सामग्री में वृद्धि होती है। कुटुम्बियों से धन तथा सुख की प्राप्ति होती है। विद्या में उन्नति होती है।

शुक्र चन्द्र लग्न से नवम भाव में जब गोचरवश आता है तो उत्तम वस्त्र तथा आभूषणों की प्राप्ति होती है। शरीर स्वस्थ रहता है। आशा से अधिक लाभ रहता है। कोई चिरस्थायी लाभ भी प्राप्त होता है। राज्य–कृपा मिलती हैं। घर में मांगलिक तथा धार्मिक उत्सव होते हैं। स्त्री द्वारा भाग्य में वृद्धि होती है, मित्रों से लाभ रहता है। भाइयों से सहायता तथा प्रेम मिलता है। लम्बी यात्रा देश के अन्दर होती है।

शुक्र चन्द्र लग्न से दशम भाव में जब गोचरवश आया हो तो शरीर में पीड़ा रहती है। मानसिक चिन्ता बढ़ती है। धन की हानि होती है। नौकरी और व्यवसाय में विघ्न आते हैं। शत्रुओं की वृद्धि होती है। कार्यों में असफलता मिलती है। जनसाधारण से विरोध खड़ा हो जाता है। स्त्री वर्ग से दुख की प्राप्ति होती है। सम्बन्धियों से अनबन रहती है। राज्य की ओर से परेशानी रहती है।

शुक्र चन्द्र लग्न से एकादश भाव में जब गोचरवश आता है तब धन की वृद्धि होती है, और जातक का प्रताप बढ़ता है। सभी कार्यों में सफलता मिलती है। उत्तम भोजनादि की प्राप्ति होती है। स्त्री सम्बन्धित सुखों में वृद्धि होती है। स्त्रियों से मित्रता बढ़ने के कारण जातक प्रसन्नता अनुभव करता है। मित्रों का पूर्ण सहयोग प्राप्त होता है।

शुक्र चन्द्र लग्न से बारहवें भाव में जब गोचरवश आता है तो जातक को मित्रों, धन, अन्न तथा विलास के सुगन्धित पदार्थादि की प्राप्ति होती है। यद्यपि जातक का धन बढ़ात है, परन्तु अन्ततोगत्वा उसको कपड़े के समान की हानि उठानी पड़ती है।

शनि गोचरफल

गेचर शनि चन्द्र से लग्न से केवल तीसरे, छठे और ग्यारहवें भाव में शुभ फल करता है। शेष भावों में उसका फल अशुभ होता है।

शनि चन्द्र लग्न में जब गोचरवश आता है तो बुद्धि काम नहीं करती। शरीर निस्तेज रहता है। मानसिक और शारीरिक पीड़ा होती है। भाइयों तथा स्त्री आदि से झगड़ा होता है। शस्त्र और पत्थर से भय रहता है। दूर स्थानों की यात्रा होती है। मित्र और घर हाथ से निकल जाते हैं। सभी कार्यों में असफलता मिलती है। अपमान होता है और कभी

राज्य से बन्धन का भय भी रहता है। आर्थिक स्थिति में बहुत कमजोरी आ जाती है।

शनि चन्द्र लग्न से द्वितीय भाव में जब गोचरवश आता है तब क्लेश होता है और बिना कारण झगड़ा खड़ा हो जाता है। स्वजनों से वैर चलता है। धन की हानि होती है और कार्य सफल नहीं होते। जातक शारीरिक दृष्टि से कमजोर रहता है और उसके लाभ तथा सुख में बहुत कमी आ जाती है। स्त्री को कष्ट रहने और उसकी मृत्यु तक की सम्भावना रहती है। घर छोड़कर बाहर जाना पड़ता है। विदेश यात्रा की भी सम्भावना रहती है।

शनि चन्द्र लग्न से तृतीय भाव में जब गोचरवश आता है तो आरोग्य, पराक्रम और सुख में वृद्धि होती है। हर कार्य में सफलता मिलने के साथ–साथ, धन और नौकरी की प्राप्ति अथवा होती है। जातक स्वयं डरपोक भी हो तो भी उसे शत्रुओं पर विजय प्राप्त होती है और शत्रु उसे धीर वीर ही समझते हैं। जातक को पशु धन की भी प्राप्ति होती है। भूमि प्राप्ति के लिए भी यह उपयुक्त समय होता है।

शनि चन्द्र लग्न से चतुर्थ भाव में जब गोचरवश आता है तब शत्रुओं और रोगों की वृद्धि होती है। स्थान परिवर्तन अथवा तबादला होता है। यात्रा में कष्ट होता है और जातक के सुखों में कमी आती है, यह समय बहुत अपमानजनक सिद्ध होता है। जनता तथा राज्य दोनों द्वारा विरोध होता है। जातक के मन मे ंवंचना (ठगी) और कुटिलता का संचार होता है।

शनि चन्द्र लग्न से पंचम भाव में जब गोचरवश आता है तो बुद्धि में भ्रम उत्पन्न हो जाता है। योजनाएं न बन पाती हैं न सफल होती हैं। जनता से ठगी करने की सम्भावना रहती है। धन और सुख में विशेष कमी आ जाती है। जातक अपना अधिकांश समय दुष्ट प्रकृति की स्त्रियों के साथ व्यतीत करता है। पुत्र की बीमारी अथवा मृत्यु की सम्भावना रहती है। अपनी स्त्री से वैमनस्य बढ़ता है। व्यापार में मन्दी आती है। स्त्री को वायु रोगों की सम्भावना रहती है। पुत्र से हानि होती है।

शनि चन्द्र लग्न से छठे भाव में जब गोचरवश आता है तो धन, अन्न और सुख की वृद्धि होती है। शत्रुओं पर विजय प्राप्त होती है। भूमि, मकान आदि की प्राप्ति का समय होता है। जातक का स्वास्थ्य उत्तम रहता है और उसे स्त्री भोगादि सुखों की प्राप्ति होती है।

शनि चन्द्र लग्न से सातवें भाव में जब गोचरवश आता है तो घर छोड़ना पड़ता है, बार–बार यात्राएं होती हैं। स्त्री रोगी रहती है, उसकी मृत्यु भी सम्भव है। जातक गुप्त रोगों के कारण कष्ट पाता है। धन हानि होती है और मानसिक व्यथा बढ़ती है। यात्रा में कष्ट होता है, और दुर्घटना की सम्भावना रहती है। मान–हानि होती है। धन में कमी आती है। नौकरी अथवा व्यापार छूट जाने तक की नौबत आ जाती है।

शनि चन्द्र लग्न से आठवें भाव में जब गोचरवश आता है तो द्रव्य तथा धन की हानि होती है। कार्य सफल नहीं होते। अपमानित होने का भय लगा रहता है। राज्य की

ओर से भी भय रहता है। पुत्र से वियोग की सम्भावना रहती है। स्त्री की मृत्यु तक की सम्भावना रहती है। जुए और दुष्ट व्यक्तियों की मित्रता के कारण कई प्रकार की परेशानीयां आती हैं।

शनि चन्द्र लग्न से नवें भाव में जब गोचरवश आता है तो दुख, रोग और शत्रुओं की वृद्धि होती है। धर्म के कार्यों से मनुष्य पीछे हठ जाता है अथवा धर्म परिवर्तन कर बैठता है। प्रादेशिक अथवा तीर्थ यात्राएं होती हैं, परन्तु लाभप्रद नहीं होतीं। भ्रातृवर्ग से अनबन रहती है, मित्रों से कष्ट पाता है। लाभ में कमी आ जाती है। भृत्य वर्ग से भी परेशान रहता है। बन्धन एवं आरोपों का भय रहता है।

शनि चन्द्र लग्न से दशम भाव में जब गोचरवश आता है तो नौकरी अथवा व्यवसाय में परिवर्तन होते हैं और उनके सम्बन्ध में विघ्न बाधाएं भी आती हैं। धन का व्यय होता है पर सफलता प्राप्त नहीं होती। जातक पाप कर्म करता है और मानसिक व्यथा सहन करता है। उसे घर आदि से दूर रहना पड़ता है। वह जनता का विरोध भी पाता है। स्त्री से वैमनस्य के कारण उससे पृथकत्व की सम्भावना रहती है। छाती के रोगों की सम्भावना रहती है।

शनि चन्द्र लग्न से एकादश भाव में जब गोचरवश आता है तो बहुत ज्यादा लाभदायक सिद्ध होता है। स्त्री वर्ग से, लोहे आदि से अथवा भूमि से, मशीनरी, पत्थर, सीमेंट, कोयला, चमड़ा आदि से लाभ देता है। रोग से मुक्ति मिलती है। पदोन्नति होती है। भृत्य वर्ग से लाभ रहता है।

शनि चन्द्र लग्न से द्वादश भाव में जब गोचरश आता है तो अपने कुटुम्ब से दूर रहने पर विवश होना पड़ना है। सम्बन्धियों तथा शुभ प्रतिष्ठित लोगों से मतभेद चलता है। धन का व्यय होता है। स्वास्थ्य खराब रहता है। दूर की यात्रा करनी पड़ती है जिसमें दुख उठाना पड़ता है। इस समय धन नाश द्वारा भाग्य पतन का भय रहता है। सन्तान के लिए भी यह समय कष्टप्रद है। सन्तान की मृत्यु तक की संभावना रहती है।

राहु गोचरफल

वराह मिहिर आदि पुरातन आचार्यों, पाराशर आदि ज्योतिषशास्त्र के संस्थापकों के ग्रंथों को देखने से पता चलता है कि गोचर पद्धति में अथवा अष्टम वर्ग में उन्होंने राहु के गोचरफल के सम्बन्ध में कुछ नहीं लिखा। यह तो हम नहीं मान सकते कि ये महान् शास्त्रज्ञ राहु और केतु के अस्तित्व से अनभिज्ञ थे, क्योंकि पाराशर दशा पद्धति में राहु तथा केतु की गणना की जाती है और वर्ष दशा में समावेश है। परन्तु राहु और केतु के प्रभाव को गोचर अथवा अष्टक वर्ग में स्थान न देने का कोई युक्ति कारण नहीं मिलता, जहां तक हम समझते हैं कारण यहीं रहा होगा कि राहु और केतु छाया ग्रह हैं, स्वतंत्र सत्ता रखने वाले ग्रह नहीं। इन ग्रहों का फल उन पर दूसरे ग्रहों अथवा भावों द्वारा डाले गए प्रभाव पर निर्भर करता है। इस सन्दर्भ में महर्षि पाराशर के वृहत्पाराशर होराशास्त्र के 34वें अध्याय का निम्नलिखित श्लोक देखिए–

''यद्भावेश युतौ वापि यद् यद् भाव समागतौ
तत् तत् फलानि–प्रबलौ प्रदिशेतां तमौ ग्रहौ।'' (16)
''यदि केन्द्रे त्रिकोणे वा निवसेतां तमौ ग्रहो
नाथेनान्यतरेणाढ्यौ दृष्टौ वा योग कारकौ।'' (17)

अर्थात् राहु और केतु ये दोनों ग्रह जिस भावेश के साथ अथवा जिस भाव में रहते हैं तदनुसार ही फल करते हैं। राहु और केतु केन्द्र हों और त्रिकोणपति से युत या दृष्ट हों तो भी ये योग कारक होते हैं।

इसलिए इन छायाग्रहों के राजयोग का फल इनके अपने अन्यत्र गिनाए भावों के स्वामित्व द्वारा नहीं कहा गया। राहु और केतु प्रभाव की इस परतन्त्रता का ही फल था कि गोचर पद्धति में इनको सम्मिलित नहीं किया गया। अतः हम समझते हैं कि वास्तव में राहु और केतु का गोचरफल स्वतन्त्र रूप से नहीं कहा जा सकता। तो भी चूंकि इन ग्रहों का अपना प्रभाव भी है क्योंकि 'शनिवत् राहु, कुजवत् केतु' अर्थात् राहु का फल प्रायः शनि जैसा, केतु का मंगल जैसा ही माना जाना चाहिए। इतना कुछ होते हुए भी यवनाचार्य ने राहु के गोचर फल सम्बन्ध में कहा हैः

'हिमगोः पूजंमसादेर्धनम्' कटपयादि चक्र की कुंजी से इसका अर्थ यह है कि राहु का फल चन्द्रमा से 1, 3, 5, 7, 8, 9, तथा 10 स्थानों में शुभ होता है।

अतः नीचे की पंक्तियों में राहु का गोचर फल यवनाचार्य के मत को ग्रहण करते हुए लिखते हैं।

राहु लग्न में यदि गोचरवश आ जावे तो मान में वृद्धि हो, धन सम्पत्ति बढ़े, पुत्रों के तथा अपने धन में भी वृद्धि हो। (चूंकि राहु चन्द्र का शत्रु है, मानसिक व्यथा भी हो)।

कटपयादि संख्या चक्र

क ख ग घ ङ. च छ ज झ ञ	
1 2 3 4 5 6 7 8 9 0	
ट ठ ड ढ ण त थ द ध न	
1 2 3 4 5 6 7 8 9 0	
प फ ब भ म	
1 2 3 4 5	
य र ल व श ष स ह	
1 2 3 4 5 6 7 8	

अतः पू–1, गं–3, मं–4, स–7, द–8, ध–9, न–0 अर्थात् 10।

राहु चन्द्र लग्न से द्वितीय भाव में जब गोचरवश आ जावे तो धन हानि अकस्मात् हो, कुटुम्ब वालों से अनबन रहे। विद्या में हानि हो। शत्रु अधिक उत्पन्न हो जावे। आंख में

कष्ट हो। राहु चन्द्र लग्न से तृतीय भाव में गोचरवश जब आ जावे तो शत्रुओं पर विजय हो, धन का लाभ हो, अस्मात् भाग्य जाग उठे, मित्रों से लाभ रहे।

राहु चन्द्र लग्न से चतुर्थ भाव में जब गोचरवश आता है तो सुख का नाश करता है। जनता में राज्य के विरूद्ध विद्रोह की भावना खड़ी करता है। मकान छुड़वाता है, घर से निकालकर दूर फेंकता है। सम्बन्धियों से कोई सहायता नहीं मिलने देता। सुख में कमी करता है।

राहु चन्द्र लग्न से पंचम भाव में गोचरवश जब आ जावे तो धन ऐश्वर्य में अचाने वृद्धि करता है। सट्टे आदि से लाभ करवाता है। भाग्य में वृद्धि करता है। लाभ में भी वृद्धि होती है परन्तु इसकी चन्द्र पर दृष्टि के कारण मानसिक व्यथा भी होती है।

राहु लग्न से छठे भाव में जब गोचरवश आता है तो दीर्घकालीन रोगों की उत्पत्ति करता है, माता के भाइयों को बीमार करता है। मान की हानि भी करवाता है। इसके समय में धन की हानि भी होती है तथा आय में कमी आ जाती है। आंखों में कष्ट रहता है और कई व्यजनों की प्राप्ति होती है।

राहु चन्द्र लग्न से सप्तम भाव में जब गोचरवश आता है तो व्यापार में अचानक वृद्धि करता है। यात्रादि से धन का लाभ होता है। राज्य की ओर से कृपा में भी वृद्धि होती है, मित्रों से सहायता मिलती है। शरीर में पित्त रोग होने के कारण अथवा वायु दोष के कारण साधारण कष्ट होता है। मन में कलह रहती है।

राहु चन्द्र लग्न से अष्टम भाव में जब गोचरवश आता है तो अकस्मात् धन की वृद्धि होती है, परन्तु विदेश यात्रा का भी संभावना रहती है। भयंकर रोगों की संभावना रहती है।

राहु चन्द्र लग्न से नवम भाव में जब गोचरवश आता है तो अकस्मात् आशातीत लाभ होता है, प्रायः चिरस्थायी होता है। राज्य की ओर से कृपा प्राप्त होती है। मित्रों से सहायता प्राप्त होती है। परन्तु चन्द्र लग्न पर राहु की दृष्टि के कारण मानसिक व्यथा भी होती है।

राहु चन्द्र लग्न से दशम भाव में जब गोचरवश आता है तो गंगादि तीर्थों में स्नान की प्राप्ति होती है। अकस्मात् दान–पुण्य करने को जी चाहता है। मान में अकस्मात् वृद्धि होती है। कार्य सफल होते हैं। परन्तु शत्रु उत्पन्न हो जाते हैं।

राहु चन्द्र लग्न से ग्यारहवें भाव में जब गोचरवश आता है तो शुभ कार्यों में प्रवृत्ति करवाता है। दान–पुण्यादि में रूचि बढ़ती है, परन्तु धन की तथा भाग्य की हानि होती है। पुत्रों को कष्ट पहुंचता है। मित्रों से हानि होती है।

राहु चन्द्र लग्न से द्वादश भाव में जब गोचरवश आता है तो व्यय अधिक होता है। सुख का नाश होता है। घर छोड़ना पड़ता है, बन्धन में पड़न की संभावना रहती है। धन एवं पशु–सुख की हानि होती है।

दशा से मेलापक विचार–

प्रायः देखा गया है कि जब सूर्य गोचर वश शुभ स्थानों में भ्रमण करता है तो व्यक्ति का भाग्योदय एवं राजसेवा करने का सुअवसर मिलता है। ठीक इसी प्रकार से गोचरवश जब पुरूष की जन्मकुण्डली में स्त्रीकारक चन्द्र एवं शुक्र शुभ स्थानों में भ्रमण करते है तो विवाह का योग बनता है। एवमेव शुक्र दाम्पत्य का द्योतक है। अतः विवाह सम्बन्ध के लिए शुक्र का शुभ भावों में गोचरवशात् भ्रमणवशात् विवाह का योग होता है। जहाँ तक मेलापक का प्रश्न है तो विंशोत्तरी दशा से कहीं पर भी मेलापक के विषय में वर्णन नहीं मिलता है। हाँ यदि गोचरवशात् शुभ स्थानों में शुक्र ग्रह का भ्रमण एवं शुक्र की दशा, अन्तर्दशा, प्रत्यन्तर्दशा का होना, सप्तमेश के साथ शुक्र का सम्बन्ध होना एवं लग्नेश के साथ सम्बन्ध होना अथवा सप्तमेश की महादशा में शुक्र का अन्तर या प्रत्यन्तर का होना भी दाम्पत्य सम्बन्धों को प्रगाढ़ करता है। साथ ही साथ विवाह का योग भी बनता है। अतः मेलापक में स्त्रीकारक ग्रहों का विशेष रूप से योगदान रहता है।

–अभ्यास प्रश्न–

सत्य/असत्य प्रश्नों के उत्तर दीजिए–

1. विंशोत्तरी दशा वर्ष में राहु के वर्ष संख्या का योग नहीं होता।
   सत्य/असत्य
2. अष्टोत्तरी दशावर्ष आठ होते हैं।
   सत्य/असत्य
3. सूर्य गोचरवश चतुर्थ, अष्टम एवं द्वादशगत शुभ फल देता है।
   सत्य/असत्य
4. योगिनी दशा का प्रचार पर्वतीय प्रदेशों में होता है।
   सत्य/असत्य
5. दशा के मध्य सभी ग्रहों की अन्तर्दशायें आती हैं।
   सत्य/असत्य

5.4 सारांश–

इस ईकाई में आपने अध्ययन किया होगा कि दशा व्यक्ति को किस प्रकार से उसके भूत–भविष्य में तथा वर्तमान समय चल रही स्थिति के विषय में सहयोग प्रदान करती है। व्यक्ति जीवन में अपने कर्मों के अनुसार, सुख–दुख एवं भाग्यशाली होता है। उसको राजघर में पैदा होना या एक भिखारी के घर में जन्म लेना अथवा सम्पूर्ण जीवन में रोगी रहना, अथवा हमेशा उच्चस्थ पदों पर आसीनस्थ होते हुए राजतुल्य सुख–संसाधनों का भोग करना यह सभी व्यक्ति के स्वयं के कर्मों के अधीन हैं। ज्योतिष शास्त्र का अहम योगदान है कि उपर्युक्त सभी विषयों को कैसे जाना जाए, वहीं आपने इस ईकाई में अध्ययन किया होगा। दशा व्यक्ति के जन्म–जन्मान्तरों में शुभाशुभ कर्मों के फल का बोध कराती है। और गोचर का अहम योगदान है वर्तमान गतिस्थिति से, वर्तमान स्थिति को

परिवर्तित करने में आप यदि कर्मयोगी हों तो गोचर के माध्यम से अपने अशुभ समय को शुभता में परिवर्तित कर सकते है एवमेव यदि शुभ समय चल रहा हो तो उसको और शुभ बनाया जा सकता है। मानव जीवन में दशा एवं गोचर की अहम भूमिका है। जिन लोगों का जन्म पत्र नहीं है, उनका गोचर कालीन ग्रहों के माध्यम से मिलान किया जाता है।

5.5 पारिभाषिक शब्दावली–

दिवजातः – दिन में पैदा होना।
विंशोत्तरी – बीस है जिसके उत्तर में।
गुर्जरे – गुजरात।
अष्टोत्तरी – 108 वर्ष
गोचर – गो़चर = चाल या चलना।
गो – गाय।
राशिनाथ – राशिस्वामी।
सव्ययान् – द्वादशभाव।
क्षीण – पापकर्ता।
वैमन – विषमता।
त्रिकोणमति – प्रथम, पंचम, नवम भाव के स्वामी।
यदभावेश – भावपति के साथ।

5.6 अभ्यास प्रश्नों की उत्तरमाला–

अति लघु उत्तरीय प्रश्नों की उत्तरमाला–

1. 120 वर्ष 2. 108 वर्ष 3. योगिनी 4. अं. च. भौ. रा. जी. शं. बु. के. शु
5. तीन–तीन नक्षत्रक्रम से दशा का भोग होता है।

लघु उत्तरीय प्रश्नों की उत्तरमाला–

1. गोचर शब्द का अर्थ है ग्रहों का एक राशि से दूसरी राशि में जाना अथवा ग्रहों की चलन प्रक्रिया।
2. गाय 3. विवाह, ग्रह प्रवेश एवं मांगलिक कार्य 4. सूर्यादि सात ग्रह एवं आठवां लग्न
5. तीसरे, छठें एवं एकादश भावों में।
6. 1,3,6,7,10,11 भावों में। 7. 3,6,10,11।

बहु विकल्पीय प्रश्नों की उत्तरमाला–

1. स। 2. अ। 3. स। 4. अ। 5. स।

सत्य/असत्य प्रश्नों की उत्तरमाला–

1. असत्य। 2. असत्य। 3. असत्य। 4. सत्य। 5. सत्य।

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची–

1. फलदीपिका, व्याख्याकार– गोपेश कुमारओझा, (1981) मोतलाल बनारसीदास, दिल्ली।
2. कर्मठगुरूः, मुकुन्दबल्लभ रचित, (1982) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
3. क्यों (धर्म दिग्दर्शन पूर्वार्थ), स्वामि करपात्री जी महाराज रचित, (2067) माधव विद्या भवन श्रीधाम 150, पुरानी गुप्ता कालोनी दिल्ली–9।
4. क्यों (धर्म दिग्दर्शन उत्तरार्ध)।
5. ताजिक–नीलकण्ठी, पं. सीताराम शर्माकृत, (1992) चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी।
6. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द शास्त्री रचित, (2008) भारतीय ज्ञानपीठ 18 इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड नई दिल्ली–110003
7. संस्कार प्रकाश, डा. भवानी शंकर त्रिवेदी कृत, (1986) श्री लालबहादुरशास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ शहीद जीतसिंह मार्ग नई दिल्ली 110016
8. ज्योतिष–रत्नाकार, देवकीनन्दन सिंह, (1983) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
9. भारतीय ज्योतिष विज्ञान, डा. सुरकान्त झा कृत, 2006, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी के0 37/118 गोपाल मन्दिर लेन वाराणसी।
10. सन्तान सुख सर्वांग चिन्तन, मृदुलात्रिवेदी कृत, (1990) 24 महानगर विस्तार ई0–40 कारपोरेशन क्वार्टर के सामने पीली कालोनी लखनऊ 226006
11. मुहूर्त चिन्तामणि– गोविन्द दैवज्ञ विरचित (2005) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवहारनगर दिल्ली।
12. वृहद्पाराशर होराशास्त्र पं. पद्मनाभ शर्मा (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवहारनगर दिल्ली।।
13. वृहद्जातकम (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवहारनगर दिल्ली।

5.8 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री–

1. मुहूर्त चिन्तामणि– गोविन्द दैवज्ञ विरचित (2005) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवहारनगर दिल्ली।
2. फलदीपिका, व्याख्याकार– गोपेश कुमार ओझा, (1981) मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
3. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द शास्त्री रचित, (2008) भारतीय ज्ञानपीठ 18 इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड नई दिल्ली 110003
4. वृहद्पाराशर होराशास्त्र पं. पद्मनाभ शर्मा (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान 38यू0ए0 बंगलो रोड जवहारनगर दिल्ली।

5.9 निबन्धात्मक प्रश्न–

1. विंशोत्तरी दशा पर प्रकाश डालें क्यों आवश्यक है?
2. अष्टोत्तरी दशा कितने वर्षों की होती है। इसका सामान्य जीवन पर क्या प्रभाव

पड़ता है?

3. गोचर वश सूर्य कौन–कौन से भावों में शुभ फल करता है?
4. मंगल का गोचर के अनुसार फल लिखें।
5. दशा का मेलापक में क्या योगदान है?

खण्ड – 3
गोचर एवं शनि ढैय्या व साढ़ेसाती विचार

इकाई – 1 गोचर विचार एवं ग्रहों के गोचर फल

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 गोचर परिचय
    1.3.1 गोचर फल विचार
    1.3.2 मंगल का विभिन्न भावों में गोचर फल
1.4 अन्य ग्रहों के गोचर फल
1.5 सारांश
1.6 शब्दावली
1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.9 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई डीपीजे पाठ्यक्रम के तृतीय प्रश्नपत्र के तृतीय खण्ड की प्रथम इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई का शीर्षक है – गोचर विचार एवं ग्रहों के गोचर फल। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने मेलापक एवं दशा का ज्ञान कर लिया है। अब आप गोचर के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।

गोचर का सम्बन्ध तात्कालिक आकाशस्थ ग्रहों की स्थिति से है। वर्तमान समय में ग्रहों का चलन की स्थिति हम गोचर के माध्यम से जानते है। इस इकाई में गोचर के फल सम्बन्धी आवश्यक बिंदुओं को स्पष्ट कर भविष्यफल कथन में गोचर महत्व एवं विभाजन को वर्णित किया गया है। जन्म लग्न, चन्द्र लग्न व सूर्य लग्न में गोचर का शरीर, मन व आत्मा की दृष्टि से प्रभाव होता है। इस अध्याय में आप चन्द्र से गोचर के प्रभाव का अध्ययन करेंगे।

गोचर का अर्थ तात्कालिक ग्रहीय स्थिति से है। ग्रह जहॉ जिस स्थान पर होते है, तदनुसार फल देते है। इस प्रकार गोचर की स्थिति से ग्रहों को जानकर तात्कालिक फलादेश करने में सहायता मिलती है।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के बाद आप–

1. गोचर का अर्थ सम्यक् रूप से जान जायेंगे।
2. गोचर के प्रभावों को समझ लेंगे।
3. ग्रहों के गोचर फल को जान लेंगे।
4. सूर्य, चन्द्र मंगलादि ग्रहों के गोचर फल का अवबोधन कर लेंगे।
5. गोचर में सूर्यादि ग्रहों का फल लिख सकेंगे।
6. चन्द्र से द्वादश भावों में ग्रह गोचर फल का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

1.3 मुख्य भाग

गोचर परिचय –

आकाशस्थ ग्रह अपने मार्ग व गति से सदैव भ्रमण करते हुए एक राशि से दूसरे राशि में प्रवेश करते हैं, यह ज्योतिष शास्त्रानुसार सर्वविदित है। जन्म समय में जो ग्रह भ्रमण करते हुए जिस राशि में स्थित पाये जाते हैं उन्हें जन्मकालीन ग्रह कहते हैं और वर्तमान समय में अपने गति से जिस राशि में भ्रमण करते हुए दिखलाई पड़ते हों, उन्हें गोचर ग्रह कहते हैं।जन्म ग्रहों के फल मनुष्य को जीवन पर्यन्त मिलता है, परन्तु गोचर ग्रहों के फल, वे जितने समय तक जिस राशि में स्थित होते हैं उतने ही काल तक मिलता है।

प्रत्येक मानव को अपनी जन्मकुंडली से भावी समय में होने वाली घटनाएं तथा उन

घटनाओं का निश्चित समय जानने की प्रबल इच्छा होती है। प्रत्येक ज्योतिषी जन्मकुंडली के बारह स्थानों के ग्रह उनके परस्पर योग तथा षड्वर्ग बल आदि का विचार कर उस मनुष्य को जीवन मे कैसे फल मिलेंगे, इसकी रूपरेखा बना लेता है। फिर ये फल जीवन में कब किस समय मिलेंगे यह बताने का प्रयत्न करता है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जातक का जीवन सम्बन्धि फलादेश कहना अपने आप में अद्वितिय विषय है। फलादेश कर्म में काल निर्णय ही सर्वोपरि होता है, जिसमें गोचर की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है।

हमारे पुरातन आचार्यों ने 42 प्रकार की दशाओं का वर्णन किया है, गोचर ग्रहों के फल बतलाया है, ताजिक, मुंथा, अंगिरस पद्धतियां बताई है। ग्रहों के भ्रमण (जन्मस्थ शनि से गोचर शनि कौन से स्थान पर है, जन्मस्थ गुरू से गोचर गुरू कौन से स्थान पर है इत्यादि) के फल बतलाये हैं। गोचर पद्धति का महत्व सर्वमान्य है।

गोचर का अर्थ है– ग्रहों का चलन अर्थात ग्रहों का परिवर्तित प्रभाव। जन्म कुण्डली में ग्रहों का एक स्थिर प्रभाव है और गोचर में ग्रहों का उस समय से परिवर्तित प्रभाव दिखलाई पड़ता है।

जन्मकुण्डली में योग की प्रधानत होती है। अर्थात् जो योग नहीं दे सकता वह दशार्न्तदशा तथा गोचर कितना ही शुभ हो, द्वारा भी अनुकूल नही मिल पाता। मान लें कि जातक की कुण्डली में विवाह का योग नहीं है, तो अनुकूल दशान्तर दशा व गोचर कभी भी विवाह नहीं होने दे सकते। पहले विवाह का योग होना चाहिये, फिर उसके अनुसार दशान्तर दशा होनी चाहिये, तीसरे गोचर के अनुकूल होते ही जातक का विवाह हो जाने की सम्भावना होती है। किसी भी घटना के लिये पहले योग होना चाहिये। फिर उसके अनुकूल दशान्तर दशा होनी चाहिये और तृतीय गोचर भी अनुकूल होना चाहिये ।तब जाकर जातक के जीवन में घटना होगी अन्यथा नहीं। इस प्रकार हमें अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि गोचर का स्थान तृतीय है। गोचर योग तथा दशान्तर पर निर्भर करता है। गोचर स्वयं में कोई फल नहीं दे सकता।

गोचर का फल चन्द्र, सूर्य या लग्न में से किससे देखा जाना चाहिये? ग्रह जिस राशि में गोचर करते हैं उसके अनुसार मनुष्य को जीवन में कब कैसे फल मिलेंगे यह सूचित किया जाता है। पुराने आचार्यों ने लग्न कुंडली में चंद्र जिस राशि में हो उस राशि को प्रधान माना है। उस राशि से भ्रमण करने वाले ग्रह किस स्थान पर हैं यह देख कर उस समय का फलादेश निश्चित किया जाता है।

पत्रिका में लग्न कुंडली लिखने की पद्धति भी सैकड़ो वर्षों से चल रही है। यहां यह बात विचार करने योग्य है कि लग्न कुंडली से पूरे जीवन में जन्म से मृत्यु तक जो फल मिलेंगे उन्हें स्थूलतः जाना जाता है। जन्म के समय आकाश में कौन से ग्रह कहां थे तथा उनका परस्पर संबंध क्या था तथा उनके कैसे फल मिलते हैं यह सब लग्न कुंडली से ज्ञात होता है। इससे प्रत्येक स्थान के निश्चित फल मालूम होते है। राशि कुंडली से नहीं।

ज्योतिष शास्त्र में तीन तरह के लग्न प्रचलित है : जन्म लग्न, चन्द्र लग्न व सूर्य लग्न। यह परिवर्तित प्रभाव हमें कहां से देखना चाहिये। जन्म लग्न से या चन्द्र लग्न से या सूर्य लग्न से? लग्न का अपना–अपना महत्व है। लग्न तन का, चन्द्र मन का और सूर्य आत्मा का प्रतिनिधि है। जातक इन तीनों के समन्वय से बना है। आत्मा शरीर के बिना अपनी अभिव्यक्ति नहीं कर सकती। शरीर का नियन्त्रण मन के हाथ में है, मन ही शरीर की ज्ञानेन्द्रियों व कर्मेन्द्रियों पर नियंत्रण करता है। इसलिये चन्द्र लग्न का महत्व बढ़ जाता है। मन्त्रेश्वर ने भी फलदीपिका में चन्द्र लग्न से गोचर का विचार करने का निर्देश दिया है।

सब प्रकार के लग्नों (जन्म लग्न, सूर्य लग्न, चन्द्र लग्न) के होते हुए भी गोचर विचार में प्रधानता चन्द्र लग्न की ही है। बृहत् पराशर होरा शास्त्र में भी चन्द्र लग्न व जन्म लग्न दोनों को ही महत्वपूर्ण बतलाया है और दोनों लग्नों से फलित करने का आदेश दिया है। आधान लग्न सिद्धान्त के अनुसार यह पाया गया है कि चन्द्रमा जन्म लग्न में उसी भाव में गोचर करता है जिस भाव में वह गर्भाधान के समय होता है। यहां महत्व चन्द्र का है। दशा व अन्तर दशा के समय पर दशा नाथ जिस राशि में बैठा होता है उसको लग्न मान कर दशा के शुभ व अशुभ का विचार होता है। अर्थात् लग्न बारह हो जाते है। इसलिये भी चन्द्र लग्न का महत्व बढ़ जाता है।

गोचर अष्टम वर्ग पद्धति का एक अंग है। अष्टम वर्ग लग्न व सात ग्रहों को मिला कर बनता है। अष्टम वर्ग में देखा जाता है कि ग्रह कहां–कहां शुभ व अशुभ फल दे सकते है। यहां पर शुभ व अशुभ फल ग्रहों की परस्पर स्थिति, मैत्री व नैसर्गिक शुभता या अशुभता का ध्यान रखा जाता है। दो ग्रहों का परस्पर शुभत्व व अशुभत्व देगा न कि लग्नों का। लग्न तो बारह हो जाते हैं। चन्द्रमा एक ग्रह है। इस प्रकार चन्द्रमा से कौन ग्रह शुभ हैं कौन ग्रह अशुभ यह देखा जाता है। इसलिए महर्षियों ने गोचर फल निर्णय के लिये चन्द्र को चुना जो ग्रह होने के साथ–साथ एक लग्न भी है और लग्न पर नियन्त्रण भी रखता है।

दशा का क्रम भी चंद्रमा के नक्षत्र के स्वामी से आरम्भ होता है अर्थात् जीवन का आरम्भ भी चंद्रमा से ही होता है। चन्द्रमा ही जातक के शैशव काल का कारक है। इसलिये बालारिष्ट में चन्द्रमा की कुण्डली में स्थिति महत्वपूर्ण है। चन्द्रमा से ही गणान्त आदि देखा जाता है। चन्द्रमा से ही तिथि का महत्व है। तिथि चन्द्रमा से बनती है। दिन का नक्षत्र भी चन्द्रमा से ही देखा जाता है। जिस नक्षत्र में चन्द्रमा होता है वही नक्षत्र दिन का भी होता है।

इस प्रकार हम पाते हैं कि वैदिक ज्योतिष में चन्द्रमा का बहुत महत्व है। तिथि, नक्षत्र, मुहूर्त्त, दशा आदि सब क्रियाकलाप चन्द्रमा से ही देखे जाते है। इसलिये गोचर में भी चन्द्रमा का महत्व बढ़ जाता है। इसलिए महर्षियों ने गोचर को भी चन्द्रमा से देखने का आदेश दिया।

क्या केवल गोचर से ही फलित कहा जा सकता है? गोचर फलित का एक प्रभावशाली अंग है और फलित में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। परन्तु यह सब कुछ नहीं होता। हमारे महर्षियों ने यह स्पष्ट शब्दों में कहा है कि जो कुछ कुण्डली में नहीं, वह गोचर नहीं दे सकता। गोचर में ग्रह चाहे कितना ही अच्छा योग बनाते हों यदि वह योग कुण्डली में नही ंतो वह गोचर नहीं दे सकता।

गोचर तो दशा व अन्तर दशा के अधीन भी कार्य करता है। यदि दशा व अन्तर दशा ऐसे ग्रहों की चल रही हों जो जातक के लिये अशुभ हों परन्तु गोचर शुभ हो तो गोचर का शुभ फल जातक को नहीं मिलता। गोचर में यह देखा जाता है कि जन्म कुण्डली की ग्रह स्थिति से वर्तमान गोचर कुण्डली में ग्रह स्थिति अच्छी या बुरी किस स्थिति में है। जो ग्रह जन्म कुण्डली में उत्तम स्थान में पड़ा हो वह गोचर में शुभ स्थान पर आते ही शुभ फल देगा। जो ग्रह जन्म कुण्डली में अशुभ हो वह यदि गोचर में शुभ भी होगा तो भी शुभ फल नहीं देगा। गोचर के ग्रह जन्म के ग्रहों से जिस समय अंशात्मक या आसन्न योग करते है उस समय ही उनका ठीक फल प्रकट होता है। मान लें कि शुक्र वृष में 180 पर है। गोचर में शुक्र जब वृष 180 से योग बनायेगा तब ही शुक्र का अच्छा या बुरा फल प्रकट होगा। इस प्रकार गोचर के ग्रह जन्म के ग्रहों के अधीन हुए।

यदि गोचर का ग्रह अशुभ भाव में हो जन्म कुण्डली में वह ग्रह उच्च, स्वक्षेत्री हो तो गोचर में वह ग्रह अशुभ फल नहीं देता। गोचर के नियमों के आधार पर हम कह सकते है कि गोचर का फल जन्म कुण्डली की ग्रह–स्थिति पर निर्भर करता है। यदि गोचर के अन्य नियमों का अध्ययन करें तो हम पायेंगे कि गोचर दशा व अन्तर दशा के भी अधीन है। एक ही भाव के कई फल होते है। जैसे– चतुर्थ भाव का कारकत्व माता, शिक्षा, वाहन, जमीन, खेती–बाड़ी, सुख इत्यादि। इनमें से कौन सा फल फलित होना है यह सब दशा व अन्तर दशा पर निर्भर करता है। गोचर का फ लवही होता है जो दशा व अन्तर दशा चाहती है। अर्थात् गोचर का फल दशा व अन्तर दशा के ऊपर निर्भर करता है। गोचर का फल तारा पर भी निर्भर करता है। 1,3,5,7 तारा जन्म नक्षत्र से अशुभ होती है।

गोचर अष्टक वर्ग का एक अंग है। अष्टक वर्ग में ग्रहों और लग्न को केन्द्र मानकर उनके शुभाशुभ स्थानों की गणना की जाती है। प्रत्येक ग्रह का अष्टक वर्ग चक्र बनाया जाता है और उससे गोचर के ग्रहों का शुभाशुभ फल कहा जाता है। गोचर का फल अष्टक वर्ग बिन्दुओं पर भी निर्भर करता है।

समस्त ग्रह गोचर में एक स्थिति बनाते है, एक योग बनाते हैं और उस योग के अनुसार गोचर के ग्रहों का फल शुभाशुभ होता है। केवल एक ग्रह के फल का कोई इतना महत्व नहीं है। वह तो समस्त ग्रह मण्डल का एक अंग मात्र है। जैसे हम शरीर न तो सिर को कह सकते है न आंखों को, न नाक को, और न ही अन्य भिन्न–भिन्न अंगों को। सभी अंगों का सम्मिलित रूप शरीर है। इसी प्रकार गोचर का फल भी समस्त ग्रह मण्डल की एक विशेष स्थिति का नाम है, न कि शनि का या गुरू आदि अन्य ग्रहों का। इसलिए शनि

का या गुरू का प्रत्येक चक्र जातक को प्रत्येक समय भिन्न–भिन्न फल देता है। इसलिए यह कहना उचित नहीं कि केवल गोचर के आधार पर फल कहा जाना चाहिए।

गोचर ग्रह का फल देखते समय पहले कुंडली में वह ग्रह शुभ है या अशुभ यह समझ लेना चाहिए। अनुभव ऐसा है कि कुंडली में प्रथमतः जो ग्रह शुभ दिखता है उसका फल कभी–कभी बिल्कुल नहीं मिलता क्योंकि वह ग्रह उस कुंडली में वास्तव में शुभ नहीं होता। उदाहरणार्थ किसी मनुष्य की कुंडली में वृषभ लग्न है तथा दशम में गुरू है, यहां सर्वसाधारण ज्योतिषी मानता है कि दशमस्थ गुरू शुभ होता है अतः इसके शुभ फल मिलने चाहिये, किंतु अनुभव में शुभ फल नहीं मिलते। वृषभ लग्न के लिए गुरू अष्टमेश व लाभेश है, अतः इसके अशुभ फल मिलते हैं, या वह निष्फल होता है। इसी प्रकार अन्य लग्नों के लिए भी ग्रहों का विचार करना पड़ता है।

बारह लग्नों के लिए शुभाशुभ ग्रह

मेष लग्न :

सूर्य, गुरू शुभ तथा शनि, शुक्र, बुध अशुभ होते हैं।

वृषभ लग्न :

शनि, बुध, शुभ तथा गुरू, शुक्र, चंद्र अशुभ होते हैं।

मिथुन लग्न :

शुक्र, बुध शुभ तथा मंगल, गुरू, सूर्य अशुभ होता हैं

कर्क लग्न :

मंगल, गुरू, शुभ तथा शुक्र, शनि, बुध अशुभ होते हैं।

सिंह लग्न :

मंगल, गुरू शुभ तथा शुक्र, शनि, बुध अशुभ होते हैं।

कन्या लग्न :

शुक्र, बुध शुभ तथा मंगल, गुरू, चंद्र अशुभ होते हैं।

तुला लग्न :

शनि, बुध शुभ तथा सूर्य, गुरू, मंगल अशुभ होते हैं।

वृश्चिक लग्न :

सूर्य, चंद्र विशेष शुभ गुरू शुभ, बुध, शुक्र शनि अशुभ होते हैं।

धनु लग्न :

शुक्र अशुभ, बाकी सब ग्रह शुभ होते हैं।

मकर लग्न :

बुध, शुक्र शुभ तथा मंगल, गुरू, चंद्र अशुभ होते हैं।

कुंभ लग्न :

शुक्र शुभ तथा मंगल, गुरू, चंद्र अशुभ होते हैं।

मीन लग्न :

चंद्र, मंगल, गुरू शुभ तथा सूर्य, बुध, शुक्र शनि अशुभ होते हैं।
उपर्युक्त शुभाशुभ ग्रह देखकर ही गोचर ग्रहों के फल निर्धारित करने चाहिए।

1.3.1 गोचर ग्रहों के फल, समय –

किसी भी राशि में गोचर ग्रह प्रवेश करने के पश्चात् वे प्रत्येक राशि में कितने काल तक स्थित रहते हैं और वे अपना शुभाशुभ फल देने के लिये किस समय सामर्थ्यवान् होते है यह निम्नलिखित चक्र के अनुसार समझा जा सकता है –

ग्रह	स्थिति काल	फल देने का समय
सूर्य	1 मास	प्रथम पॉच दिन
चन्द्र	सवा 2 दिन	अन्तिम तीन घटी
मंगल	डेढ़ मास	प्रथम आठ दिन
बुध	1 मास	सर्वकाल
गुरू	13 मास	मध्यकाल के दो महीना
शुक्र	1 मास	मध्य सात दिन
शनि	30 मास	अन्तिम छः मास
राहु	18 मास	अन्तिम दो मास
केतु	18 मास	अन्तिम दो मास

जन्मकुंडली में किसी विशेष फल का काल निर्णय करने के लिए वर्ष कुंडली बनानी पड़ती है। वर्षफल की विभिन्न रीतियों में दिन वर्ष पद्धति मुख्य और सही फल बतलाने वाली है। दिन वर्ष पद्धति में भी गोचर ग्रहों का विचार करना पड़ता है। ग्रहों के दृष्टी योग अच्छे हों और गोचर ग्रह भी अच्छे हों, तो शुभ फल निश्चय मिलते है। कुंडली में योग अच्छे हों किंतु गोचर ग्रह अनिष्ट हों तो शुभ फल उतने नहीं दिखाई पड़ेंगे, गोचर ग्रहों के अशुभ फलों का अनुभव अधिक आयेगा। जन्मकुंडली में कुछ स्थान विशेष होते हैं, इन स्थानों से रवि, शनि, गुरू, मंगल का भ्रमण होते समय कुछ न कुछ स्पष्ट दिखने वाले फल मिलते हैं। जन्मलग्न का भाव प्रारंभ, दशम स्थान का मध्य, जन्मकालीन रवि, गुरू और चंद्र ये महत्वपूर्ण अंश है। इन स्थानों से गोचर ग्रहों के युति प्रतियोग महत्वपूर्ण फल देते हैं।

चंद्र प्रत्येक मास में बारहों राशियों में भ्रमण कर लेता है अतः साधारण रूप में गोचरित चंद्र के विशेष फल अनुभव में नहीं आते। किंतु बीमारी के समय या किसी विपत्ति के समय गोचरित चंद्र का काफल महत्वपूर्ण होता है। चंद्र का भ्रमण किसी भी राशि में सवा दो दिन ही रहता है। रवि का दशम स्थान से भ्रमण महत्वपूर्ण रहता है। रवि जिस स्थान से भ्रमण करता है उस स्थान के फल प्राप्त होते हैं। जन्म मास से 5, 9, 10वें मास साधारणतः शुभ और हितकर रहते हैं। इनमें स्वास्थ्य अच्छा रहता है। शुक्र का भ्रमण लग्न से 1, 2, 5, 7, 9 स्थानों में हो तो शुभ फल देता है। अन्य स्थानों में इसका महत्व नहीं है। लग्न में गोचर शुक्र मन को शांति देता है, स्वास्थ्य अच्छा रहता है, ये दिन आनंद और

मनोरंजन के होते है। दसूरे स्थान में शुक्र परिवार के लोगों से संपर्क कराता है, धन के व्यवहार अच्छे चलते हैं। संगीत आदि से मनोरंजन होता रहता है। पंचम स्थान में शुक्र ऐश्वर्य के सुख देता है। सप्तम स्थान पत्नी का है, यहां शुक्र का भ्रमण वैवाहिक सुख अच्छी तरह देता है। नवम में शुक्र का भ्रमण नौकरी या व्यवसाय में सफलता देता है। इन तीन ग्रहों से मंगल के परिणाम अधिक तीव्र होते है। मंगल एक राशि में डेढ़ (45 दिन) मास रहता है, वक्री होने पर 5 मास तक एक राशि में रहता है। वक्री मंगल 6, 8, 12 इन अनिष्ट स्थानों के अनिष्ट फलों की संभावना रहती है। गुरू, शनि व चंद्र जितना मंगल का भ्रमण महत्वपूर्ण नहीं है।

1.3.2 मंगल का विभिन्न भावों में गोचर फल

लग्न से मंगल का भ्रमण काम करने का उत्साह बढ़ाता है, गुस्सा जल्द ही आता है। जन्मस्थ शनि लग्न में हो तो शरीर को कष्ट होता है। जन्मस्थ गुरू लग्न में हो तो मंगल का लग्न में भ्रमण आरोग्य देता है। जन्मस्थ चंद्र लग्न में हो तो झगड़े होते है। मकर या मेष लग्न हो तो गोचरित मंगल लग्न में आने पर प्रवास होगा, वृश्चिक लग्न हो तो आरोग्य अच्छा रहेगा, कर्क लग्न हो, मंगल का लग्न में गोचर हो तो रोग होंगे।

द्वितीय स्थान में से मंगल का भ्रमण खर्च बढ़ाता है। जन्मस्थ शनि इस स्थान में हो तो कर्ज होता है, आर्थिक नुकसान होता है। यहां मेष, वृश्चिक या मकर राशि हो तो मंगल का भ्रमण आमदनी बढ़ाता है।

तीसरे स्थान से मंगल का भ्रमण प्रवान के लिए बुरा होता हैं यहां धनु राशि हो तो इससे मंगल भ्रमण के समय की गई यात्रा में कष्ट होता है, दुर्घटना संभव होती है। मेष, कर्क, तुला या मकर राशि तृतीय में हो तथा मंगल का गोचर हो तो नौकरी पेशा लोगों का स्थानांतर कराता है। यहां वृश्चिक राशि हो तो मंगल का भ्रमण कुछ बातें इच्छानुसार पूरी होती है। अन्य राशियों में कुछ उतावलापन स्वभाव में आता है।

चतुर्थ स्थान पर मंगल का भ्रमण गृह सुख अच्छा नहीं देता। जन्मस्थ शनि, राहु या मंगल यहां हो तो घर के काम की कुछ ना कुछ चिंता रहती है। किसानों के लिए चतुर्थ में वृषभ, कर्क, कुंभ या तुला राशि हो तो मंगल के भ्रमण के समय खेती के बैल आदि अच्छे नहीं मिलते, उस संबंध में कुछ नुकसान होता है। मेष, मकर, वृश्चिक राशि चतुर्थ में हो तो मंगल का भ्रमण अनिष्ट नहीं होता है। इस स्थान पर मंगल के गोचर का विशेष महत्व नहीं है।

पंचम स्थान पर मंगल का गोचर खर्च बढ़ाता है, संतान का आरोग्य ठीक नहीं रहता। शनि, मंगल, हर्षल या राहु इस स्थान में हो तो संतान के स्वास्थ्य के बारे में चिंता होती हैं कर्क, मिथुन, तुला या कुंभ राशि पंचम में हो तो व्यापारी लोगों को मंगल गोचर के समय सट्टा या वायदा व्यवहार में नुकसान होता है। पंचम में मंगल का भ्रमण साधारणतः कामुकता बढ़ाता है।

षष्ठ स्थान में से मंगल का भ्रमण सभी राशियों में अशुभ होता है। थकावट बहुत होती है, स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता, नौकर अच्छे नहीं मिलते। इस स्थान में शनि हो तो मंगल भ्रमण के समय निश्चित रूप से अस्वस्थता रहती है। सिंह या धनु राशि यहां तो तथा गोचरित गुरू या शनि अनिष्ट हो तो इस स्थान में मंगल का गोचर चारों से या आग से नुकसान कराता है।

सप्तम स्थान में से मंगल का गोचर कोर्ट के कामों तथा साझेदारी के व्यापार के लिए अशुभ होता है। साझेदारी में झगड़ा होता है, शत्रुओं से कष्ट होता है। यहां मंगल का गोचर स्त्री का स्वास्थ्य बिगाड़ता है।

अष्टम स्थान में से मंगल के गोचर का विशेष महत्व नहीं होता। किंतु यदि पहले से कोई बीमारी हो तो इस गोचर के दौरान वह ठीक नहीं होती, बल्कि तीव्र हो जाती है।

नवम स्थान में मंगल का गोचर उद्योगी प्रवृत्ति बढ़ाता है। यहां मकर, कर्क या मेष राशि हो और मंगल का गोचर हो तो प्रवास होता है। जन्मस्थ शनि नवम में हो तो इस पर से मंगल का गोचर बदनामी का कारण बनता है, सार्वजनिक कामों में निंदा होती है। यहां वृश्चिक राशि हो और मंगल का गोचर हो तो उद्योग–व्यवसाय बढ़ता है।

दशम स्थान में अनुकूल राशि हो तो मंगल का गोचर व्यापार, उद्योग बढ़ाता है, आढ़त का काम अच्छा चलता है। नौकरी पेशा लोगों के लिए उच्च अधिकारी अनुकूल रहते हैं। काम सुचारू रूप से होते हैं। यहां प्रतिकूल राशि हो और जन्मस्थ शनि या राहु दशम में हो तो मंगल का गोचर नौकरी में संकट पैदा करता है, मानहानि के योग बनते हैं, जन्मस्थ ग्रह अनिष्ट हो तो इस समय नौकरी में पदावनति होना, व्यापार में साख कम होना, हुंडियों का भुगतान न कर पाना आदि संकट आते हैं।

एकादश स्थान में से मंगल का गोचर परिणामकारक नहीं होता। यहां वृषभ या तुला राशि हो तो कुछ आमदनी बढ़ती है। शत्रु राशि से या शत्रु ग्रह पर से यह गोचर हो तो मित्रों या परिचितों से कष्ट होता है, खर्च ज्यादा होता है।

द्वादश स्थान में से मंगल के गोचर के समय गुप्त शत्रु पैदा होते हैं। यहां जन्मस्थ शनि या बुध से अथवा कर्क, वृषभ, तुला, धनु राशि से मंगल का गोचर बहुत अशुभ होता है। इस समय सरकारी मामलों में झंझटों से कष्ट होता है।

अभ्यास प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. गोचर के अनुसार सूर्य का स्थिति काल होता है –
   (अ) 1 मास (ब) 2 मास (स) 3 मास (द) 4 मास ।
2. सिंह लग्न के लिए शुभ ग्रह है–
   (अ) मंगल, (ब) शनि, (स) मंगल व शनि, (द) इनमें से कोई नहीं।
3. मकर लग्न में मंगल का द्वितीय स्थान से गोचर है–
   (अ) व्यय कारक, (ब) धन कारक, (स) रोग कारक (द) उपरोक्त सभी।

4. गोचर सूर्य के शुभ स्थान हैं–
   (अ) 2, 4, 8 (ब) 3, 6, 9, 12 (स) 3, 6, 10, 11 (द) 1, 5, 7
5. गोचर बुध के अशुभ स्थान हैं–
   (अ) 2, 4, 6 (ब) 8, 10, 11 (स) 1, 3, 5 (द) इनमें से सभी।

1.4 अन्य ग्रहों के गोचर फल

गोचर चंद्र 1, 2, 3, 6, 7, 10, 11 इन स्थानों में हो तो लाभ होता है, धन मिलता है, मित्रों से भेंट होती है, बुद्धि अच्छी बढ़ती है तथा देव–ब्राह्मणों की भक्ति होती है। गोचर चंद्र 4, 5, 8, 9, 12 इन स्थानों में हो तो धन हानि, चोर या आग से भय, मारपीट या कारावास, नुकसान, वियोग, भय, दुःख ये फल मिलते।

गोचर सूर्य के फल

गोचर सूर्य 3, 6, 10, 11 इस स्थानों में होता है उस समय धन, कीर्ति, राजदरबार में सम्मान, सब कार्यो में सफलता, अच्छी बुद्धि, स्वजन संबंधियों का सुख तथा पुण्य की वृद्धि ये फल प्राप्त होते हैं। गोचर सूर्य 1, 2, 4, 5, 7, 8, 9, 12 इन स्थानों में हो तो रोग, शोक, भय, अग्नि से कष्ट, चिंता, प्रवास, धन की हानि ये फल प्राप्त होते हैं।

दोष परिहार – अनिष्ट सूर्य के प्रभाव का शमन करने के लिए सदाचार, सत्यभाषण के साथ–साथ सूर्य को अर्घ्यदान, सूर्याथर्वशीर्ष का पाठ, आदित्यहृदयस्तोत्र का पाठ तथा हवनादि कार्य करना चाहिये। सूर्य के वैदिक या लौकिक मन्त्र का 7000 की संख्या में जपदान करने से भी शान्ति मिलती है।

गोचर मंगल के फल

मंगल 3, 6, 11 इन स्थानों में भ्रमण कर रहा हो तो भूमि, सोना, वस्त्र आदि का लाभ होता है, शत्रु नष्ट होते हैं, राजा की कृपा और आरोग्य का सुख मिलता है।

गोचर मंगल 1, 2, 4, 5, 7, 8, 9, 10 इन स्थानों में हो तो रोग, परदेश में प्रवास, मित्रों से झगड़ा ये फल मिलते है।

गोचर बुध के फल

गोचर बुध 2, 4, 6, 8, 10, 11 इन स्थानों में हो तो लाभ, भाग्योदय सुख, मन को आनंद, धन लाभ संपत्ति की वृद्धि ये फल मिलते हैं। गोचर बुध 1, 3, 5, 7, 9, 12 इन स्थानों में भ्रमण करता हो तो सुख नष्ट होता है, धन की हानि होती है, भाई बंधुओ से विरोध, शोक, भय, शारीरिक कष्ट, शत्रुओं का डर, दुःख, रोग, वियोग ये फल मिलते हैं।

गोचर गुरू के फल

गोचर गुरू 2, 5, 7, 9, 11 इन स्थानों में भ्रमण करता हो तो खरीद–बिक्री में लाभ, प्रतिष्ठा में वृद्धि, बुद्धि में वृद्धि, धनलाभ, सुख और संपत्ति ये फल मिलते हैं। गोचर गुरू 1, 3, 4, 6, 8, 10, 12 इन स्थानों में भ्रमण करता हो तो रोग, विदेश में प्रवास, मित्रों से झगड़ा ये फल मिलते हैं।

गोचर शुक्र के फल

गोचर शुक्र 1, 2, 3, 4, 5, 8, 9, 11, 12 इन स्थानों में भ्रमण करता हो तो स्वजनों से मिलना, पुत्र कुटुंब मे सुख आदि के फल मिलते हैं। गोचर शुक्र 6, 7, 10 इन स्थानों में भ्रमण करता हो तो अशुभ होता है। यह रोग, शोक, काम बिगड़ना, बड़ी विपत्ति स्त्री से विरोध तथा बीमारी ये फल देता है।

गोचर शनि के फल

गोचर शनि 3, 6, 11 इन स्थानों में हो तो सुख, सुवर्ण, वस्त्र आदि का लाभ होता है, राजा से या मित्रों से विजय मिलती है, धन और संपत्ति मिलती है।

गोचर शनि 1, 2, 4, 5, 7, 8, 9, 10, 12 इन स्थानों में हो तो अपने संबंधियों से भी झगड़ा होता है, धन और संपत्ति का नुकसान होता है।

गोचर राहु के फल

गोचर राहु 1, 3, 6, 9, 10, 11 इन स्थानों में भ्रमण करता हो तो विवाह होता है अगर दूसरों की स्त्री मिलती, पुत्र की प्राप्ति, धन लाभ ये फल मिलते हैं। यह 2, 4, 5, 7, 8, 12 इन स्थानों में भ्रमण करता हो तो मृत्यु संभव होता है।

10.12 चंद्र राशि से द्वादश भावों में ग्रह गोचर फल

सूर्य के फल

चंद्र से प्रथम स्थान में गोचर सूर्य हो तो प्रवास, दूसरे में भय, तीसरे में धन लाभ, चौथे में व्यसन, पांचें में दरिद्रता, छठे में शत्रुओं का नाश, सातवें में प्रवास, आठवें में पीड़ा, नौवें में कांति कम होना, दसवें में इच्छित की प्राप्ति, ग्यारहवें में लाभ तथा बारहवें में खर्च ये फल मिलते हैं।

स्पष्टार्थ चक्र

जन्म 1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
स्थान नाश	भय	धन लाभ	मान हानि	निर्धनता	शत्रु क्षय	अर्थ नाश	पीड़ा	कान्ति क्षय	कार्य सिद्धि	वित लाभ	द्रव्य नाश

चंद्र के फल

जन्मराशि से प्रथम स्थान में गोचर चंद्र उत्तम अन्न देता है, दूसरे में धन हानि, तीसरे में धन लाभ, चौथे में पेट दर्द, पांचवें में काम सफलता, छठे में काम बिगड़ना, सातवें में लाभ, आठवें में रोग, नौवें में राजा का भय, दसवें में सुख, ग्यारहवें में लाभ तथा बारहवें में शोक ये फल मिलते हैं। दूसरे, पांचवे तथा नौवें स्थान में चंद्र का जो अशुभ फल बतलाया है वह चंद्र के क्षीण होने का समय शेष तिथियों के चंद्र के उक्त स्थानों के फल बहुत शुभ होते हैं क्योंकि उस समय चंद्र की कलाएं अधिक होती हैं।

मंगल के फल

प्रथम स्थान में भय, दूसरे में नुकसान, तीसरे में धन लाभ, चौथे में शत्रु बढ़ना, पांचें में धन हानि, छठे में धन लाभ, सातवें में धन हानि, आठवें में शस्त्रों से आघात, नौवें व दसवें में रोग, ग्यारहवें में लाभ तथा बारहवें में खर्च ये फल मिलते हैं।

बुध के फल

गोचर बुध प्रथम स्थान में बंधु लाभ, दूसरे में धन लाभ, तीसरे में शत्रुओं का डर, चौथे में धन लाभ, पांचवें में कष्ट, छठे में स्थिरता, सातवें में पीड़ा, आठवें में धन लाभ, नौवें में खेद, दसवें में सुख, ग्यारहवें में लाभ तथा बारहवें में धन हानि ये फल मिलते हैं।

गुरू के फल

जन्मराशि में गुरू का परिभ्रमण भय उत्पन्न करता है, दूसरे में धन, तीसरे में पीड़ा, चौथे में शत्रुओं की वृद्धि, पांचवें में सुख, छठे में शोक, सातवें में सरकारी सम्मान, आठवें में रोग, नौवें में सुख या दीनता, दसवें में सम्मान, ग्यारहवें में धन तथा बारहवें में पीड़ा ये फल मिलते हैं।

शुक्र के फल

जन्मराशि में गोचर शुक्र शत्रुओं का नाश करता है, दूसरे में धन, तीसरे में सुख, चौथे में धन, पांचें में पुत्र प्राप्ति, छठे में शत्रुओं की वृद्धि, सातवें में शोक, आठवें में धन लाभ, नौवें में उत्तम वस्त्रों का लाभ, दसवें में पीड़ा, ग्यारहवें तथा बारहवें में धन लाभ ये फल देता है।

शनि के फल

जन्मराशि में गोचर शनि स्थान से गिराता है, दूसरे स्थान में कष्ट, तीसरे में कल्याण, चौथे में शत्रु बढ़ना, पांचवें में पुत्र से सुख, छठे में सुख, सातवें में क्रोध, आठवें में पीड़ा, नौवें में सुख, दसवें में निर्धनता, ग्यारहवें में धन लाभ तथा बारहवें में अनेक प्रकार के अनर्थ ये फल मिलते हैं।

राहु के फल

जन्मराशि में गोचर राहु या केतु हानि करते हैं, दूसरे स्थान में निर्धनता, तीसरे में धन प्राप्ति, चौथे में वैर, पांचवें में शोक, छठे में धन लाभ, सातवें में वादविवाद, आठवें में पीड़ा, नौवें में पाप, दसवें में वैर, ग्यारहवें में सुख तथा बारहवें में धन हानि ये फल मिलते हैं।

1.5 सारांश –

आकाशस्थ ग्रह अपने मार्ग व गति से सदैव भ्रमण करते हुए एक राशि से दूसरे राशि में प्रवेश करते हैं, यह ज्योतिष शास्त्रानुसार सर्वविदित है। जन्म समय में जो ग्रह भ्रमण करते हुए जिस राशि में स्थित पाये जाते हैं उन्हें जन्मकालीन ग्रह कहते हैं और वर्तमान समय में अपने गति से जिस राशि में भ्रमण करते हुए दिखलाई पड़ते हों, उन्हें गोचर ग्रह कहते हैं।जन्म ग्रहों के फल मनुष्य को जीवन पर्यन्त मिलता है, परन्तु गोचर ग्रहों के फल, वे जितने समय तक जिस राशि में स्थित होते हैं उतने ही काल तक मिलता

है। प्रत्येक मानव को अपनी जन्मकुंडली से भावी समय में होने वाली घटनाएं तथा उन घटनाओं का निश्चित समय जानने की प्रबल इच्छा होती है। प्रत्येक ज्योतिषी जन्मकुंडली के बारह स्थानों के ग्रह उनके परस्पर योग तथा षड्वर्ग बल आदि का विचार कर उस मनुष्य को जीवन मे कैसे फल मिलेंगे, इसकी रूपरेखा बना लेता है। फिर ये फल जीवन में कब किस समय मिलेंगे यह बताने का प्रयत्न करता है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जातक का जीवन सम्बन्धि फलादेश कहना अपने आप में अद्वितिय विषय है। फलादेश कर्म में काल निर्णय ही सर्वोपरि होता है, जिसमें गोचर की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है।

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

गोचर – ग्रहों का निश्चित समय में स्वगति अनुसार स्वकक्षीय भ्रमण

ग्रह – आकाशस्थ पिण्ड, जिसमें गति हो।

तारे – आकशस्थ पिण्ड, जो रात्रि में चमकते हुए दिखलाई पड़ते है।

ग्रह कक्षा– ग्रहों की कक्षा, जिसमें वह भ्रमण करते है।

दैनिक गति – वर्तमान दिन की गति

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1 (अ) 1 मास

2 (अ) मंगल

2 (ब) धन कारक

4 (स) 3, 6, 10, 11

5 (स) 1, 3, 5

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

सुलभ ज्योतिष ज्ञान – पंडित वासुदेव सदाशिव खानखोजे

मुहूर्त्त पारिजात – पंडित सोहन लाल व्यास

मुहूर्त्तचिन्तामणि – राम दैवज्ञ

फल दीपिका (मंत्रेश्वर)– गोपेश कुमार ओझा

गोचर विचार– जगन्नाथ भसीन

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न–

1. गोचर की परिभाषा देते हुए उसका विस्तृत वर्णन कीजिये।
2. सामान्य गोचर फल का उल्लेख कीजिये।
3. सूर्यादि ग्रहों के गोचर फल का लेखन कीजिये।
4. ज्योतिष शास्त्र के अनुसार गोचर के महत्व का प्रतिपादन कीजिये।

इकाई – 2 लग्न से द्वादश भाव पर्यन्त ग्रह गोचर विचार

इकाई की रूपरेखा
2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3. लग्न से लेकर द्वादश भाव पर्यन्त ग्रहों का गोचर फल
2.3.1 लग्न से षष्ठ भाव पर्यन्त पर ग्रहों का गोचर फल
2.3.2 सप्तम से द्वादश भाव पर्यन्त पर ग्रहों का गोचर फल
2.5 सारांश
2.6 शब्दावली
2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.9 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई तृतीय खण्ड की द्वितीय इकाई से सम्बन्धित है। इस इकाई का शीर्षक है – लग्न से द्वादश भाव पर्यन्त गोचर विचार। इसके पूर्व की इकाईयों में आप गोचर एवं उसके ग्रह फल से परिचित हो चुके है। अब आप द्वादश भावों में गोचर फल का अध्ययन करने जा रहे है।

लग्न से लेकर द्वादश भाव पर्यन्त विभिन्न ग्रहों का अलग– अलग गोचर फलों का वर्णन का विधिवत अध्ययन आप इस इकाई में करने जा रहे है।

सूर्य, चन्द्र, भौमादि पंचतारा ग्रहों का गोचर फल जन्मकुण्डली के प्रत्येक भावों में क्या होता है? इसका अध्ययन आप इस इकाई में करेंगे।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के बाद आप –

1. लग्न से गोचर फल का प्रभाव से परिचित हो सकेंगे।
2. लग्न से द्वादश भावों में सूर्य के गोचर का फल वर्णन कर सकेंगे।
3. लग्न से द्वादश भावों में चन्द्र के गोचर का प्रभाव लिख सकेंगे।
4. लग्न से द्वादश भावों में मंगल के गोचरीय भ्रमण का फल वर्णित पाएंगे।
5. लग्न से द्वादश भावों बुध, गुरू, शुक्र तथा शनि के गोचर फल का वर्णन कर सकेंगे।

2.3 लग्न से लेकर द्वादश भाव पर्यन्त गोचर फल

जन्मकुण्डली के प्रथम भाव को लग्न के नाम से जाना जाता है। लग्न अर्थात् शरीर पर एवं स्थूल रूप में प्रत्येक भाव पर ग्रहों के गोचर का भौतिक प्रभाव होता है। द्वितीय भाव धन का होता है, तृतीय सहज, चतुर्थ सुहृत, पंचम सुत, षष्ठ रिपु, सप्तम जाया, अष्टम मृत्यु, नवम भाग्य, दशम कर्म, एकादश आय तथा द्वादश व्यय का भाव होता है। इस प्रकार प्रत्येक भावों का फल अलग– अलग होता है।

सूर्य गोचर – उच्चायुक्त से मुलाकात करने हेतु सूर्य का बलान्वित होना आवश्यक है। सूर्य प्रत्येक राशि के आद्य भाग में यथोक्त फल देता है। यहॉ तक कि राशि संक्रमण के पांच दिन पूर्व से ही अपना चमत्कार प्रदर्शन आरम्भ कर देता है।

सूर्य का जन्म राशि से विभिन्न स्थानों पर फल –

स्पष्टार्थ चक्र

जन्म 1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
स्थान नाश	भय	धन लाभ	मान हानि	निर्धनता	शत्रु क्षय	अर्थ नाश	पीड़ा	कान्ति क्षय	कार्य सिद्धि	वित लाभ	द्रव्य नाश

वेध विचार – जिस स्थान पर सूर्य शुद्ध होता है उससे छठें स्थान पर कोई ग्रह नहीं होना चाहिये। अन्यथा, वेध प्राप्त शुभ सूर्य का भी फल अशुभ होगा। सूर्य के शुभ तथा विद्ध स्थान हैं –

3	6	10	11	शुभ स्थान
9	12	4	5	विद्ध स्थान

दोष परिहार –

अ. औषध स्नान – मनःशिला, इलायची, देवदार, केशर, खश, मुलट्ठी तथा रक्त पुष्प मिश्रित जल से स्नान।

ब. दान – माणिक, सोना, तॉबा, गेहूँ, घी, लाल वस्त्र, मूंगा, केशर तथा रक्त चन्दन आदि।

स. जप– वैदिक या लौकिक मन्त्र से जपदान आदि।

चन्द्र गोचर फल –

स्पष्टार्थ चक्र

जन्म 1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
अन्न प्राप्ति	धन नाश	द्रव्य लाभ	कुक्षि रोग	कार्य नाश	धन लाभ	द्रव्य स्त्री लाभ	मृत्यु	राज भय	सौख्य	लाभ	रोग व द्रव्य नाश

विद्ध स्थान

1	3	6	7	10	11	शुभ स्थान
5	9	12	1	4	8	विद्ध स्थान

दोष परिहार –

अ. औषध स्नान – पंचगव्य, गजमद, शंख, सीप, श्वेत चन्दन, स्फटिक आदि।

ब. दान – मोती, सोना, चॉदी, मिसरी, दही, श्वेत चन्दन, शंख, कर्पूर, दो गायें, कुंभ का दान आदि।

स. जप– वैदिक या लौकिक मन्त्र से जपदान आदि।

इसी प्रकार अन्य ग्रहों का भी फल होता है। अब जन्मकुण्डली में स्थित प्रथम भाव से द्वादश भाव पर्यन्त गोचर फल का वर्णन करते है।

2.3.1 लग्न से षष्ठ भाव पर्यन्त पर ग्रहों का गोचर फल

प्रथम भाव फल –

सूर्यः उष्णता रहती है, मन प्रभावित होता है, घर में झगड़ होते हैं, व्यवसाय में मन नहीं लगता। यही कुंडली में सूर्य की स्थिति शुभ हो तो मास अच्छा व्यतीत है, हाथ में पैसा आते रहता है और अच्छे काम होते हैं।

चंद्रः शुभ हो तो विचार अच्छे रहते है, किसी की मदद जरूरी हो तो तुरंत मिलती है, यह शुभ हो तो दो दिन अच्छे जाते हैं। अशुभ हो तो मन अस्वस्थ रहता है, पैसा बहुत खर्च होता है किंतु व्यर्थ खर्च होता है।

मंगलः शुभ हो तो कम जल्दी होते है यात्रा बहुत होती है, व्यवसाय से लाभ होता है, वरिष्ठों से अनबन होती है किंतु जल्दी ही संबंध सुधर जाते हैं। अशुभ हो तो पित्त के विकार होते है, आरोग्य ठीक नहीं रहता, अपमान सहन नहीं होता, क्रोध बहुत आता है, पैसे समय पर नहीं मिलते, पत्नी से अनबन होती है, सब कामों में अड़चते आती है।

बुधः विचार अच्छे आते है किंतु चंचलता रहती है, लेखन अच्छा हो सकता है। यह अशुभ हो तो अविचार से ऐसा काम हो जाता है जिसके लिए बाद में पछताना पड़ता है, धोखा देने वाले मित्र मिलते हैं।

गुरूः शुभ हो तो शांति और समाधान मिलता है, पत्नी गर्भवती होती है या प्रसूता होती है। अधिकार बढ़ता है। होशियारी से मौकों पर काम बन जाते हैं। मित्र बहुत मिलते हैं। शुभ कार्य होते हैं। प्रवास होता है। धन मिलता है। स्त्री सुख अच्छा मिलता है। छात्रों को परीक्षा में सफलता मिलती है। शिक्षा के प्रारंभ या पूर्णता में अड़चन नहीं होती। उत्साह बना रहता है घर में कोई बीमार हो तो वह ठीक हो जाता है। सम्मान मिलता है। लोगों के विवाहादि कार्यों में मदद करने का अवसर आता है। यह गुरू कुंडली में अशुभ हो तो इस समय बड़े लोगों में अपमान होता है, मन उदास रहता है, खर्च बहुत होता है, स्त्री व पुत्र बीमार होते हैं, वरिष्ठों से अनबन होती है, धन नष्ट होता है।

शुक्रः शुभ हो तो स्त्री सुख अच्छा मिलता है। मन में स्त्री विषयक विचार अधिक आते हैं। काफी धन मिलता है। व्यवसाय में लाभ होता है। नये लोगों से परिचय होता है। यह शुक्र कुंडली में अशुभ हो तो स्त्री सुख नहीं मिलता। परस्त्रियों से संपर्क होकर धन खर्च होता है बुरी आदतें लगती है।

शनिः शुभ हो तो हर एक काम अड़चनों के बाद विलंब से किंतु अच्छी तरह होता है। इससे आत्मविश्वास बढ़ता है। लोगों में प्रभाव बढ़ता है। मित्र मिलते हैं, उनके स्नेह से मदद होती है। कीर्ति बढ़ती है, उत्तरदायित्व निभाने योग्य बड़ा पद मिलता है। व्यवसाय बढ़ता है। व्यवसाय के लिए बहुत प्रवास होता है। विदेश यात्रा भी हो सकती है। बड़े कामों के विचार मन में आते रहते हैं। लोगों के काम मुफ्त में करता है। शनि अशुभ हो तो इस समय अपने पर भरोसा नहीं रहता, कहीं भाग जाने का या आत्महत्या का विचार मन में आता है। पिता व पत्नी बीमार रहती है। कुंडली में द्विभार्या योग हो तो यह समय पत्नी के लिए घातक होता है। संतान का भी वियोग हो सकता है। स्वयं बीमार रहता है। व्यवसाय ठप्प होता है। नौकरी छूटती है। परीक्षा में असफल होता है। शिक्षा में रूकावट आती है। भटकना पड़ता है। धन नहीं मिलता, कर्ज होता है। किसी को पैसे देकर भूल जाने या कहीं गुम जाने से या साझेदारी में विश्वासघात से नुकसान होता है। बुरे स्थानों में तबादला होता है, मित्र दूर हो जाते हैं, अपमान होता है, कचहरी के मामलों में उलझता है।

लग्न से द्वितीय भाव पर ग्रहों का गोचर फल

सूर्यः शुभ हो तो पैसा काफल मिलता है, काम अचानक पूरे होते हैं, लोगों पर प्रभाव पड़ता है, मन प्रसन्न रहता है, कामुकता बढ़ती है किंतु घर में अड़चनें रहती है। अशुभ हो तो धन नहीं मिलता, मिले भी तो टिकता नहीं है। खर्च के मौके पहले आते हैं, धन बाद में मिलता है। इस समय सट्टा नहीं खेलना चाहिए नुकसान होता है। आंखों में कष्ट होता है। लोगों से झगड़े होते हैं। घर में अव्यवस्था रहती है, कर्ज होता है, व्यवसाय में ध्यान नहीं रहता।

चंद्रः धन मिलता है, समाधान रहता है, किंतु सोचा हुआ काम समय पर नहीं होता, साधारणतः दो दिन अच्छे जाते हैं।

मंगलः कुंडली में शुभ हों या अशुभ इस समय धन नहीं मिलता, खर्च के मौके बहुत आते हैं, बहुत तंगल रहती है, मन स्वस्थ नहीं रहती, झगड़े होते हैं, बीमारियां होती है, सट्टे में नुकसान होता है, लोगों के अपशब्द सुनने पड़ते हैं। शरीर में उष्णता और कामेच्छा बहुत बढ़ती है। व्यवसाय में रूकावटें आती है।

बुधः मन में स्वस्थता रहती है, लेखन कार्य अच्छा होता है। यह अशुभ हो तो अदालन के लिए जरूरी दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने में सावधानी रखनी चाहिए अन्यथा फौजदारी मामलों में उलझना पड़ता है।

गुरूः शुभ हो तो पूर्व अर्जित जायदाद में वृद्धि होती है। मासिक आमदनी बढ़ती है, पद में वृद्धि होती है। व्यवसाय में तरक्की होती है। परिवार का सुख अच्छा मिलता है। प्रवास बहुत होता है। यह अशुभ हो तो इस समय जायदाद के मामलों में परेशानियां आती है, कर्ज लेना पड़ता है। जायदाद गहन रखनी पड़ती है। नौकरी या व्यवसाय में हानि होती है। घर में कोई बीमार रहता है। कुल मिलाकर समय ठीक नहीं होता।

शुक्रः शुभ हो तो भोजन, वस्त्र, धन अच्छा मिलता है। अशुभ हो तो सट्टे में नुकसान होता है, कर्ज होता है।

शनिः शुभ हो तो आय बढ़ती है, पूर्व अर्जित जायदाद बढ़ती है। कर्ज से छुटकारा मिलता है। बड़े व्यवसाय की योजनाएं मन में आती है। इमारतें बनवा कर किराये की आमदनी प्राप्त करने की कोशिश होती है। अदालती और अन्य मामलों में भी सफलता मिलती है। यह अशुभ हो तो घर में प्रमुख व्यक्ति अथवा किसी स्त्री की मृत्यु होती है। अचल संपत्ति में परेशानी से नुकसान होता है। अदालती मामलों में हानि होती है। स्वयं अथवा स्त्री या पुत्र बीमार रहते हैं। लंबी बीमारियां चलती हैं। नौकरी से सस्पेंडहोना या पदावनति होना जैसे अपमान के प्रसंग आते हैं या नौकरी छूट जाती है। व्यवसाय में नुकसान होता है। बेइज्जती होती है। यदि इसी समय गुरू का शुभ गोचर हो रहा हो तो उसके शुभ फल भी इस शनि के अशुभ गोचर से समाप्त हो जाते हैं। छात्र परीद्वक्षा में असफल होते हैं, शिक्षा छोड़कर कमाई की चिंता करनी पड़ती है। कुल मिलाकर यह समय दुःखदायी होता है।

लग्न से तृतीय भाव पर ग्रहों का गोचर फल

सूर्यः शुभ हो तो अच्छे काम होते हैं। काम जल्दी पूरे होते हैं। अधिकार मिलता है, लोगों पर प्रभाव पड़ता है। बेरोजगार को नौकरी मिलती है या व्यवसाय शुरू होता है। धनार्जन शुरू होता है। प्रवास होते हैं। यह अशुभ हो तो भाई–भाई अलग होते है; यद्यपि झगड़ा अदालत तक नहीं जाता। वरिष्ठों से अनबन रहती है। मित्रों से संपर्क टूटता है।

चंद्रः यह समय साधारण ठीक होता है। मित्र मिलते हैं, उनके साथ चाय, पानी, मनोरंजन आदि में व्यय अधिक होता है।

मंगलः शुभ हो तो प्रगति और कीर्ति की प्राप्ति केलिए अनुकूल घटनाएं घटती है। साहस बढ़ता है। प्रवास होता है। सट्टे या व्यापार में अंदाज से अधिक फायदा होता है। स्वयं को लाभ होता है किंतु भाई कष्ट में रहते हैं। यह अशुभ हो तो संतान को कष्ट होता है। भाईयों से झगड़ा होता है। मन में अस्वस्थता बनी रहती है। स्वभाव गरम रहती है। लोग संदेह की निगाह से देखते हैं। नौकरों के तबादले होते हैं।

बुधः शुभ हो तो बुद्धि शांत और स्थिर रहती है। प्रवास होता है। हर एक काम सावधानी से तथा व्यवस्थित होता है। लेखन अच्छा होता है। यह अशुभ हो तो कामों में अव्यवस्थता रहती है। व्यवहार में आलस और सफाई का अभाव रहता है।

गुरूः शुभ हो तो शांति और समाधान रहता है। अधिकारियों के तबादले नहीं होते। घर में मंगल कार्य होते हैं। पद में वृद्धि होती है। व्यापार में परिवर्तन नहीं होता, लाभ साधारण होता है किंतु कर्ज नहीं होता, विवाह और पुत्र प्राप्ति की संभावना होती है। लेखन अच्छा होता है। वरिष्ठ अधिकारी प्रसन्न रहते है। छात्र उत्तीर्ण होते हैं। यही गुरू अशुभ हो तो गर्भपात या संतान की मृत्यु होती है। पत्नी अस्वस्थ रहती है। धन हाथ में नहीं रहता, कर्ज होता है। आमदनी से अधिक खर्च होता है। भाईयों से झगड़े होते हैं। छात्र उत्तीर्ण नहीं होते। नौकरी छूटती है या व्यवसाय बंद होने की स्थिति आती है। भाग्य की उतरती स्थिति होती है।

शुक्रः शुभ हो तो स्त्री सुख मिलता है। अशुभ हो तो धन लाभ नहीं होता, स्त्री सुख में बाधा आती है।

शनिः शुभ हो तो मन शांत व संतोषी रहता है। उत्साह व साहस बढ़ता है। कर्तव्य बढ़ता है। व्यवसाय में आत्मविश्वास बढ़ता है। तरक्की होती है। प्रवास बहुत होता है। लोगों के विवाह कार्य में मदद करता है। धन मिलता है। मित्र भाई मदद करते हैं। अदालती मामलों में सफलता मिलती है। यदि यही अशुभ हो तो मन में उदासी रहती है, काम करने की इच्छा नहीं होती, आलस बढ़ता है। तबादले बुरी जगह होते हैं। नौकरी का स्थान अच्छा नहीं मिलता। भाईयों में अदालती मामलों तक झगड़े होते हैं। भाई, बहनोई या संतान का मृत्यु योग होता है। बेकार रहना पड़ता है। सब ओर अपमान के मौके आते हैं।

लग्न से चतुर्थ भाव पर ग्रहों का गोचर फल

सूर्य : शुभ हो तो मेहमान बहुत आते हैं, घर का सुख मिलता है। घर के

रख–रखाव में खर्च होता है। अशुभ हो तो स्वस्थ नहीं रहता, मन–मस्तिष्क को तकलीफ होती है। मन अस्वस्थ रहता है।

चंद्र : शुभ हो तो दो दिन धन लाभ के होते हैं, मन प्रसन्न रहता है। अशुभ हो तो मन अस्वस्थ रहता है।

मंगल : शुभ हो तो नये व्यवसायों की कल्पना मन में आती है। वरिष्ठ अधिकारी प्रसन्न रहते हैं। उत्साह व साहस बढ़ता है। काम जल्दी पूरे होते हैं। जायदाद के संबंध में अदालती मामलों का निर्णय अपने पक्ष में होता है अशुभ हो तो टाइफाईड, जैसी खतरनाक बीमारियां होती हैं। जायदाद के मामले अदालन में जाते हैं।

गुरू : शुभ हो तो अचल संपत्ति मिलती है। स्थानांतरण अच्छी जगह होता है। माता का स्वास्थ्य ठीक रहता है। मित्र मदद करते हैं। अध्ययन के लिए समय ठीक रहता है। खेती–बाड़ी से अच्छी आमदनी होती है। पेंशन का समय हो तो यह धन मिलने में दिक्कत नहीं होती। गुरू अशुभ हो तो विशेषकर मेष लग्न वालों के लिए लग्न कुंडली में भी चतुर्थ में गुरू हो तो यह समय अचल संपत्ति के नष्ट होने का होता है। दरिद्री हो जाता है। माता बीमार रहती है। पिता का वियोग भी हो सकता है। स्थानांतरण खराब जगह हो जाता है। तरक्की रूक जाती है। लोगों में निंदा होती है। जायदाद के बारे में अदालती मामले चलते हैं निर्णय विरोध में होता है। मन में स्वस्थता नहीं रहती।

शुक्र : शुभ हो तो व्यवसाय में लाभ होता है, धन मिलता है, स्त्री सुख अच्छा मिलता है। अशुभ हो तो व्यवसाय में नुकसान होता है, स्त्री सुख में बाधा आती है, पैसा नहीं मिलता।

शनि : शुभ हो तो जायदाद बढ़ती है, व्यवसाय में फायदा होता है। किसी रिश्तेदार की मृत्यु से वारिस के रूप में धन मिलता है। बड़े काम होते हैं। तबादला और तरक्की होती है। यदि यहां 36वां वर्ष पूरा हो रहा हो तो भाग्योदय की शुरूआत होती है। यह शनि अशुभ हो तो पेंशन में परेशानी आती है (अतः इस शनि के गोचर के पहले पेंशन लेना संभव हो तो एक दो साल पहले ही लेनी चाहिए।) पिता या घर के किसी वरिष्ठ व्यक्ति की मृत्यु होती है। माता बीमार रहती है। कुंडली में द्विभार्या योग हो तो पत्नी की मृत्यु संभव होती है। व्यवसाय बंद पड़ता है। नापसंद स्थान पर स्थानांतरण होते हैं। बेइज्जती होती है। पत्नी, पुत्र इच्छा के विरूद्ध व्यवहार करते हैं। पूर्व अर्जित जायदाद के संबंध में भाईयों में झगड़े होते हैं।

अभ्यास प्रश्न–

1. निम्नलिखित में चन्द्र गोचर फल में शुभ स्थान नहीं होता है–

अ. 4 ब. 3 स. 6 द. 7

2. निम्न में से लग्न से किस भाव में ग्रह गोचर भूमि सम्पत्ति की प्राप्ति संभावित करता है।
(अ) तृतीय, (ब) षष्ठ (स) चतुर्थ, (द) दोनों स्थान
3. लग्न से किस स्थान पर सभी ग्रहों का गोचर अशुभ फल ही करता है।

(अ) षष्ठ, (ब) अष्टम, (स) द्वादश, (द) उपरोक्त तीनों

4. सूर्य गोचर फल में एकादश स्थान में होने पर क्या फल देता है–

अ. वित्त नाश ब. वित्त लाभ स. मान वृद्धि द. अपमान

लग्न से पंचम भाव पर ग्रहों का गोचर फल

सूर्य : शुभ हो तो बुद्धि स्थिर रहती है। अच्छे काम होते हैं। प्रारंभ किये काम में सफलता मिलती हैं स्वास्थ्य ठीक रहता है। उत्साह बढ़ता है अशुभ हो तो पुत्रों का स्वास्थ्य बिगड़ता है, औषधि में बहुत खर्च होता है, मन अस्वस्थ रहता है। स्वयं की और पत्नी की गर्मी बढ़ती है।

चंद्र : दो दिन अच्छे जाते हैं। मन प्रसन्न रहता है। धन मिलता है। अशुभ हो तो मन उदास रहता है, काम में मन नहीं लगता।

मंगल : शुभ हो तो व्यापार या सट्टे में लाभ होता है। साहस, उत्साह बढ़ता है। तरक्की होती है। अच्छी जगह स्थानांतरण होते हैं। मेहनत की परवाह न करके काम करता है। अशुभ हो तो संतानों का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता। सट्टे में नुकसान होता है। आमदनी से खर्च अधिक होता है। व्यर्थ प्रवास करना पड़ता है। पत्नी का स्वास्थ्य बिगड़ता है। मन अस्वस्थ रहता है। हर काम में असफलता मिलती है। परीक्षा में असफलता मिलती है। वरिष्ठों से अनबन होती है।

बुध : शुभ हो तो बुद्धि तेज होती है, विचारशील होता है, छोटी बातें भी ध्यानपूर्वक देखता है। शेयर व्यापार में लाभ होता है। लेखन कार्य, छात्रों का अध्ययन अच्छा होता है। अशुभ हो तो पढ़ाई में ध्यान नहीं लगता, बुद्धि विपरीत दिशा में कार्य करती है, शेयर आदि में नुकसान होता है।

गुरू : शुभ हो तो परीक्षा में सफल होता है, शिक्षा पूर्ण होती है। संतान प्राप्ति संभावना होती है। नौकरी मिलती है। धन लाभ साधारण होता है। कीर्ति बढ़ती है। अशुभ हो तो शिक्षा अधूरी रहती है या परीक्षा में असफलता मिलती है। बेकार रहना पड़ता है या नौकरी में बहुत कम वेतन मिलता है। मन असंतुष्ट रहता है।

शुक्र : शुभ हो तो यह मान उत्तम जाता है। मित्रों से मदद मिलती है। सब सुख मिलता है। परस्त्री से संपर्क होता है मन प्रसन्न रहता है। अशुभ हो तो पत्नी की बीमारी से स्त्री सुख में बाधा पड़ती है। पुत्र भी बीमार रहते हैं।

शनि : शुभ हो तो विशेष कर कन्या संतान होती है। शिक्षा पूरी होती है। काम सफल होते हैं। अधिकार मिलता है। तरक्की होती है। शेयर, सट्टे के व्यापार में लाभ होता है। कीर्ति बढ़ती है। मित्रों से मदद मिलती है। विदेश यात्रा हो सकती हैं जायदाद मिलती है या खरीदी जाती है। अशुभ हो तो सट्टे और शेयर व्यापार में नुकसान होता है। दीवाला निकल सकता है। कर्ज होता है बेरोजगारी, बेइज्जती, संतान की मृत्यु, पत्नी की बीमारी, स्वयं की बीमारी, आमदनी से अधिक खर्च, खाने की मुश्किल, ूदसरों से भीख मांगले जैसी

हालत, मित्रों से दुराव, अपमान, जायदाद या व्यापार के लिये झगड़े, नौकरी में निलंबित होना या किसी मामले में कारावास आदि दुःखदायक बातें होती है।

लग्न से षष्ठ भाव पर ग्रहों का गोचर फल

सूर्य : शुभ हो तो आरोग्य उत्तम रहता है। मन स्वस्थ रहता है। काम सफल होते है। शत्रु पराजित होते है। अशुभ हो तो उष्णता बढ़ती है, काम सफल न होने से मन उदास रहता है।

चंद्र : शुभ हो तो कुछधन मिलता है, मन संतुष्ट रहता है। अशुभ हो तो धन नहीं मिलता तथा मन अशांत रहता है।

मंगल : शुभ हो तो व्यवसाय के लिए प्रवास होता है। सफलता कष्ट से मिलती है। रिश्वत देकर अदालती काम करवाने पड़ते हैं। स्त्री सुख अच्छा मिलता है। अशुभ हो तो फौजदारी मामलों में उलझना पड़ता है, लोगों से झगड़े होते हैं, अदालत के निर्णय विरोध में होते हैं। व्यर्थ ही पैसा खर्च होता है, कर्ज होता है। बवासीर, से कष्ट होता है। खराब जगह तबादला होता है। नौकरी में पदावनति होने की संभावना होती है। वरिष्ठ अधिकारी से झगड़ा होता है।

बुध : शुभ हो या अशुभ बुद्धि को स्थिर रखता है।परिस्थिति में कोई हलचल नहीं होती। सभी कार्य शांति से चलते रहते हैं।

गुरू : शुभ हो तो शत्रु दबे रहते हैं या पराजय स्वीकार करते हैं। चुनाव में बड़े प्रतिस्पर्धी को भी पराजित कर सकते हैं स्वास्थ्य साधारण तथा ठीक रहता है। कर्ज चुकाने का इंतजाम होता है। अच्छे स्वप्न दिखते हैं। अशुभ हो तो कर्ज होता है, स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता, काम सफल नहीं होते, मन में स्वस्थता नहीं रहती, परीक्षा में असफल होते हैं। खराब जगह तबादला होता है। काम से कष्ट होता है। मामा या मौसी से तकलीफ होती है। अदालत का निर्णय विरूद्ध होता है।

शुक्र : शुभ हो या अशुभ कामवासना बहुत बढ़ती है, स्त्री सुख अच्छा मिलता है।

शनि : शुभ हो तो नया व्यवसाय शुरू होता है, शत्रु से उत्पन्न कष्ट दूर होता है, स्वास्थ्य ठीक रहता है, कर्ज चुका दिया जाता है, मित्र मदद करते हैं, तरक्की होती है। अधिकार मिलता है। वरिष्ठों से संघर्ष करके प्रगति होती है। वरिष्ठ प्रभावित होते हैं। अशुभ हो तो रक्तक्षय, से कष्ट होता है, मृत्यु भी संभावित है। असफलता मिलती है। अदालत के निर्णय विरूद्ध होते हैं। कारावास हो सकता है। तरक्की नहीं मिलती। बार–बार तबादले होते हैं। निवास स्थान में परिवर्तन होता है।

2.3.2 सप्तम से द्वादश भाव पर ग्रहों का गोचर फल

सूर्य : शुभ हो तो तरक्की होती है, वरिष्ठों पर प्रभाव पड़ता है। इच्छानुसार काम होते हैं। पत्नी स्वस्थ रहती है, स्त्री सुख अच्छा मिलता है। प्रवास की संभावना होती है। अच्छे स्थान पर तबादला होता है। व्यवसाय में लाभ होता है। अशुभ हो तो स्त्री सुख नहीं मिलता, पत्नी व पुत्र बीमाररहते हैं। जातक स्वयं बीमार रहता है। व्यवसाय में नुकसान,

वरिष्ठों से झगड़े, खराब जगह तबादले होते हैं।

चंद्र : दो दिन मन को कष्ट ही होता है।

मंगल : शुभ हो तो व्यवसाय, सट्टा, शेयर आदि में फायदा होता है। अदालत के निर्णय अनुकूल होते हैं। वरिष्ठों से संघर्ष करके प्रगति होती है। वरिष्ठ प्रभावित होते हैं। तबादले नहीं होते। अशुभ हो तो चुनाव में बड़ी प्रतिस्पर्धा और बहुत खर्च करना पड़ता है, साझेदारी तथा अदालती मामलों में नुकसान होता है। साझेदारी के व्यवसाय बंद करने पड़ते हैं। स्त्री, पुत्र बीमार रहते हैं। झगड़े मारपीट तक पहुंचते हैं।

बुध : शुभ हो तो व्यापार, शेयर आदि में लाभ होता है। नये व्यवसाय या चालू व्यवसाय बढ़ाने की बात मन में आती रहती है। छात्रों के लिए अच्छी पढ़ाई होने का समय रहता है, मन प्रसन्न रहता है। अच्छे विषयों पर चर्चा, लेखन आदि काम अच्छे होते हैं। अशुभ हो तो बुद्धि में व्यग्रता रहती है। बोलने व लिखने में गलतियां होने से लोगों को गलतफहमी होती है। छात्रों और लेखकों के लिये यह समय बुरा होता है। काम में नुकसान होता है।

गुरू : शुभ हो तो व्यवसाय उत्तम व लाभदायक रहता है। परिवार के लोगों का स्वास्थ्य उत्तम रहता है। चुनाव में जीत होती है। बड़े लोगों से परिचय होता है। काम सफल होते हैं। छात्र परीक्षा में उत्तीर्ण होते हैं। लेखन प्रकाशित होता है। वरिष्ठ प्रसन्न रहते हैं। तरक्की होती है। शेयर या सट्टे में लाभ नहीं होता। संतान की संभावना या जन्म होता है। विवाह होता है। पुत्र आदि के मंगल कार्य होते हैं। विवाह कार्यों में मदद देनी पड़ती है। अदालती मामलों में समझौता होने से फायदा होता है। अशुभ हो तो व्यवसाय बंद करना पड़ता है, स्त्री, पुत्र बीमार रहते हैं, मित्र धोखा देते हैं। काम असफल होते हैं। परीक्षा, अदालती मामले, तरक्की आदि में विरूद्ध निर्ण होते हैं। कुंडली में द्विभार्या योग हो तो इस समय पत्नी की मृत्यु संभावित होती है।

शनि : शुभ हो तो धन अच्छा मिलता है। विदेश यात्रा की संभावना होती है। व्यवसाय अच्छा चलता है। नया व्यवसाय शुरू हो सकता है। अदालती मामलों में निर्णय अनुकूल होते हैं। जायदाद के पुराने मामलों में लाभ होता है। कुंडली में किसी व्यक्ति का धन मिलने का योग हो तो वह इस समय मिलता है। विधवा से पुनर्विवाह संभव होता है। तरक्की मिलती है। किंतु वरिष्ठों से मतभेद होता है। स्त्री, पुत्रों का स्वास्थ्य सुधरता है। कन्या या पुत्र के विवाह की बात चलती है। अन्य संबंधियों के विवाह कार्यों में मदद देनी पड़ती है। शेय, सट्टा आदि में लाभ होता है। अशुभ हो तो व्यवसाय, साझेदारी आदि मे नुकसान होता है। कुंडली में द्विभार्या योग हो तो पत्नी की मृत्यु की संभावना होती हैं। संतान का वियोग होता है। अदालत के निर्णय विरूद्ध होते हैं। हाथ में पैसा नहीं रहता। नौकरी छूटने या निलंबित होने का योग होता है। वरिष्ठों से झगड़े होते हैं। काम सफल नहीं होत। छात्र परीक्षा में नहीं बैठ पाते या असफल होते हैं। माता यापिता का वियोग होता है। चुनाव में हार होती है। जायदाद बेचनी पड़ती है, कर्ज होता है, अन्न की मुश्किल

पड़ती है। धोखा दिये जाने से नुकसान होता है। जायदाद के मामले अदालत में जाते हैं। धनवान पर स्त्री से संपर्क होता है।

लग्न से अष्टम भाव पर ग्रहों का गोचर फल

इस स्थान में शनि और गुरू के अतिरिक्त अन्य ग्रहों के गोचर का महत्व नहीं है।

सूर्य : शुभ हो या अशुभ इस मास में स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता। वरिष्ठ लोग बार–बार नाराज होते हैं।

चंद्र : मन प्रसन्न रहता है। दो दिनों में सुख की नींद मिलती है।

मंगल : मलेरिया, टाइफाइड जैसी बीमारियां होती है। अवस्था छोटी हो तो चेचक, खसरा जैसे रोग होते हैं। धन नहीं मिलता, खर्च बहुत होता है। नौकरी में छुट्टी लेकर बैठना पड़ता है। ऊँचाई से गिरने का डर रहता है।

बुध : लिखने में गलतियां होती है। इससे वरिष्ठ अधिकारी से डांट खानी पड़ती है। कागज रखने में अव्यवस्था हो जाती है। बुध शुभ हो तो इसके उल्टे फल मिलेंगे।

गुरू : शुभ हो तो अकस्मात् धन मिलता है। किसी की धरोहर मिल जाती है, धरोहर रखने वाले की अकस्मात् मृत्यु हो जाती है इसलिए वह लौटाने की जरूरत नहीं रहती। गुप्त ज्ञान की रूचि रहती है। यह अशुभ हो तो व्यवसाय बंद पड़ता है, कर्ज होता है, खाना मिलने में अड़चन पड़ती है, बहुत कष्ट का समय होता है।

शुक्र : शुभ हो तो स्त्री सुख अच्छा मिलता है। परस्त्री से संपर्क होता है, उसी से धन भी मिलता है। व्यवसाय ठीक चलता है, फायदा होता है। अशुभ हो तो पैसा खर्च होकर भी स्त्री सुख नहीं मिलता, व्यवसाय में लाभ नहीं होता।

शनि : कुंडली में शनि कैसा भी हो, शुभ हो या अशुभ हो, इस स्थान में गोचर काल में अशुभ फल देता है। नौकरी छूटना, कारावास की संभावना, निलंबित होना, व्यवसाय बंद होना, धन हानि, स्त्री/पुत्रों की बीमारियां, विदेश यात्रा, कामों में असफलता, अदालत के मामलों में विरूद्ध निर्णय, लोगों में निंदा, इस प्रकार शारीरिक, आर्थिक, मानसिक सब प्रकार के कष्ट होते हैं। मन विरक्त होने लगता है।

लग्न से नवम भाव पर ग्रहों का गोचर फल

सूर्य : शुभ हो तो व्यवसाय के लिए विदेश यात्रा होता है, व्यवसाय अच्छा चलता है, हाथ में पैसा रहता है, भाग्योदय की आशा रहती है, काम सफल होते हैं। अशुभ हो तो पुत्र या भाई बीमार रहते हैं। धन बहुत खर्च होता है, मन में स्वस्थता नहीं रहती।

चंद्र : मन अस्वस्थ रहता है, हाथ में पैसा नहीं रहता, नींद अच्छी नहीं आती। मन की सुख शांति नहीं रहती।

मंगल : शुभ हो तो व्यवसाय में उत्साह रहता है। थोड़े समय का प्रवास होता है। लोगों पर प्रभाव पड़ता है। अच्छे स्थान पर स्थानांतरण होते हैं। तरक्की होती है। सट्टा, शेयर में लाभ होता है। अशुभ हो तो पुत्र या भाई बीमार रहते हैं। मित्र, भाई धोखा देते हैं। बुरे स्थान में स्थानांतरण होते हैं।

बुध : शुभ हो तो लेखन, प्रकाशन, पुस्तक बिक्री के लिए यह समय अच्छा होता है। अन्य व्यवसाय सामान्यतः ठीक चलते हैं। शेयर व्यापार में लाभ होता है। हाथ में पैसे रहते हैं। अशुभ हो तो बुद्धि अस्थिर होती है, व्यर्थ ही भटकने की इच्छा होती है।

गुरू : शुभ हो तो शिक्षा पूरी होती है। शिक्षा क्षेत्र में या सरकारी नौकरी मिलती है। विवाह तथा संतान प्राप्ति का योग होता है। परीक्षा में सफलता मिलती है। प्रवास, लेखन अच्छा होता है, इनकी कीर्ति बढ़ती है। धन कम मिलता है। भाई या बहन का विवाह होता है। अशुभ हो तो शिक्षा अधूरी रहती है। परीक्षा में सफल नहीं होते। पाठशाला, कॉलेज छोड़ना पड़ता है। बहन को वैधव्य का दुःख सहना पड़ता है या उसकी दुराचार की ओर प्रवृत्ति होती है। संतान के लिए यह समय घातक होता है। बदनामी होने जैसी घटनाएं होती रहती है।

शुक्र : कुंडली में शुभ हो या अशुभ इस स्थान में गोचर का मध्यम सुखदायी फल देता है। यह विशेष रूप से कवियों के लिए उत्तम होता है, उन्हेंकाव्य की प्रेरणा विशेष मिलती है।

शनि : शुभ हो तो कीर्ति बढ़ती है। धन मिलता रहता है। नये उद्योगों के विचार आते रहते हैं। प्रवास होता है। तरक्की मिलती है। अच्छे स्थान पर तबादला होता है। संतान प्राप्त होती है। अशुभ हो तो इसका भाई, बहनों पर बड़ा अशुभ प्रभाव पड़त है। भाई या बहन की मृत्यु या वैधव्य योग होता है या उनके पालन पोषण की जिम्मेदारी उठानी पड़ती है। संतान की मृत्यु या गर्भपात की संभावना होती है। भाई धोखा देते हैं। व्यवसाय में दिक्कतें आती है। धन की तंगी रहती है। तरक्की रूक जाती है।

लग्न से दशम भाव पर ग्रहों का गोचर फल

सूर्य : शुभ हो तो सम्मान, तरक्की, धन, कामों में सफलता, अच्छी बुद्धि जैसे फल मिलते है। अशुभ हो तो असफलता, पिता से झगड़ा, नौकरी में कष्ट, नुकसान होकर भटकना, व्यवसाय में हानि के फल देता है।

चंद्र : दो दिन संतोष से बीतते हैं।

मंगल : शुभ हो तो हर एक काम में सफलता जल्दी मिलती है। कीर्ति बढ़ाने वाले काम पूरे होते हैं। व्यापार, सट्टा, शेयर में लाभ होता है। तरक्की होती है। वरिष्ठ अधिकारी प्रसन्न रहते हैं। अपने अधीन नौकरों पर प्रभाव पड़ता है। नये मित्र मिलने से लाभ होता है। उत्साह व सामर्थ्य बढ़ता है। अशुभ हो तो व्यवसाय में नुकसान, वरिष्ठों से झगड़ा, आलस, संतान की बीमारी आदि से कष्ट होता है। काम में मन नहीं लगता।

बुध : शुभ हो तो ऑफिस के काम व्यवस्थित होते हैं। नये लोगों से परिचय होता है। लेखन अच्छा होता है। शेयर में लाभ होता है। अशुभ हो तो लेखन या जोड़–घटा में गलतियां होती है। अधिकारियों से डांट खानी पड़ती है। लेखक व ज्योतिषियों के लिए यह समय ठीक नहीं होता।

गुरू : शुभ हो तो भाग्योदय कराता है। धन मिलता है। तरक्की होती है। व्यापार में बहुत लाभ होता है। बड़े लोगों से परिचय होता है परिवार का सुख ठीक मिलता है। चुनाव में जीत होती है। कीर्ति मिलती है। अच्छे कामों के लिए यात्रा होती है। अदालत के निर्णय अनुकूल होते हैं। अशुभ हो तो व्यापार में नुकसान, पिता या पुत्रों की कठिन बीमारी या मृत्यु, नौकरी में निलंबित होना या तबादला होना, नौकरी छूटने का डर बना रहना आदि अशुभ फल मिलते हैं।

शुक्र : शुभ हो तेा मित्र बहुत मिलते हैं, उनसे मदद मिलती है। व्यवसाय ठीक चलता है, धन मिलता है। अशुभ हो तो स्त्री सुख नहीं मिलता व्यवसाय में दिक्कतें आती है। धन नहीं मिलता।

शनि : शुभ हो तो कीर्ति बढ़ती है। तरक्की, व्यवसाय में लाभ, चुनाव में जीत आदि शुभ फल मिलते हैं। विदेश यात्रा की संभावना होती है। नौकरी या व्यवसाय में परिवर्तन होता है। अदालत के निर्णय अनुकूल होते हैं धन मिलता है। बड़े लोगों से परिचय होता है। सट्टा, शेयर–बाजार में लाभ होता है। अशुभ हो तो बदनामी होती है। बुरी जगह तबादले होते हैं। वरिष्ठों से कहासुनी, तरक्की रूक जाना, परिवार में माता, पिता या संतान की मृत्यु, कर्ज होना, स्त्री, पुत्रों से दूर रहना आदि अशुभ फल मिलते हैं। बेकार रहना पड़ता है। यह समय सब प्रकार से अशुभ हो जाता है।

लग्न से एकादश भाव पर ग्रहों का गोचर फल

इस स्थान में शनि और गुरू के अतिरिक्त अन्य ग्रहों का गोचर विशेष फलदायक नहीं होता है।

गुरू : शुभ हो तो विवाह, संतान होना या उसकी संभावना होना, व्यवसाय में थोड़ा लाभ, सट्टा, शेयरआदि में लाभ, तरक्की जैसे शुभ फल मिलते हैं। यह गुरू संतति और संपत्ति में से एक का फल देता है। धन मिला तो संतान नहीं होती, संतान हुई तो धन नहीं मिलता। अशुभ हो तो विवाह की बात पक्की नहीं हो पाती, विवाह हो कर संतान हुई हो तो उसके वियोग की संभावना रहती है। व्यवसाय, सट्टा, शेयर आदि में नुकसान होता है। नौकरी में तरक्की नहीं मिलती।

शनि : शुभ हो तो व्यवसाय ठीक चलता है तरक्की होती है। स्थानांतरण के लिए प्रयत्न करने पर सफलता मिलती है। अकस्मात् धन मिलता है। अशुभ हो तो संतान की मृत्यु, स्त्री की बीमारी, धन की हानि आदि से कष्ट होता है।

लग्न से द्वादश भाव पर ग्रहों का गोचर फल

इस स्थान में किसी भी ग्रह का गोचर विशेष शुभ नहीं होता। साधारणतया अशुभ फल ही मिलते हैं सूर्य, चंद्र, बुध, शुक्र का विशेष परिणाम नहीं होता। मंगल, गुरू व शनि के अशुभ फल तीव्र होते हैं। कुंडली में ये शुभ हो या अशुभ इस स्थान में गोचर के फल शुभ नहीं होते।

मंगल : धन नहीं मिलता, खर्च अधिक होता है, कर्ज होता है। कुंडली में शनि

अशुभ हो तथा मंगल से अशुभ योग करता हो तो इस समय कारावास हो सकता है। स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता। कष्ट होता रहता है।

गुरू : व्यवसाय में दिक्कतें आती है। पैसे की तंगी रहती है। मन में स्वस्थता नहीं रहती।

शनि : नौकरी छूटना, तरक्की रूकना, किसी कारण से कारावास, विदेश यात्रा, व्यवसाय बंद होना, पत्नी की मृत्यु जैसे अशुभ फल मिलते हैं। केवल जन्म कुंडली में शनि द्वादश स्थान में और मकर राशि में हो तो इसके कुछ अच्छे फल मिलते हैं। फिर भी पत्नी दूर रहती है, स्त्री सुख में बाधा आती है अन्यथा अशुभ फल ही मिलते हैं।

2.4 सारांश–

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जान लिया कि जन्मकुण्डली के प्रथम भाव को लग्न के नाम से जाना जाता है। लग्न अर्थात् शरीर पर एवं स्थूल रूप में प्रत्येक भाव पर ग्रहों के गोचर का भौतिक प्रभाव होता है। द्वितीय भाव धन का होता है, तृतीय सहज, चतुर्थ सुहृत, पंचम सुत, षष्ठ रिपु, सप्तम जाया, अष्टम मृत्यु, नवम भाग्य, दशम कर्म, एकादश आय तथा द्वादश व्यय का भाव होता है। इस प्रकार प्रत्येक भावों का फल अलग–अलग होता है।उच्चायुक्त से मुलाकात करने हेतु सूर्य का बलान्वित होना आवश्यक है। सूर्य प्रत्येक राशि के आद्य भाग में यथोक्त फल देता है।

2.5 शब्दावली

गोचर फल– ग्रहों की तात्कालिक स्थिति का फल

चर– चलना

दशा – स्थिति

लग्न – जन्मकुण्डली का प्रथम भाव

जाया – पत्नी

सुत – पुत्र

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1 (अ)

2 (स)

3 (द)

4 (ब)

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

मुहूर्त्तपारिजात – पं. सोहन लाल व्यास

मुहूर्त्तचिन्तामणि– राम दैवज्ञ

फल दीपिका (मंत्रेश्वर) – गोपेश कुमार ओझा
गोचर विचार – जगन्नाथ भसीन

2.8 निबंधात्मक प्रश्न–

1. सूर्य एवं चन्द्र के गोचर फल का उल्लेख कीजिये।
2. लग्न से षष्ठ भाव पर्यन्त गोचर फल लिखिये।
3. सप्तम से द्वादश भाव पर्यन्त गोचर फल लिखिये।

इकाई – 3 शनि की ढैय्या, साढ़े साती एवं उपाय विचार

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 शनि की ढैय्या विचार
3.4. शनि की साढ़े साती विचार एवं उसका विविध राशियों पर प्रभाव
    3.4.1 साढ़े साती कुछ विशेष बिन्दु
3.5 साढ़े साती व ढैय्या में उपायों पर विचार
3.6 सारांश
3.7 शब्दावली
3.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.9 सन्दर्भ ग्रन्थ
3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई तृतीय खण्ड की तृतीय इकाई से सम्बन्धित है, जिसका शीर्षक है – शनि की ढैय्या, साढ़ेसाती एवं उपाय विचार। इससे पूर्व की इकाई में आपने गोचरीय ग्रहों के विभिन्न राशियों और विविध भावों पर प्रभाव का अध्ययन कर लिया है, अब आप शनि की ढैय्या एवं साढ़ेसाती के बारे में जानेंगे।

ज्योतिष शास्त्र के फलित स्कन्ध में शनि की ढैय्या व साढ़ेसाती प्रमुख विषय है। वस्तुतः इसका सम्बन्ध शनि की गति से है। ढैय्या का अर्थ ढ़ाई व साढ़ेसाती का अर्थ साढ़े सात वर्ष से है।

शनि ग्रह अपनी गत्यानुसार व्यक्ति के जीवन को प्रभावित करता है। उन्हीं गतियों के फल से सम्बन्धित ढैया व साढेसाती का अध्ययन हम इस इकाई में करने जा रहे हैं।

3.2 उद्देश्य–

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपको –

1. शनि की ढैय्या के बारे में ज्ञान हो जायेगा।
2. साढ़ेसाती की गणना कर सकेंगे।
3. साढ़ेसाती के प्रभाव का अध्ययन कर सकेंगे।
4. साढ़ेसाती के तीन चरणों के विविध राशि प्रभावों को जान सकेंगे।

3.3 शनि के ढैय्या विचार

भारतीय फलित ज्योतिष के अनुसार जब गोचर में शनि किसी राशि से आठवें भाव में होता है तब ढैया लगता है। आमतौर पर ढैया को अशुभ फलदायी कहा गया है। **जब शनि ग्रह चंद्र कुंडली अर्थात जन्म राशि के अनुसार चतुर्थ व अष्टम से गोचर करते हैं तो जातक पर ढैय्या का प्रभाव होता है। ढैय्या का मतलब होता है ढाई वर्ष। यद्यपि शनि ग्रह प्रत्येक राशि में ही ढाई वर्ष रहता हैं। परन्तु ढैय्या का विचार और कहीं से नहीं होता है। फिर चतुर्थ और अष्टम से ही क्यों ? क्योंकि शनिदेव प्रत्येक भाव में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के अनुसार फल देते हैं। चतुर्थ और अष्टम भाव मोक्ष के भाव हैं।**

आज दुनिया में अत्यधिक व्यक्ति धर्म की तरफ कम और भौतिक सुखों की तरफ ज्यादा ध्यान दे रहे हैं। परन्तु ज्योतिष का नियम है कि शनि ग्रह जिस भाव से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के लिए गोचर करे, उसी के अनुरूप व्यक्ति को कार्य करना चाहिए। जो व्यक्ति ढैय्या में तीर्थ यात्रा, समुद्र स्नान और धर्म के कार्य दान-पुण्य इत्यादि करते हैं, उन्हें ढैय्या में भी शुभ फल की प्राप्ति होती है। लेकिन जो उस अवधि में इन कामों से दूर रहते हैं, उन्हें अपने ही पूर्वकृत अशुभ कर्मों के फलस्वरूप

शारीरिक-मानसिक परेशानी और कारोबार में हानि होती है।

चतुर्थ भाव की ढैय्या

ढैय्या का फल जानने के लिए सर्वप्रथम यह देखा जाता है कि शनिदेव किस भाव में बैठे हैं और कहां-कहां उनकी तीसरी, सातवीं व दसवीं पूर्ण दृष्टि पड़ रही है क्योंकि उन भावों से संबंधित बातों में जातक को पूर्वकर्मवश अशुभ फल की प्राप्ति होती है। चतुर्थ भाव से शनिदेव छठे भाव को, दशम भाव को तथा लग्न को देखते हैं। अर्थात् जब शनिदेव चतुर्थ भाव से गोचर करते हैं तो जातक के निजकृत पूर्व के अशुभ कर्मों के फलस्वरूप उसके भौतिक सुखों यानी मकान व वाहन आदि में परेशानी पैदा होती है जिसका संकेत कुण्डली में शनिदेव की स्थिति दिया करती है। जिसकी वजह से उसके कारोबार में फर्क पड़ता है। उसकी परेशानी बढ़ जाती है। परेशानियों के बढ़ने से जातक को शारीरिक कष्ट की भी प्राप्ति होती है। अर्थात् चतुर्थ भाव की ढैय्या में मकान खरीदना या बेचना नहीं चाहिए। साथ ही अपने व्यवसाय में भी कोई विशेष परिवर्तन नहीं करना चाहिए। जो व्यक्ति अधिकतर शांत रहते हैं और धार्मिक कार्यों में संलग्न रहते हैं, ऐसे व्यक्तियों को चतुर्थ ढैय्या में किसी भी प्रकार की परेशानी पैदा नहीं होती है। और जो व्यक्ति नया कार्य करते हैं, उन्हें परेशानी पैदा होती है।

अष्टम भाव की ढैय्या –

जब शनिदेव चंद्र कुंडली अर्थात जन्म राशि के अनुसार अष्टम भाव से गोचर करते हैं तो ढैय्या देते हैं, अष्टम ढैय्या चतुर्थ की ढैय्या से ज्यादा अशुभ फलों का संकेत देती है। मेरे अनुभव के अनुसार जब यह ढैय्या शुरू होती है तो जातक को शुभ फल की प्राप्ति होती है और वह नया कार्य करने लगता है। परन्तु अष्टम ढैय्या नया कार्य शुरू कराकर बीच में ही धोखा दे जाती है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को अष्टम ढैय्या में विशेष सावधानी बरतनी चाहिए। क्योंकि अष्टम भाव से शनिदेव तीसरी दृष्टि से दशम भाव को सप्तम दृष्टि से द्वितीय भाव को और दशम दृष्टि से पंचम भाव को देखता है। अष्टम ढैय्या सबसे पहले कारोबार में परेशानी पैदा करती है। जिसकी वजह से जातक के निजी कुटुंब और धन पर बुरा असर पड़ता हैं तथा धन की वजह से जातक के संतान के ऊपर भी कुप्रभाव पड़ता है। अष्टम ढैय्या में देश, काल व पात्र के अनुसार संतान को कष्ट अथवा संतान से कष्ट प्राप्त होता है। अत: जातक को अष्टम ढैय्या में कोई भी नया कार्य, यानी बैंक आदि से कर्ज या जमीन-जायदाद का खरीदना-बेचना या पिता की संपत्ति को बांटना नुकसानदायक होता है। अत: इस ढैय्या के दौरान ये कार्य नहीं करने चाहिए। अष्टम ढैय्या में जो व्यक्ति धार्मिक कार्य, समुद्र स्नान व तीर्थ यात्रा आदि करता है और परमात्मा को हाजिर-नाजिर रखता है तो उस व्यक्ति को अष्टम ढैय्या में किसी भी प्रकार की परेशानी नहीं होती है। जो व्यक्ति परमात्मा में विश्वास नहीं करते हैं, उन्हें शनिदेव लालच देकर ऐसा फंसा देता है कि वे जीवन भर परेशान रहते हैं। फिर भी याद रहे, इस प्रतिकूल परिस्थिति के पीछे भी संबंधित जातक के पूर्वकृत अशुभ कर्म ही रहते हैं।

ढैय्या किसको और कब ?

- शनिदेव जब कर्क एवं वृश्चिक राशि में भ्रमण करते हैं तो मेष राशि के लोगों पर शनिदेव की ढैय्या रहती है।
- शनिदेव सिंह व धनु राशि में गोचर में भ्रमण करते हैं, तब वृष राशि के लोगों पर शनिदेव की ढैय्या रहती है।
- कन्या व मकर राशि में शनिदेव के भ्रमणकाल में मिथुन राशि के लोगों पर शनिदेव की ढैय्या रहती है।
- तुला एवं कुम्भ राशि में गोचर में शनिदेव जब भ्रमण करते हैं तब कर्क राशि के लोगों पर शनिदेव की ढैय्या रहती है।
- गोचर भ्रमणकाल में शनिदेव जब वृश्चिक और मीन राशि में आते हैं तो सिंह राशि वालों पर शनिदेव की ढैय्या रहती है।
- शनिदेव जब धनु और मेष राशि में स्थित होते हैं तो कन्या राशि के लोगों पर शनिदेव की ढैय्या रहती है।
- शनिदेव जब मकर एवं वृष राशि में गोचर में स्थित रहते हैं तब तुला राशि के जातकों पर शनिदेव की ढैय्या रहती है।
- गोचर में शनिदेव जब कुंभ और मिथुन राशि में प्रवेश करते हैं तो वृश्चिक राशि के लोगों पर शनिदेव की ढैय्या रहती है।
- शनिदेव जब गोचर में मीन तथा कर्क राशि में स्थित रहते हैं तब धनु राशि के लोगों पर शनिदेव की ढैय्या रहती है।
- जब शनिदेव मेष और सिंह राशि से गोचर करते हैं तब मकर राशि वालों को शनिदेव की ढैय्या प्रारम्भ होती है।
- गोचर में शनिदेव जब वृष और कन्या राशि में आते हैं तब कुम्भ राशि वालों को शनिदेव की ढैय्या प्रारम्भ होती है।
- शनिदेव जब गोचर में मिथुन व तुला राशि में गोचर करते हैं तब मीन राशि वाले लोगों को शनिदेव की ढैय्या प्रारम्भ होती है।

ढैय्या में व्यक्ति को धैर्य से काम लेना चाहिए क्योंकि ढैय्या में व्यक्ति को अपने सगे संबंधियों की भी मदद कम से कम मिलती है। इसलिए स्वयं सभी कार्य करने पड़ते हैं। इसलिए प्रतिदिन प्रात:काल चिड़ियों को दाना डालें, उनके लिए पानी रखें। चींटियों को आटा शक्कर डालें और स्नान आदि से निवृत होकर सूर्य को प्रतिदिन जल दें। बुरे कार्यों से बचें। ढैय्या में सफलता प्राप्त होगी। वैसे आगे उपाय विस्तार से लिखे हुए हैं परंतु उपरोक्त बातें दैनिक जीवन में जरूरी हैं।

गोचर फल निरूपण में ज्योतिर्विद भीषण ग्रह शनि का अध्ययन सचेत भाव से करता हैं। गोचरीय शनि की दो स्थितियां है –

1. ढैय्या शनि कण्टक शनि
2. साढ़ेसाती शनि

चन्द्र लग्न से गोचरीय शनि 4–7–10 भाव में स्थित हो तो कण्टक शनि निरूपित होता है। यह स्थिति सुखप्रद नहीं होती। आधियाँ–व्याधियाँ, विपत्तियां एवम् भ्रांतियाँ व्यक्ति को उत्पीड़ित करती है। जीवन नितांत अस्थिर–अनिश्चित रहता है। चितवृत्ति उद्विग्न रहती है। अनेक क्लेश जन्म लेते हैं।

1. चतुर्थ भाव स्थिति में व्यक्ति रूग्ण रहता है। आवासीय सुख में क्षति होती है। उसमें परिवर्तन होता है। अस्थिरता आती है।
2. सप्तमभाव स्थिति में (विशेषकर चर राशिगत शनि में) यदि अन्य प्रबल योग न हों तो निश्चित रूप से दीर्घ प्रवास होता है।
3. दशम भाव स्थिति में कार्य प्रबल रूप से अवरूद्ध होते हैं। व्यवसाय/आजीविका में व्यक्तिक्रम होता है।

3.4 साढ़े साती शनि

गोचर का शनि जब चंद्र राशि से एक भाव पहले भ्रमण करना शुरु करता है तब जातक की शनि की साढ़ेसाती का आरंभ होता है। साढ़ेसाती का अर्थ है – साढ़े सात साल अर्थात जन्म चंद्र से एक भाव पहले, चंद्र राशि व चंद्र राशि से एक भाव आगे तक के शनि के भ्रमण में पूरे साढ़े सात साल का समय लगता है क्योंकि शनि एक राशि में ढ़ाई साल तक रहता है। इस साढ़ेसाती में जातक को कई बार मानसिक व शारीरिक कष्टों का सामना करना पड़ता है लेकिन शनि की साढ़ेसाती सदा अशुभ नहीं होता है।

शनि की साढ़ेसाती व्यक्ति को कैसे फल प्रदान करेगी यह व्यक्ति की जन्म कुंडली के योगों पर निर्भर करेगा। जन्म कुंडली के योगों के साथ दशा/अंतर्दशा किस ग्रह की चल रही है और दशानाथ कुंडली के किन भावों से संबंध बना रहा है आदि बहुत सी बातें शनि की साढ़ेसाती के परिणाम देने के लिए देखी जाती है। जन्म कुंडली में शनि महाराज स्वयं किस हालत में है, शनि कुंडली के लिए शुभफलदायक हैं अथवा अशुभ फल देने वाले हैं और शनि किन योगों में शामिल हैं अथवा नहीं है, पीड़ित है अथवा नहीं है आदि बातें शनि के लिए देखी जाती हैं। इनके अलावा और भी बहुत सी बातें हैं जिनका विश्लेषण करने के बाद ही शनि की साढ़ेसाती का फल कहना चाहिए।

जनमानस में अत्यन्त प्राचीन समय से साढ़े साती को जातक का मनोबल परास्त करने हेतु इस ब्रह्मस्त्र के रूप में प्रयोग करते हैं। साढ़े साती के विषय में अनेकानेक भ्रातियाँ प्रचलित है। लौकिक कथाओं में साढ़ै साती काल प्रहार के रूप में प्रस्तुत होती है।

'द्वादशे जन्मे राशौ द्वितीय च शनैश्चरः।'
सर्धानि सप्तमवर्षाणि तदा दुःखैर्युतो भवेत्।।'

'रिष्फरूपधनभेषु भास्करिः संस्थितों भवति यस्य जन्मभात्।
लेचनोदरपदेषु संस्थितिः कथ्यतेरविजलोकजैर्जनैः।।

शनि जन्म राशि से 12–1–2 स्थानों में संस्थित हो तो उसकी साढ़े साती आरोपित होती है शनि द्वादस्थ हो तो 2 1/2 वर्ष तक उसकी दृष्टि होती है। जन्म राशिस्थ हो तो ढाई वर्ष तक भोग कहा जाता है। द्वितीयस्थ हो तो पद कहलाता है। अर्थात् शनि क्रमशः नेत्रों, उदर एवं पाद में निवास करता है इसे वृहत् कल्याणी दशा भी कहते हैं। ढैय्या अथवा लघुकल्याणी नाम से ढाई वर्ष तक रहने वाली एक अन्य शनि दशा भी है– 'कल्याणी प्रददानि वै रविसुतो राशेश्चतुथष्टिमें।'

शनि मेषादि राशियों का भ्रमण प्रायः 30 वर्ष में सम्पन्न कर लेता है। इसके अनुसार एक राशि में लगभग ढाई वर्ष तक निवास करता है। साढे साती का प्रारम्भ तब होता है जब गोचरीय शनि जन्म राशि से द्वादश भाव में प्रवेश करता है। द्वादश, लग्न एवं द्वितीय भाव तक साढ़े साती का क्रम चलता है। इन साढे सात वर्षों का पर्याय साढ़े साती है। एक बार साढ़ेसाती सहन करने वाला व्यक्ति 30 वर्ष पश्चात् ही इसके प्रभाव से पुनः आकान्त होता है। अपवादों को त्योग दिया जाये तो व्यक्ति जीवन में प्रायः तीन बार साढ़े सात का साक्षात्कार करता है।

सम्पूर्ण साढ़े सात वर्ष समान ही नहीं होते। शनि जन्मांग के अनुसार फल प्रस्तुत करता है। शनि की साढ़े साती जानने के लिए जातक की जन्म राशि से शनि के गोचर को देखा जाता है। गोचर में जब शनि जन्म रशि से 12वें स्थान पर आता है तो शनि की साढ़े साती प्रारम्भ होती है। शनि एक राशि पर लगभग ढाई वर्ष रहता है। ढाई वर्ष बारहवें स्थान पर, ढाई वर्ष जन्म राशि पर तथा ढाई वर्ष चन्द्र राशि से दूसरे स्थान पर रहता है।

यह साढ़े सात साल शनि की साढ़े साती कहलाती है। शनि की साढ़ेसाती कब आरंभ होती है और कब समाप्त होती है यह जातक के कुंडली में चंद्रमा के राशि और अंशों पर निर्भर करता है। यह साढ़ेसाती जातक की जन्मकुंडली में स्थित चंद्रमा के अंशों से 450 पूर्व प्रारंभ होती है तथा 450 पश्चात तक रहती है। जातक के जीवन में शनि की साढ़ेसाती कब शुभ रहेगी और कब अशुभ रहेगी यह इस बात पर निर्भर करता है कि चंद्रमा किस राशि से गोचर कर रहा है गोचरित शनि का संबंध उसकी गोचरित राशि के स्वामी के साथ देखना चाहिए। उदाहरण के लिए शनि यदि सिंह राशि से गोचर करेगा तो शनि का संबंध सिंह राशि के स्वामी सूर्य के साथ देखना होगा जो कि शत्रु संबंध है अतः शनि का गोचर सिंह राशि से कष्टपूर्ण होगा और सिंह राशि जिस भाव में स्थित होगा उस भाव से संबंधित कष्ट या अभाव रहेगा। इसके विपरीत यदि शनि का गोचर मित्र राशि के ऊपर से होता है तो लाभ होता है और जिस भाव से गोचर होगा उस भाव से संबंधित लाभ मिलेगा। शनि का संबंध सम होने पर उस भाव से संबंधित फल सामान्य रहेगा। इस आधार पर शनि की साढ़ेसाती जातक के लिए कैसी रहेगा।

3.4.1 साढ़े साती का विविध राशियों पर प्रभाव

शनि की ढैय्या से शुभाशुभ ज्ञान

चन्द्र राशि	पहली ढैय्या	दूसरी ढैय्या	तीसरी ढैय्या
मेष	सम	अशुभ	शुभ
वृष	अशुभ	शुभ	शुभ
मिथुन	शुभ	शुभ	अशुभ
कर्क	शुभ	अशुभ	अशुभ
सिंह	अशुभ	अशुभ	शुभ
कन्या	अशुभ	शुभ	शुभ
तुला	शुभ	शुभ	अशुभ
वृश्चिक	शुभ	अशुभ	सम
धनु	अशुभ	सम	शुभ
मकर	सम	शुभ	शुभ
कुम्भ	शुभ	शुभ	सम
मीन	शुभ	सम	अशुभ

यह शुभाशुभ ज्ञान शनि की नैसर्गिक मैत्री से निकाली गई है। यदि पंचधा मैत्री में ग्रहों की शुभाशुभ स्थिति में फर्क पड़ता है तो साढ़े साती के शुभाशुभ में अंतर आ जाता है। साढ़े साती के उपाय करने के लिए पहले शनि के स्वभाव को जानिए। शनि एक क्रूर ग्रह है। इसकी साढ़े साती के जीवन में अपना प्रभाव जरूर दिखाती है। मकर और कुम्भ शनि की राशियां है। इन राशियों के जातक पर जब शनि की साढे साती आती है तो शनि के शुभ प्रभावों में कमी जरूर आ जाती है। कुण्डली में शनिा यदि शुभ व योगकारक ग्रह हैं तो ज्यादा अशुभता नहीं होती।

शनि यदि कुण्डली के हिसाब से बाधक, मारक या अशुभ ग्रह है तो साढ़े साती में शनि की अशुभता और बढ़ जाती है। शनि कुण्डली में जिस भाव में बैठता है उस भाव के फलों में वृद्धि करता है और अपनी तीसरी, सातवीं और दसवीं दृष्टि से जिन भावों को देखता है उन भावों के फलों में कमी लाता है। शनि से मनमुटाव, रंजिश, कलह, जेल हत्या, दीर्घकालिक रोग, उपेक्षा, अपमान, असफलता, बाधाएं संबंधों में कटुता और निराशा आदि विचार होता है।

सम्पूर्ण साढ़ै सात वर्ष बाधक, मारक या अशुभ ही नहीं होते। शनि जन्मांग स्थिति के अनुसार फल करता है।

इसके अतिरिक्त तीनों चरणों का समय परिणाम प्रस्तुत हैं–

1. प्रथम चरण–व्यक्ति आर्थिक रूप अत्यन्त पीड़ित रहता है। आय की अपेक्षा व्ययाधिक्त होने से योजनायें श्रृंखलित होती हैं। आर्थिक क्षति पीड़ित रहती है।

व्यक्ति निरूद्देश्य भ्रमण करता है। पिता की माता को मारक कष्ट होता है। नेत्रों की व्याधि सम्भव है, चश्में का प्रयोग अपेक्षित होगा। व्यक्ति का स्नायु तन्त्र तनाव ग्रस्त रहता है। अभिभावक एवं आत्मीय कष्ट का अनुभव करते हैं। आय एवं लाभ नकारात्मक रूप से प्रभावित होता है। कुटुम्ब से वियोग होता है। पिता को कष्ट होता है।

2. द्वितीय चरण–आर्थिक चिन्तायें निरन्तर रहती है। शारीरिक सामर्थ्य, प्रभाव व गति आक्रांत होती है। मानसिक स्तर पर उद्वेलन रहता है। व्यर्थ का व्यय व्यथित करता है। कोई कार्य मनोनुकूल नहीं होता। अपूर्ण कार्य दुखी करते हैं। व्यवधान प्रबल रहते हैं। व्यक्तित्व मन्द होता है। गार्हस्थिम अथवा पारिवारिक तथा व्यावसायिक जीवन अस्त व्यस्त रहता है। किसी संबंधी को मारक कष्ट होता है। दीर्घ यात्रायें, शत्रुओं से कष्ट, आत्मीयों से पार्थक्य, काराकष्ट,व्याधि, सम्पत्ति क्षति, सामाजिक पतन, मित्रों का अभाव एवं कार्याविरोध इस चरण के फल है। प्रयास निष्फल होते हैं।

3. तृतीय चरण–व्यर्थ के विवाद उत्पन्न होते हैं। आत्मीयों से निष्प्रयोजन संघर्ष होता है। उन्हें गम्भीर व्याधि अथवा किसी को मारक होता है। व्यक्ति का स्वास्थ्य, सन्तति का सुख एवं उनका आयुर्बल प्रभावित होता है। सुखों का नाश होता है। पदाधिकार विलुप्त होता है। व्यय अत्यधिक होता है। दैहिक रूप से निर्बलता अथा जुड़ता का अनुभव होता है। आनन्द बधिक होता है। धनागत होता है किन्दु उसी गति से निर्गमन भी होता है। निम्नवृति के व्यक्ति से प्रवंचना होती है।

3.4.3 साढ़े साती कुछ विशेष बिन्दु

प्रत्येक आवृत्ति में साढेसाती की सामर्थ्य भिन्न–भिन्न होती है। प्रथम आवृत्ति अत्यन्त प्रबल होती है। व्यक्ति कष्टों–अवरोधों–क्षतियों से प्रभावित होता है।

द्वितीय आवृत्ति अपेक्षाकृत संयमी होती है। साढ़ेसाती का मारक प्रभाव न्यून रहता है। व्यक्ति किंचित सुविधा अनुभव करता है।

तृतीय आवृत्ति में व्यक्ति बहुमुखी आपत्तियों से प्रभावित रहता है। शनि अपने क्रूर प्रभाव से जीवन का सर्वनाश करने में प्रवृत्त हो जाता है। इस आक्रमण से अति सौभाग्यशाली जातक ही सुरक्षित रह सकते हैं।

प्रत्येक ग्रह उच्चनीचादि प्रभावों से युक्त होकर ही शुभाशुभ परिणाम प्रसारित करता है। शनि जन्मांग में उच्चस्थ हो, स्वराशिस्थ हो, मित्रराशिस्थ हो या मूलत्रिकोणस्थ हो तो परिणामों में अपेक्षया शुभता रहती है। जन्मांगीय शनि सचल और गोचरीय शनि दुर्बल हो तो परिणाम मध्यम रहता है। दोनों स्थानों पर शनि दुर्बल हो तो अत्यधिक अप्रिय फल प्राप्त

होते हैं।

कुछ विशिष्ट सूत्र

1. यदि गोचरीय शनि आवंछित अमंगल परिणाम प्रदान कर रहा हो तो अन्य ग्रहों से प्राप्त होने वाले फलों में भी न्यूवता उपस्थित होती है।
2. यदि गोचरीय शनि अप्रिय फलप्रदाता हो और बृहस्पति सर्वदा शुभ फलप्रदाता हो तो अप्रिय फलों में वृद्धि हो जाती है।
3. जिस समयान्तर में शनि शुभ फल प्रदाता हो और बृहस्पति अप्रिय फलप्रदाता हो – उसमें प्रायः अनुकूल परिणाम ही प्राप्त होते हैं।
4. बृहस्पति एवं राहु के अप्रिय फल सूचित हों और शनि अनुकूल परिणाम प्रदाता हो तो प्रिय फलों की मात्रा अधिक रहती है।

   ऊपर लिखित तथ्यों के साथ यदि अग्रांकित सूत्रों का निरन्तर ध्यान रखा जाये तो फलकथन का सत्यांश पुष्ट होता है।

सूर्य प्रत्येक ग्रह की दशा फल प्रदान करता है एवं चन्द्र उस फल का पोषण करता है। अतः दशारम्भ के समय चन्द्र किस राशि में संस्थित है यह अति महत्वपूर्ण बिन्दु है। दशाफल विवेचन में इसका उल्लेख आवश्यक है अर्थात् यदि शनि की महादशा के प्रारम्भ में गोचरीय चन्द्र मेषादि विभिन्न राशिगत हो तो परिणाम भिन्न–भिन्न होते हैं–

'सौम्यस्त्रीधनलाभः कुलीरगेन्दौ भवेद्दशारम्भे।
कन्यां दूषयति नरः कुजभवने हन्ति वा युवतिम्।
विद्याशास्त्रंज्ञानं मित्रप्राप्तिं करोति बुधराशि।
शौक्रेऽन्नपानमतुलं सौख्यं चन्द्रेऽरिनाशं च।।
सुखधनमानज्ञाप्तिं जीवगृहे दिशाति शीतांशुः।
परिणतवयसमरूपां सौरगृहे वर्धकीं वाऽपि।
दुर्गारण्यनिवासं कर्षणगृहकर्मसेतुकर्मान्तम्।
सिंहे शशी प्रकुरूते स्त्रीपुत्रविवादमरतिं च।।

दशारम्भ में चन्द्र कर्कस्थ हो तो निश्छल नारी का सन्निध्य एवं लोक समादर होता है। मेष या वृश्चिकस्थ हो तो पत्नी का विनाश एवं अल्पवयसा अविवाहिता से दैहिक सम्पर्क होता है। कन्या या मिथुनस्थ हो तो मित्र सहयोग एवं प्रखर विद्या योग होता है। तुला या वृषस्थ हो तो शत्रुसंहार, भोजन–भूषण–भोग का सुख होता है। धनु या मीनस्थ हो तो अनुचर सुख संपत्ति प्राप्ति सम्मानोपलब्धि एवं आनन्द प्राप्त होता है। मकर अथवा कुम्भस्थ हो तो कुटिल, प्रौढ़ा अथवा अगम्या नारी से सम्पर्क होता है। सिंहस्थ हो तो निर्जन प्रान्तर में निवास, कृषि कर्म, गृहकार्य, पारिवारिक विवाद एवं प्रेमाभाव होता है।

स्पष्ट है कि शनि अपनी विभिन्न दशाओं में अनेकानेक सिद्धान्तों के अनुसार शुभाशुभ फल प्रदान करता है। अतः एकांगी दृष्टि से परिणाम विचार अशुद्ध पद्धति है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1 ढैया का अर्थ होता है

(अ) $7_{1/2}$ (ब) 5 वर्ष (स) $2_{1/2}$(द) कोई नहीं।

2 वृहत कल्याणी में शनि का प्रभाव राशि से किस स्थान पर होता है।

(अ) चतुर्थ, पंचम अष्टम (ब) अष्टम नवम द्वादश (स) द्वादश प्रथम द्वितीय (द) सप्तम, नवम, चतुर्थ

3. शनि की साढ़ेसाती कितने वर्षों का होता है।

अ. साढ़े सात ब. सात स. आठ द. 19

सभी राशियों पर शनि की साढ़ेसाती के प्रभाव से अन्तर होना स्वाभाविक है, क्योंकि गोचर का शनि प्रत्येक राशि में, उसके अधिपति के साथ अपने सम्बन्ध के अनुसार ही फल प्रदान करेगा। जिस राशि में शनि भ्रमण कर रहा है, वह शनि की उच्च, नीच, स्व, मित्र अथवा शत्रु राशि होगी। उस राशि से शनि का क्या सम्बन्ध है, शनि किस भाव का अधिपति है, जन्मांग में शनि की स्थिति का क्या फल है– ये विचारणीय तथ्य हैं। शनि की साढ़ेसाती यदि उस समय प्रारम्भ हो जब किसी योगकारक शुभ ग्रह की दशा चल रही हो तो साढ़ेसाती का अशुभ फल स्वयं ही न्यून प्रतीत होगा। जब भी शनि की साढ़ेसाती, शनि का फलाफल विवेचन करना हो तो निम्नांकित संकेत बिन्दु विश्लेषण के समय स्मरणय हैं:–

1. शनि किस राशि में भ्रमण कर रहा है, उस राशि से शनि का क्या संबंध है? राशि के स्वामी की शनि से मित्रता है अथवा शत्रुता?
2. जन्म कालीन चन्द्रमा से शनि जिस भाव में भ्रमण कर रहा है, वहाँ से किन–किन भावों एवं ग्रहों को अपनी दृष्टि से प्रभावित करेगा।
3. जिस राशि पर साढ़ेसाती शनि की ढैय्या का विचार करना है, उस राशि से शनि किन–किन भावों का स्वामी है? क्या शनि उस राशि के लिए योगकारक है? शनि का भावाधिपत्या विशेष उल्लेख्य है। वृष लग्न के लिए शनि की साढ़ेसाती उतनी अनिष्टकारी नहीं होगी, जितनी कर्क या सिंह लग्न के लिए होगी।
4. जन्मांग में शनि की स्थिति पर भी गंभीरतापूर्वक विचार करना चाहिए। शनि यदि योगकारक होकर शुभ स्थिति में संस्थित हो तो साढ़ेसाती के समय सम्बद्ध भावों की हानि अपेक्षाकृत कम होगी। जैसे शनि–यदि योगकारक होकर एकादश भावस्थ है तो व्यापार में हानि नहीं होगी, धन–संबंधी कोई कोई अशुभ प्रकरण नहीं होगा। यदि वृष लग्न है तो इस स्थिति में नौकरी में अवनति या अपमानजनक अन्य घटनाएं नहीं होंगी। उसके विपरीत यदि शनि जन्मांग में अशुभ स्थिति में हो तेा सम्बन्धित भावों की विशेष हानि होगी। वृश्चिक लग्न हो तथा शनि तृतीयेश व चतुर्थेश होकर अष्टमभावस्थ हो तो साढ़ेसाती शनि में भाइयों के साथ संघर्ष तथा अप्रिय वाद–विवाद होगा। जातक को तीखी आलोचना और अपमानजनक स्थितियाँ

झेलती पड़ेगी। घर छोड़ना पड़ेगा, घर गाँव या नगर छोड़ना पड़ सकता है। सम्पत्ति की हानि होगी या जायदाद संबंधी मुकदमा चलेगा। माता के साथ कुछ अनिष्ट होगा। पिता की मृत्यु भी संभव है, क्योंकि अष्टम भाव पिता के भाव नवम से द्वादश होता है। धन की हानि होगी, मानसिक चिन्ता की विभिन्न स्थितियाँ बार–बार उत्पन्न होंगी। यह फल वृश्चिक लग्न के अष्टमस्थ शनि का समझना चाहिए। तदोपरान्त यह विचार करना चाहिए कि जन्मकालीन चन्द्रमा की स्थिति क्या है तथा राशि विशेष के लिए क्या प्रभाव होगा? उस प्रभाव के लिए वृश्चिक लग्न का अष्टमस्थ शनि किस प्रकार, कितनी और कब वृद्धिकारक हो सकता है?

5. जिस समय शनि एक राशि से दूसरी राशि मे प्रवेश करता है, उस समय के नक्षत्र और चन्द्रमा की स्थिति जातक क जन्म–नक्षत्र और जन्मकालीन चन्द्रमा के साथ कैसा संबंध स्थापित कर रही है, यह भी विचारणीय है।
6. साढ़ेसाती शनि का फल, जन्मकालीन ग्रह स्थितियों के फलाफल को बढ़ाता है अथवा कम करता है। कोई ऐसा फल नहीं देता जो जन्मांग में परिलक्षित न होता हो। स्मरणीय है कि कोई भी गोचर का ग्रह किसी घटना को जन्म नहीं देता वरन् घटना का समय निर्धारण करता है। शुभ फलों को कम या अधिक करता है। अतः फलादेश करते समय यह पूर्वाग्रह मन में नहीं रखना चाहिए कि शनि की साढ़ेसाती तो अरिष्ट ही करेगी। जहाँ तक साढ़ेसाती शनि का प्रश्न है, वह शुभता को कम ही करेगा, उसमें वृद्धि कदापि नहीं करेगा। जैसा कि कुछ विद्वानों की मान्यता है कि कहीं–कहीं साढ़ेसाती शनि बहुत लाभप्रद सिद्ध होता है। जब ग्रह स्थितियाँ शुभ फल की सृष्टि कर रही हों और उसी समयान्तर में लाभप्रद प्रारम्भ हो जाए तो यह भ्रम सम्भव है कि साढ़ेसाती शनि के कारण ही शुभ प्रकरण हो रहे हैं। मेरा अनुभ है कि यदि शनि की साढ़ेसाती न होती तो शुभ फलों में और अधिकता तथा अशुभ फलों में और भी न्यूवता होती।

3.4.4 साढ़े साती व ढैय्या में उपायों पर विचार

दुख से मुक्ति पाने के लिए व्यक्ति को दान दक्षिणा, पूजा–पाठ, जप–तप, यंत्र–मंत्र–तंत्र व रत्न का सहारा लेना पड़ता है। साढ़ेसाती के प्रभाव को कम करने के लिए निम्नलिखित उपाय सहायक हो सकते हैं :–

- शनि ग्रह की पूजा
- शनि का मंत्र जाप
- शनि यंत्र की पूजा
- श्री ग्रह पीड़ा निवारक शनि यंत्र की पूजाशनि योगकारक होने पर नीलम धारण
- करें या लोहे का छल्ला मध्यमा उंगली में डाले।
- रूद्राक्ष धारण करें।

- शिव जी की पूजा करें। नमो शिवाय मंत्र का जाप करें।
- हनुमान जी की पूजा करें।
- ईश्वर आराधना करें।
- मांस मदिरा का सेवन न करें।
- गलत कामों से दूर रहें।
- कर्मशील रहें।
- प्रतिदिन मंदिर जाकर भगवान से क्षमा याचना करें।
- शनिवार को उड़द, तेल व काले कपड़े का दान करें।
- शनिवार को पीपल के पेड़ को कच्चे दूध और जल से सींचे और पूजन–दीपन आदि करें।
- शनिवार को काले कपड़े न पहनें।
- मृत्युंजय का पाठ करें।
- अधिक कष्ट हो तो महामृत्युंजय का पाठ करें या योग्य व्यक्ति से करवाएं।
- शनिवार का व्रत करें व शनिवार व्रत कथा पढ़ें या सुनें।
- कृष्ण जी की भक्ति करें।

3.5 सारांश

इस इकाई में अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि भारतीय फलित ज्योतिष के अनुसार जब गोचर में शनि किसी राशि से आठवें भाव में होता है तब ढैया लगता है। आमतौर पर ढैया को अशुभ फलदायी कहा गया है। **जब शनि ग्रह चंद्र कुंडली अर्थात जन्म राशि के अनुसार चतुर्थ व अष्टम से गोचर करते हैं तो जातक पर ढैय्या** का प्रभाव होता है। **ढैय्या का मतलब होता है ढाई वर्ष। यद्यपि शनि ग्रह प्रत्येक राशि में ही ढाई वर्ष रहता हैं। परन्तु ढैय्या का विचार और कहीं से नहीं होता है। फिर चतुर्थ और अष्टम से ही क्यों ? क्योंकि शनिदेव प्रत्येक भाव में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के अनुसार फल देते हैं। चतुर्थ और अष्टम भाव मोक्ष के भाव हैं। गोचर का शनि जब चंद्र राशि से एक भाव पहले भ्रमण करना शुरु करता है तब जातक की शनि की साढ़ेसाती का आरंभ होता है। साढ़ेसाती का अर्थ है – साढ़े सात साल अर्थात जन्म चंद्र से एक भाव पहले, चंद्र राशि व चंद्र राशि से एक भाव आगे तक के शनि के भ्रमण में पूरे साढ़े सात साल का समय लगता है क्योंकि शनि एक राशि में ढ़ाई साल तक रहता है। इस साढ़ेसाती में जातक को कई बार मानसिक व शारीरिक कष्टों का सामना करना पड़ता है लेकिन शनि की साढ़ेसाती सदा अशुभ नहीं होता है।**

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. स
2. स
3. अ

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. गोचर विचार – अरूण बंसल
2. शनि शमन : मृदुला त्रिवेदी

3.8 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. शनि की ढैया से आप क्या समझते है। स्पष्ट रूप से लिखिये।
2. शनि की साढ़ेसाती का विस्तृत उल्लेख कीजिये।
3. ढैया व साढ़ेसाती के प्रभावों का निदान पक्ष का वर्णन कीजिये।

इकाई – 4 गोचर में नक्षत्र के विचार से ग्रहों के अंग फल तथा स्थान फल एवं ग्रह वेध विचार

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 स्थान के अनुसार ग्रह गोचर फल
4.4 वेध विचार
4.5 गोचर में नक्षत्र के विचार से ग्रहों के अंग फल
    4.5.1 चन्द्र का अंग विभाग के अनुसार गोचर फल
    4.5.2 मंगल का अंग विभाग के अनुसार गोचर फल
    4.5.3 बुध, गुरू व शुक्र के अंग विभाग के अनुसार गोचर फल
    4.5.4 शनि, राहु व केतु का अंग विभाग फल
4.6 सारांश
4.7 शब्दावली
4.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.9 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई तृतीय खण्ड की चतुर्थ इकाई से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने शनि की ढैया व साढ़ेसाती का अध्ययन कर लिया है। अब आप इस इकाई में गोचरीय नक्षत्रों के आधार पर अंग फल व स्थान फल का अध्ययन करेंगे।

गोचरीय नक्षत्रों का भी फल होता है। ग्रहों के अंग व स्थान फल भी ज्योतिष शासत्र में कहे गये हैं। इससे सम्बन्धित अध्ययन इस इकाई में आप करने जा रहे है।

4.2 उद्देश्य

1. गोचर के नक्षत्र फल का ज्ञान प्राप्त कर पायेंगे।
2. सूर्य आदि ग्रहों वेध स्थान से परिचित हो सकेंगे।
3. शुभ गोचर के वेध का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
4. मंगल के गोचर फल वेध का ज्ञान प्राप्त कर पायेंगे।
5. सूर्यादि ग्रहों के विविध स्थानों पर प्रभाव का अध्ययन कर सकेंगे।
6. गोचर में नक्षत्र के विचार से ग्रहों के अंग व फल की गणना कर पायेंगे।

4.3 स्थान के अनुसार ग्रह गोचर फल

तनुस्थान व दशम स्थान में ग्रहों के गोचर विशेष महत्व रखते हैं। कुंडली में सूर्य और चंद्र जिस स्थान में हों वहां ग्रहों के भ्रमण भी उन स्थानों के अनुसार फल देते हैं। लग्न और दशम के बाद चतुर्थ और सप्तम स्थानों का महत्व है अन्य स्थानों में चंद्र, बुध, शुक्र व मंगल के भ्रमण का कोई विशेष परिणाम देखने में नहीं आता। कुंडली के रिक्त स्थान से ग्रहों के भ्रमण की अपेक्षा जिस स्थान मे कोई ग्रह है वहां से गोचर ग्रहों के भ्रमण के परिणाम अधिक दिखते हैं। बुध, शुक्र व सूर्य हमेशा निश्चित क्रम से तथा काफल जल्दी कुंडली के सभी स्थानों से भ्रमण कर लेते हैं। अतः केवल गोचर पद्धति से इनके फलों का विशेष अनुभव नहीं आता। बुध व शुक्र का गोचर जिस स्थान में हो वहां के फल कुछ प्राप्त हैं। क्लर्क, कारीगर, लेखक, वक्ता इन लोगों की कुंडली के लग्न या दशम स्थान से बुध का गोचर नये विचार, लेखन कार्य आदि के लिए अच्छा होता है। स्फूर्ति देने वाले लेख लिखे जाते हैं। शिक्षकों का अध्यापन अच्छा होता है। इससे कम परिणाम सप्तम व चतुर्थ स्थान में मिलते हैं। शुक्र का दशम स्थान व लग्न पर गोचर स्त्रीसुख, अन्य ऐश्वर्य सुख, आराम की दृष्टि से अच्छा होता है। इस समय यात्रा, अधिकारियों से मुलाकात, मित्रों से मिलना आदि में सफलता मिलती है। चंद्र दर्शन के समय (शुक्ल प्रतिपदा व द्वितीया को) चंद्र जिस स्थान में हो वहां के शुभ फल उस महीने में मिलेंगे। इस समय चंद्र जिस राशि में हो वहीं यदि कुंडली में लग्न हो तो उस मास में शरीर सुख, घर का सुख, व्यवसाय में सफलात, लेन देन में लाभ आदि शुभ फल मिलेंगे।

इसी प्रकार अन्य स्थानों के बारे में समझना चाहिए। सूर्य कुंडली में पाप ग्रह जिस स्थान में हों वहां से भ्रमण करते समय सात–आठ दिन अशुभ फल देता है। सूर्य का भ्रमण

प्रत्येक राशि में हर वर्ष निश्चित तारीखों को होता है। इसलिए हर वर्ष उन तारीखें को अशुभ फल मिलना कुछ लोगों को असंभव प्रतीत होगा। किंतु यह अनुभव में आता हैं कि प्रत्येक वर्ष में कुछ महीने अशुभ सिद्ध होते हैं, ये दिन वे होते हैं जब सूर्य कुंडली के पाप ग्रहयुक्त स्थानों से गोचर करता है। वार्षिक कुंडली में किसी महीने में अच्छी दिशा हो तो ही सूर्य के इस गोचर के अशुभ परिणाम नहीं होते, अन्यथा अवश्य होते हैं। जन्मकुंडली में सूर्य जिस राशि में हो उस पर गोचरित सूर्य की दृष्टि के समय अर्थात् जन्मास से सातवें महीने में कुछ न कुछ अस्वस्थता, सर्दी, जुकाम, दुर्बलता रहती है। लग्न स्थान दूषित होने पर है, अनुभव अवश्य आता है।

आचार्य वराहमिहिर की बृहत् संहिता के अध्याय 104 में गोचर ग्रहों के फल इस प्रकार बतलायें हैं, जन्म राशि से 3, 6, 10 भावों में सूर्य 3, 6 भावों में मंगल, 2, 4, 6, 8 भावों में बुध, 2, 5, 7, 9 स्थानों में गुरू 6, 7, 10 भावों में शुक्र तथा 3, 6 भावों में शनि का गोचर सिंह के समान भय उत्पन्न करात है।

सूर्य : जन्मस्थ चंद्र की राशि से सूर्य का गोचर मन को खेद, धन हानि, पेट के रोग व यात्रा के फल उत्पन्न करता है। दूसरे स्थान में धन हानि, मन में दुःख, संकट, आंखों के रोग के फल मिलते हैं। तीसरे स्थान में जायदाद मिलना, धन का संग्रह, शुभ कार्य, मन में आनंद, शत्रु का नाश के फल मिलते है। चतुर्थ स्थान में रोग व जायदाद के बारे में कष्ट होता है। पंचम स्थान में रोग व शत्रुओं से कष्ट होता है षष्ठ स्थान में स्वास्थ्य लाभ, शोक से छुटकारा, शत्रुनाश के फल मिलते हैं। सप्तम स्थान में प्रवास तथा पेट में कष्ट होता है। अष्टम में रोग, खांसी आदि, पत्नी से झगड़े जैसे फल मिलते हैं। नवम में धन प्राप्ति में अड़चनें, रोग, दीनता, संकट के फल मिलते हैं। दशम स्थान में सब कार्यों में सफलता मिलती है। एकादश में सब कार्य सुगम होते हैं। बारहवें स्थान में कामों में गड़बड़ी पैदा होती है।

चंद्र : जन्मस्थ चंद्र, राशि से चंद्र का भ्रमण अन्न–वस्त्र अच्छा देता है। धन स्थान में मानहानि, धन की कमी, विघ्नों की उत्पत्ति होती है। तृतीय में वस्त्र, स्त्री सुख व धन मिलता है। चतुर्थ में लोगों का भरोसा नहीं रहता। पंचम में दीनता, रोग, शोक, यात्रा में कष्ट होते हैं। षष्ठ में धन व सुख मिलते हैं। सप्तम में धन, वाहन, सम्मान सुख की नींद का लाभ होता है। अष्टम में सर्प आदि से भय होता है। नवम में उदासी, बंधन, मेहनत, पेट में दर्द आदि के कष्ट होते हैं। दशम में सब काम सफल होते हैं। एकादश में निकट संबंधियों से आनंद मिलता है। बारहवें में आय से अधिक खर्च होता है। मदोन्मत्त बैल जैसी विपत्तिकर घटनाएं होती है।

मंगल : जन्म राशि से मंगल का गोचर उपद्रव देता है। दूसरे स्थान से मंगल का गोचर शारीरिक या धन के कष्ट, शत्रुओं का कष्ट सरकारी मामलों में कष्ट, बलवान होने पर भी पित्त रोग से कष्ट, आग व चोरों से कष्ट ये फल मिलते हैं। तीसरे स्थान से मंगल का गोचर से भूख बढ़ती है, तेज बढ़ता है, लोगों पर हुकूमत चलाता है, धन व ऊनी वस्त्र,

खदानों से धातु आदि का लाभ होता हैं चतुर्थ में मंगल के गोचर से बुखार, पेट दर्द, रक्त क रोग, जुल्म से या बुरे लोगों की संगति से नुकसान होता है। पंचम में मंगल के गोचर से लोगों से शत्रुता, रोग, पुत्र आदि से दुःख चंचल बुद्धि से कष्ट होता है। षष्ठ में मंगल के गोचर से शत्रुओं का भय नहीं रहता, झगड़े नहीं होते, धन मिलता है, दूसरों का मुंह नहीं देखना पड़ता। सप्तम में मंगल के गोचर वश पत्नी का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता, स्वयं के आंखों में कष्ट रहता है। अष्टम में मंगल के गोचर वश रक्त दूषित होकर फोड़े–फुंसी होते हैं, खर्च बहुत होता है। नवम में मंगल के गोचर वश अपमान, धनहानि, शरीर की अस्वस्थता, धातु क्षय आदि से गति मंद होती है। दशम में मंगल के गोचर वश सब तरह से धन लाभ, ग्यारहवें में मंगल के गोचर वश विजय तथा अधिकार की प्राप्ति एवं बारहवें में मंगल के गोचर वश बहुत खर्च, संकटों से संताप, अपने उच्चता का घमंड, घर में स्त्री का क्रोध, पित्त विकार, आंखों में कष्ट आदि से दुःख होता है।

बुध : जन्मस्थ चंद्र से बुध के गोचर के समय लोगों की चुगली से कष्ट होता है। सरकारी मामलों में जायदाद नष्ट होकर बंधन योग होता है, लोग दूर रहना चाहते हैं। दूसरे स्थान में बुध के गोचर काल में धन लाभ होता है किंतु सम्मान नहीं मिलता। तृतीय में बुध के गोचर काल में मित्र मिलते हैं किंतु राजा व शत्रुओं के भय से, मित्रों से दुराव रहता है, अपना आचरण बिगड़ने से लोगों से दूर रहना चाहते हैं। चतुर्थ में बुध के गोचर काल में रिश्तेदार व परिवार के लोगों में वृद्धि होकर धन लाभ होता है। पंचम में बुध के गोचर से स्त्री–पुत्रों से झगड़ा होता है, स्त्री सुख नहीं मिलता। षष्ठ में बुध के गोचर काल में सौभाग्य, विजय, उन्नति की प्राप्ति होती है सप्तम में बुध के गोचर वश कष्ट और असफलता मिलती है। अष्टम से बुध के गोचर काल में पुत्र प्राप्ति, विजय, धन व वस्त्र का लाभ होता है, बुद्धि तेज होती है। नवम में बुध के गोचर वश विघ्न आते हैं। दशम में बुध के गोचर से शत्रु नाश, धन लाभ, सुंदर घर में स्त्री सुख की प्राप्ति होती हैं ग्यारहवें में बुध का गोचर हो तो धन, सुख, स्त्री, पुत्र, मित्र, वाहन आदि के लाभ से संतोष, उत्साह रहता है लोग प्रोत्साहन देते हैं। व्यय स्थान में बुध का गोचर हो तो शत्रुओं से पराजय, रोग, स्त्रीसुख में बाधा आदि से कष्ट होता है।

गुरू : जन्म राशि से गुरू के गोचर के समय धन हानि, पद से हटना, कष्ट, बुद्धि में मंदता जैसे फल मिलते हैं। दूसरे स्थान में गुरू का गोचर वश शत्रु नष्ट होकर धन व स्त्री सुख मिलता है। तृतीय में गुरू का गोचर मन में अस्थिरता, कामों में अड़चनें रहती है। चतुर्थ में गुरू का गोचर भाई बंधुओं से कष्ट के कारण घर छोड़ने की इच्छा होती है, मन अशांत रहता है। पंचम में गुरू के गोचर काल में पुत्र प्राप्ति, रिश्तेदारों से मेल, कल्याण होता है, घर, वस्त्र, पशु आदि की प्राप्ति, स्त्री सुख से फल मिलते हैं। षष्ठ में गुरू के गोचर काल में स्त्री के दुर्व्यवहार से झगड़े, असंतोष बने रहते हैं। सप्तम में गुरू के गोचर काल में स्त्री सुख, धन, भोजन, वाहन, बुद्धि में कविता की ओर प्रेरणा आदि का लाभ होता है। अष्टम में गुरू का गोचर काल में बंधन, रोग, शोक, यात्रा में कष्ट, मरण जैसी शारीरिक वेदना होती

है। नवम में गुरू के गोचर काल में कुशलता, संतति, लोगों में प्रभाव, धन, स्त्री सुख आदि का लाभ होता है। दशम में गुरू के गोचर काल में स्थान नष्ट होता है, धन हानि, अकल्याण होता है। एकादश में गुरू के गोचर काल में सब शुभ कार्य होते हैं। बारहवें में गुरू के गोचर काल में यात्रा में बाधाएं आती है।

शुक्र : जन्म राशि से शुक्र के गोचर काल में के समय श्रृंगार, विलास, भोजन, बिस्तर, स्त्री आदि का उत्तम सुख मिलता है। दूसरे स्थान शुक्र के गोचर काल में स्त्री, पुत्र, धन, धान्य, राजमान्यता, परिवार, आदि का सुख मिलता है, हितकारी कार्य होते हैं। तीसरे स्थान में शुक्र के गोचर काल में धन, मान, पुत्र, वस्त्र, शत्रुनाश आदि का लाभ होता है। चतुर्थ में शुक्र के गोचर काल में अच्छे मित्र मिलते हैं, शक्ति बढ़ती है। पंचम में शुक्र के गोचर काल में संतोष मिलता है, संबंधियों से मुलाकातें होती हैं, पुत्र धन और मित्रों की मदद की प्राप्ति होती है। किंतु शत्रुओं का कष्ट कम नहीं होता। षष्ठ में शुक्र के गोचर काल में रोग, संताप, पराभव होते हैं। सप्तम में शुक्र के गोचर काल में स्त्री के विषय में अशुभ फल मिलता है। अष्टम में शुक्र के गोचर काल में वस्त्र व घर का लाभ होता है, संपन्न स्त्री का लाभ होता है। नवम में शुक्र के गोचर काल में धर्म कार्यों का लाभ, स्त्री सुख, धन तथा वस्त्रों का लाभ प्राप्त होता है। दशम में शुक्र के गोचर काल में अपमान, झगड़े, लोगों द्वारा तीखी बातें सुनना आदि कष्ट होता है। एकादश में शुक्र के गोचर काल में मित्र मिलते हैं, धन मिलता है, अन्न दान करते हैं। द्वादश में शुक्र के गोचर काल में धन व वस्त्रों का लाभ होता है किंतु यदि शुक्र स्तंभित हो तो ये शुभ फल नहीं मिलते।

शनि : जन्म राशि से शनि का गोचर विष, आग, स्वजनों का वियोग, बंधन आदि कष्ट देता है, यह मृत्यु भी करा सकता है। विदेश जाना पड़ता है, मित्रों की सलाह से लड़कों से शत्रुता होती है, धन नष्ट होकर भटकना या भीख मांगना पड़ता हैं दूसरे स्थान में शनि का गोचर काल में सुख व शरीर की शक्ति नष्ट होती है अपने स्वाभाविक गुणों के बल पर धन मिला भी तो वह टिक नहीं पाता। तीसरे स्थान में शनि का गोचर काल में धन मिलता है, नौकर–चाकर रहने से आराम मिलता है, घर तथा संपत्ति मिलती है, सुख व आरोग्य मिलता है, स्वयं डरपोक हो तो भी अपने वीर मित्रों से शत्रुओं को दंड देता है। चतुर्थ में शनि का गोचर काल में मित्र, धन व पत्नी का वियोग होता है। पंचम में शनि का गोचर काल में धन व पुत्र का वियोग होकर कष्ट होता हैं। षष्ठ में शनि का गोचर काल में शत्रु व रोग नष्ट होते हैं, स्त्री सुख मिलता है। सप्तम में शनि का गोचर काल में व्यर्थ भटकना पड़ता है। अष्टम में शनि का गोचर काल मे स्त्री व पुत्रों का वियोग होता है, दीनता प्राप्त होती है। नवम में शनि का गोचर काल में शत्रुता बंधन, हृदय रोग से कष्ट होता है, दीनता प्राप्त होती है। कोई भी व्यवस्थित कार्य नहीं हो सकता। दशम मे शनि का गोचर काल में अच्छे कार्य होते हैं, किंतु धन कीर्ति व ज्ञान की हानि होती है। एकादश में शनि का गोचर काल में बहुत स्त्री व धन का लाभ होता है। द्वादश में शनि का गोचर काल में बहुत प्रकार से शोक होता है।

राहु : जन्मराशि में भ्रमण करने वाला राहु स्वास्थ्य बिगाड़ता, दूसरे स्थान में धनहानि, तीसरे में सुख, चौथे में दुःख, पांचवें में धनहानि, छठे में सुख, सातवें में नुकसान, आठवें में मृत्यु, या मृत्यु तुल्य कष्ट, नौवें में हानि, दसवें में लाभ, ग्यारहवें में भाग्योदय तथा बारहवें में खर्च जैसी फल देता है। विशेष फल प्राप्ति का समय रवि और मंगल पहले द्रेष्काण अर्थात् 00 से 100 के बीच में अपना फल विशेष रूप से देते हैं, गुरू और शुक्र दूसरे द्रेष्काण अर्थात् 100 से 200 के मध्य में अपना फल देते हैं, चंद्र और शनि अंतिम द्रेष्काण अर्थात् 200 से 300 तक में अपना विशेष फल देते हैं, बुध और राहु का फल राशि के सभी अंशों में अपना फल देते हैं।

अभ्यास प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. सूर्य के शुभ गोचर स्थान हैं।
   (अ) 3, 6, 10, 11 (ब) 2, 4, 5, 6 (स) 1, 8, 10, 11 (द) 3, 6, 9, 12
2. बुध के शुभ स्थानों का वेध किस ग्रह से नहीं माना जाता है।
   (अ) गुरू (ब) शनि (स) शुक्र (द) चन्द्र
3. शुक्र के शुभ गोचर वेध स्थान है।
   (अ) 1, 3, 5, 6, 7, 8, 10, 11
   (ब) 3, 4, 8, 10, 11
   (स) 2, 3, 4, 6, 8, 10, 11
   (द) इनमें से कोई नहीं
4. मंगल के अंग विभाग के अनुसार 18, 19, 20, 21 वां नक्षत्र का अंग है–
   (अ) मुख (ब) सिर(स) चेहरा (द) छाती

4.4 वेध विचार

जब कोई ग्रह शुभ स्थान से गोचर कर रहा होता है, और उसी समय कोई अन्य ग्रह वेध स्थान में गोचर कर रहा हो तो ग्रह के शुभ फल स्थगित होकर अशुभ फलों में परिवर्तित हो जाते हैं। ग्रहों के इस व्यवहार को ग्रहों का वेध कहते हैं।

ग्रह का गोचर किन–किन स्थानों पर शुभ होता है एवं किन–किन स्थानों पर अशुभ होता है। इसको जानने के लिए हम निम्नलिखित सहायता लेते हैं जिसमें जन्म कुंडली के चंद्र से ग्रहों के शुभ गोचर स्थान एवं वेध स्थानों की जानकारी दी गयी है। इनके आधार पर हम यह निर्णय कर सकते हैं कि कब कब ग्रहों का गोचर शुभ होगा और कब कब ग्रहों का गोचर अशुभ होगा। गोचर में चन्द्रमा से शुभ स्थान तथा वेध गोचर ग्रहों को दूसरे ग्रहों का गोचर वंध के कारण निष्फल बना देता है ग्रहों को ..... कब और कहां लगता है इसका विवरण इस प्रकार है :

सूर्य

शुभ गोचर स्थान – 3, 6, 10, 11

..... स्थान – 9, 12, 4, 5

अर्थात् सूर्य हेतु तृतीय भाव शुभ माना गया है, परन्तु नवम भाव में कोई भी ग्रह होने से (शनि के अतिरिक्त, क्योंकि शनि, सूर्य का पुत्र है, अतः पिता–पुत्र का वेध नहीं माना जाता) सूर्य का वेध होगा, फलस्वरूप सूर्य अपना शुभत्व खो बैठेगा।

इसी प्रकार सूर्य छठे भाव में शुभ है, पर बारहवें भाव में कोई ग्रह होगा तो शुभता खो बैठेगा। इसी प्रकार सूर्य दशम भाव में हो पर अन्य कोई एक या एकाधिक ग्रह चौथे भाव में हो, या सूर्य एकादश भाव में हो, और अन्य कोई ग्रह पाँचवे भाव में हो तो सूर्य का शुभत्व क्षीण हो जायेगा। इसी प्रकार अन्य ग्रहों के भी शुभ स्थान एवं वेध स्थान नीचे स्पष्ट कर रहे हैं।

चंद्र : 1, 3, 6, 7, 10, 11 स्थानों में शुभ फल देता है किंतु 2, 4, 5, 8, 9, 12 स्थानों में अन्य ग्रह हो तो उनके वेध से चंद्र निष्फल होगा। केवल बुध का वेध यहां नहीं माना जाता क्योंकि बुध चंद्र का पुत्र है।

मंगल : 3, 6, 11 स्थानों में शुभ फल देता है किंतु उसी समय 5, 9, 12 स्थानों में अन्य ग्रह हो तो उनके वेध से मंगल निष्फल होता है।

बुध : 2, 4, 6, 8, 10, 11 स्थानों में भ्रमण करते समय शुभ फल देता है किंतु 1, 3, 5, 8, 9, 12 स्थानों में अन्य ग्रह उसी समय हों तो उनके वेध से बुध निष्फल होता है। चंद्र का वेध बुध को नहीं माना जाता।

गुरू : 2, 5, 7, 9, 11 स्थानों में भ्रमण करते समय शुभ फल देता है। वेध से 3, 4, 8, 10, 12 स्थानों के ग्रह निष्फल होते हैं। (तात्पर्य यह प्रतीत होता है कि गुरू को अन्य ग्रहों के वेध नहीं लगते)

शुक्र : 1 से 5 व 8, 9, 11, 12 स्थानोंमें भ्रमण करते समय शुभ फल देता है। किंतु 1, 3, 5, 6, 7, 8, 10, 11 स्थानों में उसी समय अन्य ग्रह हों तो उनके वेध से शुक्र निष्फल होता है।

राहु–केतु के वेध रवि के समान होते हैं।

कोई ग्रह जब चंद्रमा से शुभ स्थान में गोचर करता है तो शुभ फलों की प्राप्ति होती है। परन्तु यदि उसी समय जब कोई अन्य ग्रह वेध स्थान से गोचर कर रहा होता है तो ग्रह का शुभ फल अशुभ में परिवर्तित हो जाता है और तब तक शुभ फल की प्राप्ति नहीं होती जब तक कि वेध स्थान से ग्रह हट न जाय।

लेकिन उसी समय यह देखना भी आवश्यक है कि ग्रह का गोचर चंद्रमा से शुभ स्थान में है या नहीं। यदि शुभ स्थान से ग्रह का गोचर हट जाता है तथा वेध स्थान से भी ग्रह हट जाता है तो ग्रह का शुभ स्थान पर से गोचर करने का फल नहीं मिल पाता। इसके विपरीत यदि ग्रह वेध स्थान से गोचर करता है तो अशुभ फल की प्राप्ति होती है। यदि इसी समय कोई अन्य ग्रह शुभ स्थान में गोचर करता है तो ग्रह के अशुभ फल

स्थगित हो जाते हैं। इस प्रकार ग्रहों के शुभ फलों में अवरोध उत्पन्न होने के कारण ग्रहों के शुभ फल स्थगित होने के प्रकिया को ग्रहों का वेध कहते हैं और ग्रहों का वेध स्थान में गोचर करने के कारण अशुभ फलों की प्राप्ति में स्थगन होना विपरीत वेध कहलाता है इसे वाम वेध भी कहते हैं।

4.5 गोचर में नक्षत्र के विचार से ग्रहों के अंग और फल

जन्म नक्षत्र से गिनने पर 27 नक्षत्र जातक के अंग विभाजन में ग्रहों के अनुसार बटे हैं वे नीचे बताये गये हैं। जन्म नक्षत्र को 1 गिन कर आगे बताये क्रमानुसार अंग की गणना करना। वर्तमान नक्षत्र जिस अंग में पड़े फल विचारना।

क्रमांक	जन्म नक्षत्र से नक्षत्रों का क्रम	अंग विभाजन	फल
1	पहिला नक्षत्र	मुख	हानि
2	2, 3, 4 और 5 वां नक्षत्र	सिर	धन वृद्धि
3	6, 7, 8 और 19 वां नक्षत्र	छाती	सफलता
4	10, 11, 12 और 13 वां नक्षत्र	दाहिना हाथ	संपत्ति लाभ
5	14, 15, 16, 17, 18, 19 वां नक्षत्र	दोनों पैर	धन हानि
6	20, 21, 22, 23 वां नक्षत्र	बायां हाथ	शारीरिक बीमारी
7	24, 25 वां नक्षत्र	दोनों आंख	लाभ
8	26, और 27 वां नक्षत्र	जननेन्द्रिय	जीवन का भय

4.5.1 चन्द्र का अंग विभाग के अनुसार गोचर फल

क्रमांक	जन्म नक्षत्र से वर्तमान नक्षत्र तक	अंग विभाजन	फल
1	पहिला और दूसरा नक्षत्र	चेहरा	अतिशय भय
2	3, 4, 5, 6 वां नक्षत्र	सिर	रक्षा
3	7, 8 वां नक्षत्र	पीठ	शत्रु दमन
4	9, 10 वां नक्षत्र	दोनों आंख	सम्पत्ति लाभ
5	11, 12, 13, 14, 15 वां नक्षत्र	छाती	मानसिक सुख
6	16, 17, 18 वां नक्षत्र	बायां हाथ	क्लह
7	19, 20, 21, 22, 23, 24 वां नक्षत्र	दोनों पैर	विदेश यात्रा
8	25, 26, 27 वां नक्षत्र	दाहिना हाथ	सम्पत्ति लाभ

4.5.2 मंगल का अंगविभाग के अनुसार गोचर फल

क्रमांक	जन्म नक्षत्र से वर्तमान नक्षत्र तक संख्या	अंग विभाजन	फल
1	पहिला दूसरा नक्षत्र	मुख	जीवन को भय

2	3, 4, 5, 6, 7, 8 वां नक्षत्र	दोनों पैर	कलह
3	9, 10, 11 वां नक्षत्र	छाती	सफलता
4	12, 13, 14, 15 वां नक्षत्र	बायां हाथ	ग्रीबी
5	16, 17 वां नक्षत्र	सिर	लाभ
6	18, 19, 20, 21 वां नक्षत्र	चेहरा	अतिभय
7	22, 23, 24, 25 वां नक्षत्र	दाहिना हाथ	सुख
8	26, 27 वां नक्षत्र	दोनों आंख	विदेश यात्रा

4.5.3 बुध, गुरू, शुक्र के अंग विभाग के अनुसार गोचर फल

क्रमांक	जन्म नक्षत्र ये वर्तमान नक्षत्र तक संख्या	अंग विभाजन	फल
1	पहिला दूसरा और तीसरा नक्षत्र	सिर	दुःख या शोक
2	4, 5, 6 वां नक्षत्र	मुख	लाभ
3	7, 8, 9, 10, 11, 12 वां नक्षत्र	दोनों हाथ	कुछ अनहोनी हो
4	13, 14, 15, 16, 17 वां नक्षत्र	पेट	द्रव्य का आना
5	18, 19 वां नक्षत्र	जननेन्द्रिय	ळानि
6	20, 21, 22, 23, 24, 25, 26, 27 वां नक्षत्र	दोनों पैर	कीर्ति मान

4.5.4 शनि राहु और केतु का अंग विभाग फल

क्रमांक	जन्म नक्षत्र से वर्तमान नक्षत्र तक संख्या	अंग विभाजन	फल
1	पहिला नक्षत्र	मुख	दुःख
2	2, 3, 4, 5 वां नक्षत्र	दाहिना हाथ	सुख
3	6, 7, 8 वां नक्षत्र	दाहिना पैर	सुख
4	9, 10, 11 वां नक्षत्र	बायां पैर	हानि
5	12, 13, 14, 15 वां नक्षत्र	बायां हाथ	लाभ
6	16, 17, 18, 19, 20 वां नक्षत्र	पेट (कुक्षि)	स्त्री भोग
7	21, 22, 23 वां नक्षत्र	सिर	सुख
8	24, 25 वां नक्षत्र	दोनों नेत्र	सुख
9	26, 27 वां नक्षत्र	पीठ	जीवन का भय

4.6 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जान लिया कि तनुस्थान व दशम स्थान में ग्रहों के गोचर विशेष महत्व रखते हैं। कुंडली में सूर्य और चंद्र जिस स्थान में हों वहां ग्रहों के भ्रमण भी उन स्थानों के अनुसार फल देते हैं। लग्न और दशम के बाद चतुर्थ और सप्तम स्थानों का महत्व है अन्य स्थानों में चंद्र, बुध, शुक्र व मंगल के भ्रमण का कोई विशेष परिणाम देखने में नहीं आता। कुंडली के रिक्त स्थान से ग्रहों के भ्रमण की अपेक्षा जिस स्थान मे कोई ग्रह है वहां से गोचर ग्रहों के भ्रमण के परिणाम अधिक दिखते हैं। बुध, शुक्र व सूर्य हमेशा निश्चित क्रम से तथा काफल जल्दी कुंडली के सभी स्थानों से भ्रमण कर लेते हैं। अतः केवल गोचर पद्धति से इनके फलों का विशेष अनुभव नहीं आता। बुध व शुक्र का गोचर जिस स्थान में हो वहां के फल कुछ प्राप्त हैं। जब कोई ग्रह शुभ स्थान से गोचर कर रहा होता है, और उसी समय कोई अन्य ग्रह वेध स्थान में गोचर कर रहा हो तो ग्रह के शुभ फल स्थगित होकर अशुभ फलों में परिवर्तित हो जाते हैं। ग्रहों के इस व्यवहार को ग्रहों का वेध कहते हैं।

4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. अ
2. द
3. अ
4. स

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. फलदीपिका – गोपेश कुमार
2. गोचर विचार – अरूण बंसल
3. सचित्र ज्योतिष – बी0एल ठक्कर

4.9 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

1. गोचर के वेध से आप क्या समझते हैं? सभी ग्रहों के शुभ गोचर व वेध को स्पष्ट करें।
2. गोचरीय नक्षत्रों का फल का विस्तृत वर्णन कीजिये।